परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि-परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

❋ जन्मदिवस 19-03-1971 ❋ मुनिदीक्षा-11-05-1989 ❋ आचार्यपद- 20-06-2004

पट्टाधीशपद- 24-12-2010 (20-06-2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:-

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी-जुलाई 2004) (अक्षयज्योति-अक्तूबर 2004)

पउम चरिउ

भाग ०४

ग्रन्थकर्त्ता
महाकवि स्वयम्भूदेव

अनुवाद
डॉक्टर देवेन्द्रकुमार जैन

सम्पादक
डॉक्टर एच. सी. भायाणी

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

महाकवि स्वयम्भूदेव विरचित

पउमचरिउ

(पद्मचरित)

भाग ४

मूल-सम्पादक

डॉ. एच.सी. भायाणी

अनुवाद

डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, इन्दौर

भारतीय ज्ञानपीठ

विषय-सूची

संतावनवीं सन्धि २-१७

रामकी सेनाको हंसद्वीपमें देखकर, निशाचर सेनामें खलबली। बिभीषणका अपने भाई रावणको समझाना एवं रावण द्वारा बिभीषणका अपमान। इन्द्रजीत द्वारा रावणका समर्थन, और सन्धि का प्रस्ताव, बिभीषण और रावणमें भिड़न्त, मन्त्रिवृद्धों द्वारा बीच-बचाव, बिभीषणका रावणपक्षसे कूच, रामके अनुचरों द्वारा निशाचरोंके आकस्मिक आक्रमणकी निन्दा। बिभीषणके दूतका रामसे मिलना, दूतके प्रस्तावकी रामकी कूटनीतिज्ञ परिषद्में प्रतिक्रिया, बिभीषणकी रामसे भेंट और सन्धि।

अट्ठावनवीं सन्धि १७-३५

राम द्वारा दूत भेजनेका प्रस्ताव, दूतके गुणों दोषोंकी चर्चा, प्रस्तुत विभिन्न नामोंमें-से अंगदका दूत पदपर चुना जाना, प्रमुख पात्रों द्वारा रावणके लिए सन्देश (राम, लक्ष्मण, भामण्डल, हनुमान, सुग्रीव आदि)। अंगदका रावणके दरबारमें प्रवेश, और सीता वापिस कर देनेकी शर्तपर, सन्धिका प्रस्ताव, रावण द्वारा दूतका उपहास, इन्द्रजीतका उत्तेजनात्मक प्रस्ताव, दूतका आक्रोश और वापसी। राम और लक्ष्मणका क्रुद्ध होना।

उनसठवीं सन्धि — ३६-४९

निशाचरराज रावणकी युद्धकी तैयारी, विभिन्न योद्धाओंकी तैयारी, उनकी पत्नियोंकी प्रतिक्रिया, योद्धाओं और उनकी पत्नियोंके संवाद, दूसरे वीर सामन्तोंका युद्धके लिए प्रस्थान। युद्धके प्रांगणमें दोनों सेनाओंका जमाव।

साठवीं सन्धि — ५०-६३

राम द्वारा युद्धके लिए कूच। रामपक्षके सभी योद्धाओंका परिचय। उनकी तैयारीका चित्रण, रावण पक्षके योद्धाओंके नाम। सैन्यव्यूह रचना। सेनाका प्रस्थान। कई मल्लयुद्ध हो रहे थे। युद्धका श्रीगणेश। युद्धको लेकर दो देवबालाओं-की हार्दिक प्रतिक्रिया।

इकसठवीं सन्धि — ६४-८९

सैनिक अभियानका वर्णन। दोनों सेनाओंमें भिड़न्त, आपसी द्वन्द्व और वीरतापूर्वक युद्ध लड़ना। रामकी सेनाकी प्रथम पराजय, देवबालाओं द्वारा टीका-टिप्पणी, नल और नील एवं हस्त-प्रहस्तमें द्वन्द्व युद्ध, दूसरे प्रमुख नेताओंमें द्वन्द्व युद्ध, हस्त-प्रहस्तकी मृत्यु।

बासठवीं सन्धि — ८०-९७

राम द्वारा विजेता नल और नीलका स्वागत, युद्ध-भूमिमें रावणके लिए अपशकुन, रावणका गुप्तवेषमें नगरमें भ्रमण, प्रमुख योद्धाओंकी अपनी पत्नियोंसे बात-चीत। योद्धाओंकी स्वामिभक्ति देखकर रावणकी प्रसन्नता और उत्साह।

त्रेसठवीं सन्धि 97-113

सूर्योदय होते ही दोनों सेनाओंकी तैयारी। रावणकी सेना द्वारा प्रस्थान, सेनाओंमें टक्कर, प्रमुख योद्धाओंमें द्वन्द्वयुद्ध, आकाशसे देवताओं द्वारा युद्धका अवलोकन, रामके प्रमुख योद्धाओंकी हार, संध्या समय युद्धकी परिसमाप्ति, रामका चिन्तातुर होना, सैनिक-सामन्तों द्वारा ढाढस देना।

चौसठवीं सन्धि 113-133

सवेरे दोनों सेनाओंमें भिड़न्त, शर सन्धानकी व्याकरणसे श्लेषमें तुलना, रामरूपी सिंहका वक्षोंदरपर हमला, तुमुल-युद्ध, दूसरे प्रमुख योद्धाओंमें द्वन्द्वयुद्ध, सुग्रीव और हनुमानका युद्धमें प्रवेश, हनुमानकी गहरी और तूफ़ानी भिड़न्त। मालि द्वारा उसका सामना, तुमुल युद्ध, हनुमान-का घिर जाना।

पैंसठवीं सन्धि 133-147

हनुमानके उत्साह और तेजका वर्णन, उसके द्वारा व्यापक मारकाट, हनुमानकी मुक्ति। रामके सामन्तोंका कुम्भकर्णपर घेरा डालना, कुम्भकर्ण द्वारा मायावी अस्त्रों द्वारा उसका सामना, इन्द्रजीतका युद्धमें प्रवेश, सुग्रीवका पकड़ा जाना। मेघवाहन और भामण्डलमें भिड़न्त, भामण्डलका घिर जाना, राम द्वारा गारुड़ी विद्याका स्मरण। विद्याका साज-सामानके साथ आना। नागपाशका छिन्न-भिन्न होना, भामण्डल और सुग्रीवकी अपनी सेनामें वापसी। जय-जय शब्दसे उनका स्वागत।

छियासठवीं सन्धि १४८-१६७

सूर्योदय होनेपर पुनः युद्ध, दोनों सेनाओंका वर्णन, सैनिकोंसे आहत धूलका वर्णन, सैनिकोंके घायल होनेका वर्णन। नल और नील द्वारा युद्धके मैदानमें आकर अपने पक्षकी स्थिति सँभालना। रावणका युद्धमें प्रवेश, विभीषणसे उसकी दो-दो बातें। विभीषणका रावणको खरी-खोटी सुनाना, दोनों भाइयोंमें संघर्ष, विविध शस्त्रोंका प्रयोग, विद्याओंका प्रयोग, रावण द्वारा शक्तिका प्रयोग, लक्ष्मणका शक्तिसे आहत होना, रामकी रावणसे भिड़न्त, अप्सराएँ यह देखकर प्रसन्न थीं। संध्या समय युद्धबन्दीकी घोषणा, राम द्वारा लक्ष्मणके आहत होनेपर विलाप।

सरसठवीं सन्धि १६८-१८५

सेनाकी दशा देखकर राम द्वारा विलाप, संध्यारूपी निशाचरीका वर्णन, राम द्वारा लक्ष्मणका गुणानुवाद, अभागिनी सीतादेवीको लक्ष्मणके आहत होनेकी खबर लगना, एक निशाचर द्वारा सीताको पुनः रावणके पक्षमें फुसलाना। रावण द्वारा सांध्यकालीन युद्ध समाप्तिपर अपने सैनिकोंकी खोज-खबर, मृत सामन्तोंके प्रति उसकी समवेदना और पश्चात्ताप। राम द्वारा अपने सैनिकोंको समझाना, राम द्वारा शत्रुसंहारकी प्रतिज्ञा, चक्रव्यूहकी रचना। आहत लक्ष्मणकी चर्चा।

अड़सठवीं सन्धि १८६-२०१

लक्ष्मणके वियोगमें करुण विलाप, राजा प्रतिचन्द्रका आगमन, उसके द्वारा विशल्याका परिचय, और यह संकेत कि उसके

स्नान जलसे लक्ष्मण शक्तिके प्रभावसे मुक्त हो सकता है। विशल्याका आख्यान, उसके पूर्व जन्मका वृत्तान्त, भरत द्वारा महामुनिसे पूछना, 'अनंगसरा' (जो आगामी जन्म विशल्या बनी) का वर्णन।

उनहत्तरवीं सन्धि २८२-२२९

राम द्वारा विशल्याको लानेके लिए, सामन्तोंकी नियुक्ति, विभिन्न सामन्तों द्वारा प्रस्ताव। एक पूरे दलका प्रस्थान, उनकी यात्राका वर्णन, लवण समुद्रका वर्णन, पर्वतका वर्णन, नदीका वर्णन, (महानदी, नर्मदा) विन्ध्याचलमें प्रवेश, उज्जैन पारियात्र होते हुए मालव जनपदमें प्रवेश, मालव जनपदका वर्णन, अयोध्यानगरीमें प्रवेश, उसका वर्णन, भरत से दलके नेता भामण्डलकी भेंट, लक्ष्मणके शक्तिसे आहत होनेपर, भरतकी प्रतिक्रिया, भरतका विलाप, अपराजिताका क्रन्दन, विशल्याके पितासे निवेदन, विशल्याका वर्णन आगन्तुक दल द्वारा, विशल्याका का युद्ध शिविरमें आना, उसके तेजसे शक्तिका लक्ष्मणके शरीरसे निकलकर भागना, लक्ष्मणका विशल्याके सुगन्धित जलसे लेप। रामकी सेनामें नवीन हल-चल, सचेतन होनेपर लक्ष्मणका विशल्याको देखना, उसके रूपका चित्रण, विवाह।

सत्तरवीं सन्धि २३०-२४७

दूतके रूपकर्म प्रभावका वर्णन, लक्ष्मणके जीवित होनेकी खबर पाकर रावणका आग-बबूला होना, मन्दोदरीका अपने पतिको समझाना, मन्त्रियों द्वारा मन्दोदरीकी प्रशंसा, रावण पर इसकी उलटी प्रतिक्रिया, रावण द्वारा रामके सम्मुख दूतके

माध्यमसे सन्धिका प्रस्ताव, राम द्वारा रावणके प्रस्तावको ठुकरा देना, दूत द्वारा रामकी सेनाका वर्णन, दूतकी वापसी, लक्ष्मणकी उसे कड़ी फटकार, दर्पोक्तियाँ, वसन्तका आगमन। नन्दीश्वरकी पूजाका समारोह। लंका नगरीमें धार्मिक समारोह।

इकहत्तरवीं सन्धि

२५७-२७३

रावणका शान्तिनाथ जिन मन्दिरमें प्रवेश, नन्दीश्वर पर्वतमें प्रकृतिका सौन्दर्य, विविध क्रीड़ाओंका वर्णन, घरकी स्वच्छता और सफ़ाई, शानदार जिनपूजा, शान्तिनाथ जिनालयका वर्णन, रावण द्वारा बहुरूपिणी विद्याकी आराधना के पूर्व जिनेन्द्रका अभिषेक; शान्तिनाथ प्रभुकी स्तुति, स्तोत्रपाठ। बहुरूपिणी विद्याकी आराधना। राम-सुग्रीव और हनुमान द्वारा उसमें विघ्न डालना, रावणकी अडिगता।

बहत्तरवीं सन्धि

२७३-२९५

अंग, अंगदका लंकामें प्रवेश, लंकाका वर्णन, रावणके महल-का वर्णन, शान्तिनाथ मन्दिरमें उनका प्रवेश, रावणके अन्तःपुरमें प्रवेश, जिन भगवान्की वन्दना, रावणको बाधाएँ पहुँचाना, रावणके अन्तःपुरका मायावी प्रदर्शन, रावणकी अडिगता और बहुरूपिणी विद्याकी सिद्धि। रावण द्वारा, शान्तिनाथ भगवान्की स्तुति। बहुरूपिणी विद्याके साथ उस-का बाहर निकलना। अन्तःपुरकी दीनदशा देखकर रावणका क्रोध। समारोहके साथ रावणका वहाँसे प्रस्थान। अन्तःपुर-की यात्राका वर्णन। रावणका अपने घरमें प्रवेश।

तिहत्तरवीं सन्धि

२९६-३१३

रावणकी दिनचर्या, तेल मालिश, उबटन स्नान, जिन भगवान्‌के दर्शन, स्तुति वन्दना। आकर भोजन, विश्राम, त्रिजगभूषणपर बैठकर रावणका सीतादेवीके निकट जाना। बहुरूपिणी विद्याका प्रदर्शन। महासती सीतादेवीकी आशंका, रावण द्वारा प्रलोभन, सीता द्वारा फटकार, रावणका निराश होकर, अपने अन्तःपुरमें जाना।

चौहत्तरवीं सन्धि

३१४-३४१

सूर्योदय--प्रभातका वर्णन, रावणका दरबारमें आकर बैठना, उसे अपने पुत्र और भाईके अपमानकी याद आना। रावणका अपनी आयुधशालामें प्रवेश, तरह-तरहके अपशकुन होना। मन्त्रिवृद्धोंके अनुरोधपर मन्दोदरी दुबारा रावणको समझाती है। रावणकी दर्पोक्ति, मन्दोदरी द्वारा रावणकी कड़ी आलोचना, युद्धकी तैयारी, युद्धके लिए प्रस्थान। युद्ध संनद्ध रावणका वर्णन। लक्ष्मणका अपना धनुष चढ़ाना, विभिन्न सामन्तों द्वारा अपने-अपने शस्त्र सँभालना, सेनाओंका व्यूह, विभिन्न दलों, टुकड़ियों और योद्धाओंमें भिड़न्त। गजघटाका वर्णन। उभय सेनाओंमें व्यापक क्षति, युद्धकी धूलका फैलना, योद्धाका गजघटासे लगना, युद्धका वर्णन। एक दूसरेपर योद्धाओंका प्रहार।

[४]

पउमचरिउ

•

कइराय-सयम्भुएव-किउ

पउमचरिउ

चउत्थं जुज्झकण्डं

[५७. सत्तवण्णासमो संधि]

हंसदीवें थिएँ राम-बलें खोहु जाउ णिसियर-सङ्घायहों ।
सन्ति मणोहर-सिहरु जिह णिवडिउ हियउ दसाणण-रायहों ॥

[१]

सूरहों सवडु सुणेवि रउद्दहों । खुहिय लङ्क णं वेल समुद्दहों ॥१॥
एहएँ कालें अणेयइँ जाणइ । मणोंण विसण्णु विहीसणु राणउ ॥२॥
'णं कुल-सेलु समाहउ वज्जें । पुरि णन्दन्ति णाह विणु कज्जें ॥३॥
कल्लें जि मरउ ण किउ णिवारिउ । एवहिं दूसन्धयउ णिवारिउ ॥४॥
तो वि सणेहें परिहच्छावमि । उप्पहें थियउ सुपन्थें लावमि ॥५॥
जइ कया वि उवसमइ दसाणणु । पावें छाइउ पर-महिलाणणु ॥६॥
एम वि जइ मइ ण कियउ वुत्तउ । तो रिउ-साहणें मिलमि णिरुत्तउ ॥७॥
अप्पाणु वि ण होइ संसारिउ । परिहरिएवउ पारयारिउ ॥८॥

घत्ता

सुहि जें सल्लु पडिकूलणउ पर जें सहोयरु जो अणुअत्तइ ।
ओसहु दूरुप्पण्णउ वि वाहि सरीरहों कह वि ण घत्तइ' ॥९॥

पद्मचरित

युद्ध काण्ड

सत्तावनवीं सन्धि

हंस द्वीपमें रामकी सेनाको स्थित देखकर निशाचर-समूहमें क्षोभकी लहर दौड़ गयी। रावणका हृदय पर्वत शिखरकी तरह पलभरमें दो टूक हो गया।

[१] तुरहीका भयंकर शब्द सुनकर लंका नगरी ऐसी क्षुब्ध हो उठी, मानो समुद्रकी वेला हो ! इस समय तक यह अनेक लोगोंको विदित हो गया। राजा विभीषण भी मन-ही-मन खूब दुःखी हुआ। उसे लगा, "मानो कुलपर्वत वज्र से आहत हो गया है, हँसती-खेलती लंका नगरी व्यर्थ ही नष्ट होने जा रही है, कल मैंने उसे मना किया था, परन्तु वह नहीं माना। और अब भी, उसे समझाना अत्यन्त कठिन है ? फिर भी मैं प्रेमसे उसे समझाऊँगा। वह खोटे रास्ते पर है। सीधे रास्तेपर लाऊँगा। शायद रावण किसी तरह शान्त हो जाये। परस्त्रीचोर वह पापसे भरा हुआ है। इस समय भी यदि वह मेरा कहा नहीं करता तो यह निश्चित है कि मैं शत्रुसेना में मिल जाऊँगा ! क्योंकि अपहरण की हुई भी, दूसरेकी स्त्री संसारमें अपनी नहीं होती। सज्जन भी यदि प्रतिकूल चलता है तो वह काँटा है, शत्रु भी यदि अनुकूल चलता है तो वह सगा भाई है ! क्योंकि दूर उत्पन्न भी दवाई शरीरसे रोगको बाहर निकाल फेंकती है ! ॥१-९॥

[२]

जो परतिय-परदव्वाहिंसणु । मणेँ परिचिन्तेँवि एम विहीसणु ॥१॥
अहिमुहु वलिउ दसाणण-रायहोँ । णं गुण-णिवहु दोस-सङ्घायहोँ ॥२॥
'भो भो भू-भूसण मइ-भञ्जण । खलहु मि खल सज्जणहु मि सज्जण ॥३॥
रावण किण्ण गणहि महु वयणइँ । किण्ण णियहि णन्दन्तइँ सयणइँ ॥४॥
किं स-वंहु णिय-णयरु ण इच्छहि । किं वज्जासणि सिरेँण पडिच्छहि ॥५॥
किं देयावहि सेण्णु दिसा-बलि । किं उरेँ धरहि जलण-जालावलि ॥६॥
किं आरोडहि राहव-केसरि । किं जाणन्तु खाहि विस-मञ्जरि ॥७॥
किं गिरि सभु अङ्कुसेण खण्डहि । किं चारित्तु सीलु वउ छण्डहि ॥८॥
किं विहडन्तउ कज्जु ण सम्भहि । तइयएँ णरएँ जाउ किं वन्धहि ॥९॥
एक्कु अजसु अण्णेक्कु अमङ्गलु । जाणइ देन्तहँ पर गुणु केवलु' ॥१०॥

घत्ता

भणइ दसाणणु 'भाइ सुणि जाणमि पेक्खमि णरयहोँ सङ्कमि ।
णवर सरीरेँ वसन्ताइँ पञ्चिन्दियइँ जिणेँवि ण सक्कमि' ॥११॥

[३]

सो जण-मण-णयणाहिरावणो । पर-णरवर-हरिणाहरावणो ॥१॥
दुद्धर-धरणिधर-धरावणो । मह-भड-कडमद्दण-करावणो ॥२॥
दुज्जण-जण-मण-जज्जरावणो । करिवर-कुम्भयल-कप्परावणो ॥३॥

[२] विभीषण, जो परस्त्री और परधनका अपहरण नहीं करता, मनमें यह सोचकर, दशाननराज के सामने इस प्रकार मुड़ा मानो दोषसमूहके सामने गुणसमूह मुड़ा हो ! उसने कहा, "हे धरतीके आभूषण और योद्धाओंके संहारक रावण, तुम दुष्टोंमें दुष्ट हो, और सज्जनोंमें सज्जन। रावण, तुम मेरे कथनपर ध्यान क्यों नहीं देते, आनन्द करते हुए अपने स्वजनोंको क्यों नहीं देखते ? घरसहित अपने नगरकी क्या तुम्हें अब इच्छा नहीं है ? क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारे ऊपर वज्र आकर गिरे ? क्यों तुम अपनी सेनाकी बलि, चारों दिशाओंमें बिखेरना चाहते हो ? ईर्ष्याकी आग तुम अपने हृदयमें क्यों रखना चाहते हो ? रामरूपी सिंहको तुम क्यों छेड़ते हो ? विषकी बेल जान-बूझ कर तुम क्यों खाना चाहते हो ? पहाड़के समान अपने महान् बड़प्पनको खण्ड-खण्ड क्यों करना चाहते हो ? अपने चरित्र, शील और व्रतको क्यों छोड़ना चाहते हो ? अपने बिगड़ते हुए कामको क्यों नहीं बना लेते, तीसरे नरककी आयु क्यों बाँध रहे हो ? एक तो इसमें अपकीर्ति है, दूसरे अनेक अमंगल भी हैं ! इस लिए तुम्हारे लिए एक ही लाभदायक बात है, और वह यह कि तुम जानकीको अभी भी वापस कर दो।" यह सुनकर दशाननने कहा, "हे भाई, सुन मैं जानता हूँ, देख रहा हूँ, और मुझे नरककी आशंका भी है। फिर भी शरीरमें बसने वाली पाँचों इन्द्रियोंको जीत सकना मेरे लिए सम्भव नहीं" ॥१-११॥

[३] जो जनोंके मन और नेत्रोंके लिए अत्यन्त प्रिय था, शत्रु राजाओंके लिए इन्द्रके समान था, जो दुर्द्धर भूधरों (राजा और पहाड़) को उठा सकता था, सैन्यघटामें धकापेल मचा सकता था, दुर्जन लोगोंके मनको दहला देता, बड़े-बड़े

धणय-पुरन्दर-थरहरावणो । सरणाहय-भय-परिहरावणो ॥४॥
दाणविन्द-दुद्दम-डरावणो । अमर-मणोहर-वहुअ-रावणो ॥५॥
दाणें महाहवणे तुरावणो । णिसुणिउ जं जम्पन्तु रावणो ॥६॥

घत्ता

भणइ विहीसणु कुइय-मणु वयणु णिएवि दसाणण-केरउ ।
'मरण-कालें आसण्णें थिएँ सव्वहों होइ सिसु विवरेरउ ॥७॥

[४]

पुणु वि गरुड संताउ विहीसणें । काइँ णिवारिउ ण किउ विहीसणें ॥१॥
काइँ णरिन्दऽप्पाणउँ सोसहि । पुण णिहण पइट्टु विसोसहि ॥२॥
जणय-विदेहि-धीय पइ-सारिय । पइँ सयणहुँ अविचिन्ति पइसारिय ॥३॥
एह ण सीय वणें ढिय मल्ली । सव्वहुँ हियएँ पइट्ठिय मल्ली ॥४॥
एह ण सीय सोय-संपत्ती । लङ्कहें वज्जासणि संपत्ती ॥५॥
एह ण सीय दाय णर-सीहहों । गय-गण्डत्थल-बहल-रसीहहों ॥६॥
एह ण सीय जोह जमरायहों । केवल हाणि असुउअम-रायहों ॥७॥

घत्ता

णन्दउ लङ्क स-तोरणिय अणुणहि रामु पमायहि जुज्झु ।
जाणइ सिविणा-रिद्धि जिह ण हुअ ण होइ ण होसइ तुज्झु' ॥८॥

[५]

तं सुणेवि सत्तुत्त-मद्दणो । स-पुरन्दर-विजयन्त-मद्दणो ॥१॥
रयणासव-वंसाहिणन्दणो । दहमुह-दिट्ठिविसाहि-णन्दणो ॥२॥
इन्दइ णिय-मणे विरुद्धओ । जेण हणुउ पहरेंवि रुद्धओ ॥३॥

गजवरोंके गण्डस्थल काट डालता, कुबेर और इन्द्रको थर-थर कँपा देता, शरणागतके भयको दूर करता, दुर्दम दानवेन्द्रोंको डरा देता, देवताओंकी सुन्दर स्त्रियोंके साथ रमण करता, दान और युद्धमें त्वरा मचाता उस रावणको विभीषणने यह कहते हुए सुना। तब रावणके मुखको देखकर कुपित मन विभीषण बोला, "मृत्युकाल पास आने पर सब का चित्त उलटा हो जाता है" ॥१-७॥

[४] विभीषणको फिर भी इस बातका बहुत संताप था कि भाईने उसकी बात क्यों नहीं मानी ? राजा क्यों अपनी बदनामी करा रहा है, और इस प्रकार जहरीली दवा प्रविष्ट कराना चाहता है ! जो तुमने विदेहराज जनककी कन्याका नगरमें प्रवेश कराया है, वह तुमने अपने ही लोगोंके लिए उनकी होनहारको प्रवेश दिया है। यह (अशोक) वनमें अच्छी भली सीता देवी नहीं बैठी हुई है, यह सबके हृदयमें भालेकी नोक लगी हुई है ! यह सीता देवी नहीं, वरन् शोक-संपदा है ! लंकापर तो यह गाज ही आ गिरी है ! यह सीता देवी नहीं, किसी श्रेष्ठ सिंहकी दाढ़ है, या किसी गजवरके गण्डस्थलकी सीस है ! यह सीता देवी नहीं, यमराजकी जीभ है और है तुम्हारे उद्यम एवं यशकी हानि। हे भाई, तुम रामको मना लो, युद्ध छोड़ दो। तोरणोंसे सजी लंका नगरीको फलने-फूलने दो, स्वप्नकी सम्पदाकी तरह सीता देवी न कभी तुम्हारी थी, न अब है, और न आगे कभी होगी ॥१-८॥

[५] यह सुनकर इन्द्रजीत अपने मनमें भड़क उठा। इन्द्र और वैजयन्तको चूर-चूर करने वाला, रत्नाश्रवके कुलका अभिनन्दन करने वाला और रावणकी नजरको साधने वाला ! जिसने प्रहार कर हनुमान तक को रोक लिया था। जो आगके

दुमपहो व्व आलोलि-भासुरो । हर सणें व्व कुमुओ वि भासुरो ॥४॥
केसरि व्व उद्धसिय-कन्धरो । गयवरो व्व गुणगरुअ-खं-धरो ॥५॥
'तं सिंहासणा पइँ पवज्जियं । दहमुहस्स ण कयाइ जं पियं ॥६॥

घत्ता

को तुहुँ केँ बोल्लावियउ को सो लक्खणु को किर रामु ।
अइ तहोँ अप्पिय जणय-सुय तो हउँ ण वहमि इन्दइ णामु' ॥७॥

[६]

तं णिसुणेवि सिंहासणु जम्पइ । 'णिरुवउ णिन्दिउ सीयहेँ जं पइ ॥१॥
पप्फुल्लिय-अरविन्द-पह-रणें । दुद्धर-णरवरिन्द-दप्प-हरणें ॥२॥
दुद्दम-दाणव-विन्द-पहरणें । णीसरन्त-वलहद्दहोँ पहरणें ॥३॥
अणुहरमाण-वाण-फरुसक्कहोँ । जे भञ्जन्ति मडप्फरु सक्कहोँ ॥४॥
ते रणें जाणें णिवारेंवि सक्कहोँ । तुम्हहुँ भज्जें सच्चि परिसक्कहोँ ॥५॥
जेण समत्तु सुहें सुद्दु कियन्तहोँ । मिलेंवि असेसें हिँ काइँ कियं तहोँ ॥६॥
जेण खरहोँ सिरु खुडिउ णियन्तहोँ । चउदह-सहसें हिँ काइँ कियं तहोँ ॥७॥
सो हरि सारहि जसु पयराहउ । दुज्जउ केण परज्जिउ राहउ ॥८॥

घत्ता

अण्णु वि हणुवहोँ काइँ किउ तुम्हहँ तणएँ पइट्ठउ जो वणें ।
दवणवन्तु णिय-चिन्धाइँ जिह विघडन्तु कणाविहेँ जोव्वणें' ॥९॥

समान ज्वालमालासे प्रज्वलित, हर और शनिकी भाँति क्रुद्ध होकर भी कान्तिमय। सिंहकी भाँति उसके कन्धे उठे हुए थे और पावसकी धरती की तरह, जो रोमांच (अंकुर) धारण किये था। उसने कहा—"तुमने जो कुछ भी कहा, वह रावणके लिए किसी भी तरह प्रिय नहीं हो सकता। तुम कौन हो? किसने तुमसे यह सब कहलवाया? लक्ष्मण कौन है? और राम कौन है? यदि सीता देवी उसे सौंप दी गयी, तो मैं अपना इन्द्रजीत नाम छोड़ दूँगा?॥१-७॥

[६] यह सुनकर विभीषणने कहा, "यह बहुत बुरी बात है, जो तुमने सीता देवीके बारेमें बुरा-भला कहा। यदि युद्ध हुआ तो मुझे शंका है कि तुममें इतनी शक्ति नहीं कि तुम उसका सामना कर सको। वह युद्ध, जो खिले हुए कमलोंकी भाँति चमक रहा है, जिसमें दुर्द्धर नरेशोंका घमण्ड चूर-चूर हो चुका है, जिसमें दुर्दमदानव मौतके घाट उतर रहे हैं, जो आगे बढ़ते हुए रामके हथियारोंसे आक्रान्त हैं। अनुरूप बाण और फरसों से लैस इन्द्रका भी अहं, जो चूर-चूर कर देते हैं। रामने जब शम्बूकको यमके मुखमें डाल दिया था, तब तुम सबने मिलकर भी उनका क्या कर लिया था? जिन्होंने जीते जी खरका सिर काट डाला, तब चौदह हजार होकर भी तुमने उनका क्या कर लिया था? अनेक युद्धोंका विजेता लक्ष्मण, जबतक रामका सारथि है, तबतक वह अजेय है। उसे कौन युद्धमें जीत सकता है? इसके अतिरिक्त, हनुमानने जब तुम्हारे नन्दन वनमें प्रवेश किया था, तब तुमने उसका क्या कर लिया? उसने अपने निशान उस उपवनमें वैसे ही छोड़ दिये थे जैसे कोई विदग्ध, कर्णाटक बालाके यौवनमें अपने चिह्न अंकित कर देता है॥१-९॥

[७]

तं णिसुणेंवि कुविउ दसाणणो । जो सयं सुरिन्दस्स हाणणो ॥१॥
करें समुब्भयं चन्दहासयं । विप्फुरन्तमिव चन्दहासयं ॥२॥
'मह पाडमि महि-मण्डले सिरं । मम णिन्दयस्स पर-पसंसिरं' ॥३॥
तहिं अवसरें कुइओ विहीसणो । जो जणें सुणकुइओ विहीसणो ॥४॥
लइउ खग्गु मणि-रयण-भूसिओ । दहवयणस्स जसो व्व भू-सिओ ॥५॥
वे वि पधाइय एक्कमेक्कहो । जणु जम्पइ सिय ए-क्कमे क्कहो ॥६॥

घत्ता

मच्छर भरन्त-भरन्ताहुँ स-तरु स-खग्ग विहीसण-रावण ।
णाइँ परोप्परु ओवडिय उद्ध-सोण्ड अइरावय-वारण ॥७॥

[८]

णरवइ धरिउ कलुच्छलें मन्तिहिं । करें अवराहु सहारा मं तिहिं ॥१॥
विहिँ भाइहिँ अप्पणेक्कहौँ तणयहँ । जो जीवियहो साक सउ तणयहौँ' ॥२॥
तो वि ण थक्कइ अमरिस-कुद्धउ । जो घण-जलहि-विहूसिय-कु-बुद्धउ ॥३॥
'अरें खल खुद्द पिसुण अकलङ्कहँ । मरु-मरु णीसरु णीसरु लङ्कहँ' ॥४॥
भणइ विहीसणु 'जण-अहिरामहों । जइ अच्छमि तो दोहउ रामहों ॥५॥
णवरि णरिन्द मूढ अवियप्पउ । जिह सक्कहि तिह रक्खहि अप्पउ' ॥६॥
एम भणेप्पिणु गउ णिय-भवणहों । णाइँ गइन्दु रम्म-रम्म-वणहों ॥७॥
तीसक्खोहणिहिँ हरि-सेण्णहों । मिलिउ विहीसणु हरिसें णाहो ॥८॥

[७] यह सुनकर रावण गुस्से से भर उठा। वह रावण, जो सैकड़ों इन्द्रों को मार सकता था, चन्द्रकी तरह अपनी चमचमाती चन्द्रहास तलवार हाथ में लेकर उसने कहा,—"मैं तुम्हारा सिर अभी धरती पर गिराता हूँ। तू मेरी निन्दा कर रहा है और शत्रुकी प्रशंसा।" तब विभीषण भी आवेशमें आ गया। वह विभीषण, जो क्रुद्ध होनेपर, लोगोंमें निडर घूमता था उसने मणि और रत्नोंसे अलंकृत खम्भा उठा लिया, जो रावणके यशकी तरह शोभित था। जब वे इस प्रकार एक दूसरे पर दौड़े तो लोगोंमें कानाफूसी होने लगी कि देखें जयश्री दोनोंमें-से किसे अपनाती है। बलपूर्वक एक दूसरेको पकड़नेके प्रयासमें, पेड़ और तलवार लिये हुए वे ऐसे लग रहे थे मानो अपनी सूँड़ उठा कर ऐरावत हाथी एक दूसरे पर टूट पड़े हों ॥१-७॥

[८] इतनेमें मन्त्रियोंने ताना कसते हुए उन दोनोंको रोक लिया और कहा, "आदरणीयो, आप लोग आपसमें एक-दूसरेके प्राण न लें, वे प्राण जो अनेकों और स्वयं आपके जीवनका सार हैं।" यह सुनकर भी अमर्षसे क्रुद्ध रावण नहीं माना। उसकी पताका धरती पर समुद्र पर्यन्त फहरा रही थी। उसने विभीषणको लक्ष्य करके कहा, "अरे दुष्ट क्षुद्र चुगलखोर जा मर, मेरी कलंकहीन लंकासे निकल जा।" विभीषण इस पर कहता है, "यदि अब भी मैं यहाँ रहता हूँ तो अभिराम रामका विद्रोही बनता हूँ। रावण, तुम मूर्ख एवं विवेकशून्य हो, जिस तरह सम्भव हो अपने आपको बचाना।" विभीषण वहाँ से अपने भवनमें उसी प्रकार चला गया, जिस प्रकार महागज कदली वनमें प्रवेश करता है। इधर लक्ष्मणकी, दर्पसे भरी हुई तीस हजार अक्षौहिणी सेना आकाशको रौंधती हुई कूच

घत्ता

सहइ विहीसणु णीसरिउ सुहि-सामन्त-मन्ति-परियरि(य)उ ।
जसु सुहु मइलेंवि रावणहों रामहों संमुहु णाइँ णीसरियउ ॥९॥

[९]

हंसदीव-तीरोवर-त्थयं । वर-तुरङ्ग-वर-करि-वरत्थयं ॥१॥
सुहड-सुहड-संदोह-भासुरं । पडह-भेरि-संखोह-भासुरं ॥२॥
णिएँवि सेण्णु रवि-मण्डल-गए । देइ दिट्ठि हरि मण्डलग्गएँ ॥३॥
दुण्णिवार-वइरी सरासणे । राहवो वि सञ्चरै सरासणे ॥४॥
ताव तेण बहु-पुण्ण-भाइणा । स-विसाएण दहवयण-भाइणा ॥५॥
दण्डपाणि पट्ठविउ महबलो । जहिं स-कण्हु पडिवक्ख-सहु-बलो ॥६॥
पणविऊण विण्णविउ राहवो । जो तिहुअण-सुरणि-दुरासओ ॥७॥
एक्कु वयणु पभणइ विहीसणो । 'तुम्ह भिच्चु एवहिं विहीसणो ॥८॥

घत्ता

ण किउ णिवारिउ रावणेंण लज्ज वि माणु वि मणें परिचत्तउ ।
परम-जिणिन्दहों इन्दु जिह तेम विहीसणु तुम्हहँ भत्तउ' ॥९॥

[१०]

तं णिसुणेवि वयणु तहों जोहहों । जे जं के वि राय रणोहहों ॥१॥
ते ते मिलिया रणें ह सुमन्तहों । मइकन्तेण वुत्तु सामन्तहों ॥२॥
'इच्छहों वलहों देव परि ज्जइ । तो ण णिसायराहँ पत्तिज्जइ ॥३॥

करने लगी। पण्डितों, सामन्तों और मन्त्रियोंसे घिरा हुआ विभीषण जा रहा था। उस समय वह ऐसा लग रहा था, जैसे रावणका यश और सुख मैलाकर रामके सम्मुख जा रहा हो ॥१-९॥

[९] विभीषणने देखा कि हंसद्वीपमें रामकी सेना ठहरी हुई है। अश्वों, गजों और अस्त्रोंसे युक्त है। रथों और योद्धाओंके क्षोभसे भयंकर, और नगाड़ों एवं भेरोंसे भयावह। जब लक्ष्मण ने सूर्यमण्डलमें सेना देखी तो उसने अपनी नजर तलवारकी नोक पर डाली। शत्रुओंके लिए दुर्निवार, रामकी दृष्टि भी शत्रुओंके सिर काटनेवाले तीरों सहित अपने धनुषपर चली गई। परन्तु इतनेमें, रावणके भाई, महापुण्यशाली विभीषणने अत्यन्त विनयके साथ, अपना महाबल नामका दूत भेजा। उसके हाथमें दण्ड था। वह वहाँ गया जहाँ लक्ष्मण के साथ राम थे। उसने, युद्धमें संहारक तीर छोड़नेवाले रामसे प्रणामपूर्वक निवेदन किया, "विभीषण एक ही बात आपसे कहना चाहता है, और वह यह कि आजसे वह तुम्हारा अनुचर है। उसने बहुतेरा मना किया। परन्तु रावण नहीं मानता उसने अपने मनमें लज्जा और मानका भी परित्याग कर दिया है। जिस प्रकार इन्द्र परम जिनेन्द्रका भक्त है, उसी प्रकार आजसे विभीषण तुम्हारा भक्त होगा।" ॥१-९॥

[१०] उस योद्धा दूतके शब्द सुनकर वे सब राजा इकट्ठे हो गये जो उस राजन्य समूहमें वहाँ थे। इसी बीच, रामके मन्त्री मतिकान्तने सभी विचारशील सामन्तोंके सम्मुख यह निवेदन किया, "हे राम, इस बातको निश्चित समझा जाय कि रावण चाहे अब सीता देवीको वापस भी कर दे, तब भी निशाचरोंका विश्वास नहीं करना चाहिए। इसका चरित कौन

एयहुँ लग्गउ चारु को जाणइ । जेहिँ अन्तेण छलिय वणेँ जाणइ' ॥४॥
पभणइ मइ-समुद्दु इमु आवइ । गलिउ वज्जु पर-पुण्णेहिँ आवइ ॥५॥
पलिय एवहिँ रावणु जिज्जइ । णिय-मणेँ सव्वल्ल सङ्क वज्जिज्जइ ॥६॥
किङ्कर-वग्गेँहिँ एहु जि पहुच्चइ । णाह मि मारुएँ एहु मि पहुच्चइ ॥७॥
मिलिउ विहीसणु लक्ख पईसहोँ । लग्गउ करयलेँ गाय हलीसहोँ ॥८॥

घत्ता

दिज्जउ रज्जु विहीसणहोँ जेण वे वि जुज्झन्ति परोप्परु ।
अम्हहुँ काइँ महाहवेँण परु जेँ परेण जाउ खय-सक्करु' ॥९॥

[११]

तं णिसुणेविणु पच्चविउ मारुइ । जो किर वम्महु मयणु मा-रुइ ॥१॥
'देव देव देविन्द-समाणं । मच्चउ कल्लहँ वि मइ दसाणणं ॥२॥
आउ विहीसणु परम-सज्जणो । विणयवन्तु दुण्णय-विसज्जणो ॥३॥
सच्चवाइ जिण-धम्म-वच्छलो । सयल-काल-परिचत्त-वच्छलो ॥४॥
मइँ समाणु एणासि अप्पियं । तं करेमि हलहरहोँ जं पियं ॥५॥
जइ महु पुरउ ण किउ राएँणं । तो रिउ-साहणेँ मिलमि राएँणं' ॥६॥

घत्ता

तं णिसुणेप्पिणु राहवेँण पेसिउ दण्डपाणि हक्कारउ ।
आउ विहीसणु गह-सहिउ एयारसमु णाइँ अङ्गारउ ॥७॥

[१२]

जय-जय-सद्दे मिलिउ विहीसणु । विहि मि परोप्परु किउ संभासणु ॥१॥
भणइ रामु 'णउ पइँ कच्चावमि । णीसावण्ण लङ्क भुञ्जावमि ॥२॥
सिरु तोडमि रावणहोँ जियन्तहोँ । संपेसमि पाहुणउ कयन्तहोँ' ॥३॥

जान सकता है? इसने वनमें सीता देवीका अपहरण किया है।" इसपर मतिसमुद्रने कहा, "मेरी समझमें तो इतना ही आता है कि इतनी सेना पुण्यसे मिलती है। विश्वास कीजिए रावण अब जीत लिया जायगा, अपने मनसे समस्त शंकाएँ निकाल दीजिए। बहुत-से अनुचरोंके साथ, यह जैसे यहाँ आया है, वैसे ही यह वहाँ भी जा सकता है। अब विभीषण मिल गया है। लंकामें प्रवेश कीजिए। हे राम, समझ लो अब सीता हाथ लग गयी।" विभीषणको राज्य दे दो जिससे वे दोनों आपसमें लड़ जाँय। यदि दुश्मनसे दुश्मनके सौ टुकड़े हो सकते हैं, तो हमें महायुद्धसे क्या करना है॥१-६॥

[११] यह सुनकर हनुमानने, जो कामदेवके समान सुन्दर और लक्ष्मीकी भाँति कान्तिमय था, कहा—"हे देव, यह सच है कि इन्द्रको पराजित करनेवाला रावण युद्धमें मेरा शत्रु है। परन्तु यह जो विभीषण आया है वह अत्यन्त सज्जन, विनीत, अनीतियोंको दूरसे छोड़ देनेवाला, सत्यवादी और जिनधर्म वत्सल है। छलकी बातें इसने हमेशाके लिए छोड़ दी हैं? मुझसे इसने कहा है-मैं वही करूँगा जो रामको प्रिय होगा। यदि राजाने मेरी बात नहीं मानी तो भी शत्रु सेनामें जा मिलूँगा।" यह सुनकर रामने दूतको विसर्जित कर उसे बुला भेजा। विभीषण भी अपने परिकरके साथ आया। वह ऐसा जान पड़ रहा था मानो ग्यारहवाँ मंगल नक्षत्र हो॥१-७॥

[१२] विभीषण जय-जय शब्दके साथ आकर मिला। दोनोंकी आपसमें बातें हुई। रामने उससे कहा-"मैं तुम्हें शर्मिन्दा नहीं होने दूँगा, तुम समस्त लंकाका भोग करोगे।" रावणका मैं जीते जी सिर तोड़ दूँगा और उसे यमका अतिथि

तेण वि वुत्तु 'भडारा राहव । सुहड-सीह णिव्वूढ-महाहव ॥४॥
जिह अरहन्त-णाहु पर-लोयहाँ । तिह तुहुँ सामिसालु इह-लोयहाँ' ॥५॥
एव जाम्व पचवन्ति परोप्परु । ताम विहीसणु णयण-सुहङ्करु ॥६॥
अक्खोहणि सहासु भामण्डलु । पाइँ सुरेहि समाणु आखण्डलु ॥७॥
आउ णहङ्गणे णाणा-जाणेंहिं । मणि-मोत्तिय-पवाल-अवमाणेंहिं ॥८॥

घत्ता

मणेँ परितुट्ठेँ राहवेँण णरवइ-विन्दु सयलु ओसारेँवि ।
अवलोइउ सुग्गीव-सुउ सरहसु णइँ भुअ-जुअलु पसारेँवि ॥९॥

[५८ अट्ठवण्णासमो संधि]

भामण्डलेँ भीसणेँ मिलिएँ विहीसणेँ कुणय-कुबुद्धि-विवज्जियउ ।
अत्थाणेँ दसासहोँ कच्छि-णिवासहोँ अङ्गउ दूउ विसज्जियउ ॥

[१]

पहिलएँ पमणिउ जम्बवन्तु । 'एत्तियहुँ मज्झेँ को बुद्धिवन्तु ॥१॥
किं गवउ गवक्खु सुसेणु तारु । किं अप्पणेउ रणेँ दुण्णिवारु ॥२॥
किं णलु किं णीलु किमिन्दु कुन्दु । किं अङ्गउ किं पिहुमइ महिन्दु ॥३॥
किं कुमुउ विराहिउ रयणकेसि । किं भामण्डलु किं चन्दरासि' ॥४॥
जं एव पपुच्छिउ राहवेण । विण्णविउ णवेप्पिणु जम्बवेण ॥५॥
'पेसणेँ सुसेणु विणएँ वि कुन्दु । पच्चक्खेँ मन्तेँ मइसमुद्दु ॥६॥

बनाऊँगा।" तब विभीषणने भी कहा, "आदरणीय राम, आप सुभटोंमें सिंह हैं, आपने बड़े-बड़े युद्धोंका निर्वाह किया है। जिस प्रकार परलोकमें अरहन्त नाथ मेरे स्वामी हैं, उसी तरह इस लोकके मेरे स्वामीश्रेष्ठ आप हैं।" इस प्रकार उनमें बातें हो ही रही थीं कि सीता देवीके नयनोंके लिए शुभ भामण्डल भी एक हजार अक्षौहिणी सेनाके साथ ऐसे आ गया मानो देवताओंके साथ इन्द्र ही आ गया हो। मणि, मोती और मूँगोंसे युक्त तरह-तरहके विमान उसके साथ थे। राम मन ही मन गद्गद हो उठे। नरपति समूहको उन्होंने विदा दी। और पुष्पवतीके पुत्र भामण्डलको अपनी हर्ष-भरी भुजाएँ फैलाकर गले लगा लिया॥ १-८॥

●

अट्ठावनवीं सन्धि

भीषण भामण्डल और विभीषणके मिलनके अनन्तर, रामने कुनीति और कुबुद्धिसे रहित अंगद को, लक्ष्मीके निवास, रावणके पास भेजा।

[१] रामने जाम्बवन्तसे पूछा—"बताओ इनमें-से कौन बुद्धिमान है। क्या गवय और गवाक्ष, या सुसेन और तार? क्या युद्धमें दुर्निवार हनूमान? क्या नल और नील? क्या इन्द्र और कुन्द? क्या अंगद पृथुमती या महेन्द्र? क्या कुमुद विराधित और रत्नकेशी? क्या भामण्डल और चन्द्रराशि?" रामने जब इस प्रकार पूछा तो जाम्बवन्तने प्रणामपूर्वक निवेदन किया,—"आज्ञापालनमें सुसेन निपुण है और विनयमें कुन्द। पंचांगमन्त्रमें मतिसमुद्र विशेष योग्यता रखता है।

अङ्गङ्गय दूअत्तणेँ महत्थ । णल-णील पयाणएँ सइँ समत्थ ॥७॥
महुमहणु हणुवु आहव-कालेँ । सुग्गीउ सुहडु मि पुणु विजय-कालेँ' ॥८॥

घत्ता

तं णिसुणेँ वि रामेँ णिग्गय-णामेँ अङ्गउ जोक्किउ दूअ-भरेँ ।
'भणु "किं वित्थारेँ समउ कुमारेँ अज्ज वि रावण सन्धि करेँ" ॥९॥

[२]

अण्णु मि सन्देसउ णेहि तासु । बहु-दुण्णय-वन्तहों रावणासु ॥१॥
बुच्चइ "लङ्केसर चारु चारु । को पर-तिय लेन्तहों पुरिसयारु ॥२॥
जइ सच्चउ रयणासवहों पुत्तु । तो एउ काइँ ववहरेँ वि जुत्तु ॥३॥
हउँ लग्गउ कुडेँ लक्खणहों आम । पइँ छम्मेँ वि णिय वइदेहि ताम ॥४॥
एत्तिय वि तो वि तउ थाउ बुद्धि । अहिमाणु मुएप्पिणु करहि सन्धि" '॥५॥
तं णिसुणेँ वि मइ-कहमइणेण । णिब्भच्छिउ रामु जणद्दणेण ॥६॥
'साहियउ जासु जसु बाहु-दण्ड । तसु वलेँ एत्तिय णरवर पयण्ड ॥७॥
सो दीण-वयणु पहु चवइ केवँ । एक्कल्लउ करेँ सन्धाणु देव ॥८॥

घत्ता

आएँहिँ आलावेँहिँ गलिय-पयावेँहिँ हउँ तुम्हहँ थाहिरउ किह ।
वायरणु सुणन्तहुँ सन्धि करन्तहुँ अद्दन्ताइ-णिवाउ जिह' ॥९॥

[३]

जं सन्धि ण इच्छिय दुद्धरेण । तं वज्जावत्त-धणुद्धरेण ॥१॥
हरि-वयणेँहिँ अमरिस-कुद्धएण । सन्देसउ दिण्णु विरुद्धएण ॥२॥

दूतकार्य में अंग और अंगद बड़ा महत्त्व रखते हैं। प्रस्थानके समय नल और नील बहुत समर्थ हैं। युद्धके कोलाहलमें मधुको मौतके घाट उतारनेवाला लक्ष्मण, हनूमान् और विजयश्रीमें आप और सुग्रीव समर्थ हैं।" यह सुनकर विख्यातनाम रामने दूतका कार्यभार अंगदको सौंपते हुए उससे कहा—"शीघ्र तुम रावणसे जाकर कहो कि अधिक बात बढ़ानेमें कोई लाभ नहीं है। तुम आज भी कुमार लक्ष्मणके साथ सन्धि कर लो" ॥ १–९ ॥

[२] अपना संदेश जारी रखते हुए रामने और कहा—"अनेक अन्यायोंके विधाता रावणसे यह भी जता देना कि हे रावण! दूसरे की स्त्रीके अपहरणमें कौन सा पुरुषार्थ है? यदि तुम रत्नाश्रवके सच्चे बेटे हो, तो क्या तुम्हारा यह आचरण ठीक है? मैं जब लक्ष्मणका अनुसरण कर रहा था, तब तुम धोखा देकर सीता देवीको ले गये। और अब यह सब हो जाने पर भी, तुममें कुछ बुद्धि हो तो घमण्ड छोड़कर सन्धि कर लो।" यह सन्देश सुनकर, योद्धाओंको चकनाचूर कर देनेवाला लक्ष्मण रामपर बरस पड़ा। उसने झिड़ककर कहा, "जिसकी भुजाएँ और यश इतने ठोस हों, जिसकी सेनामें एकसे एक बढ़कर नरश्रेष्ठ हों? फिर आप इतने दीन शब्दोंका प्रयोग क्यों कर रहे हैं? हे देव, आप तो केवल धनुष हाथमें लीजिए और उसपर शर सन्धान कीजिए! आपकी इन "ओजहीन बातोंसे मैं उतना ही दूर हूँ जिस प्रकार व्याकरण सुनने वाले और सन्धि करने वालोंसे उदन्तादि निपात दूर रहते हैं।" ॥ १–९ ॥

[३] वज्रावर्त धनुष धारण करनेवाले लक्ष्मणके शब्द सुनकर राम भी एकदम भड़क उठे। उन्होंने सन्धिकी बात

'भणु "दहमुह-गयवरें गिलल-गण्डें। किय-कुम्भयण्ण-उद्दण्ड-सोण्डें ॥३॥
हत्थ-पहत्थ-दारुण-विसाणें। सुयसारण-घण्टा-रुण्टमाणें ॥४॥
णिवडेसइ तहिँ बलएव-सीहु। हणुवन्त-महन्त-कमन्त-जीहु ॥५॥
कुन्देन्दु-वण्ण-सोमित्ति-वयणु। विप्फारिअ-गयव-गवक्ख-णयणु ॥६॥
णल-णील-वियड-दाढा-करालु। जम्बव-भामण्डल-केसरालु ॥७॥
अङ्गङ्गय-तार-सुसेण-णहरु। साहण-णङ्गूलुग्गिण्ण-पहरु ॥८॥

घत्ता

सो राहव-केसरि णिवडेँवि उप्परि णिसियर-करि-कुम्भत्थलइँ।
लीलएँ जेँ दलेसइ कड्ढेँवि लेसइ जाणइ-जस-मुत्ताहलइँ" ' ॥९॥

[४]

समरङ्गणेँ एक्कें लक्खणेण। सन्देसउ पेसिउ तक्खणेण ॥१॥
'भणु "जहिँ जेँ जहिँ जेँ तुहुँ कुसुम-सण्डु। तहिँ तहिँ सो दिणयर-तेय-पिण्डु ॥२॥
जहिँ जहिँ तुहुँ गिरिवर-सिहर-खण्डु। तहिँ तहिँ सो वासव-कुलिस-दण्डु ॥३॥
जहिँ जहिँ आसीविसु तुहुँ फणिन्दु। तहिँ तहिँ सो भीसणु वर-खगिन्दु ॥४॥
जहिँ जहिँ तुहुँ गलगज्जिय-गइन्दु। तहिँ तहिँ सो बहु-माया-मइन्दु ॥५॥
जहिँ तुहुँ रवि तहिँ अवणिहि-णिहाउ। जहिँ तुहुँ घणु तहिँ सो पलय-वाउ ॥६॥
जहिँ तुहुँ उब्भडु तहिँ सो विणासु। जहिँ तुहुँ प-सद्दु तहिँ सो समासु ॥७॥
जहिँ तुहुँ णिसि तहिँ सो पवर-दिवसु। जहिँ तुहुँ तुरङ्गु तहिँ सो वि महिसु ॥८॥

छोड़ दी। उन्होंने फिर अपना सन्देश दिया—"जाकर उस रावणसे कहना कि दशमुखरूपी हाथीपर रामरूपी सिंह आक्रमण करेगा। उस दशमुख गजके गाल आर्द्र हैं। कुम्भकर्ण उसकी प्रचण्ड सूँड़के समान है, हस्त और प्रहस्त उसके विषम दाँत हैं। मन्त्री सुत सारण बजते हुए घण्टा-रवके समान है। इधर रामरूपी सिंह भी कम नहीं है। हनुमान उसकी जीभ है, कुन्द और इन्द्रकर्ण तथा लक्ष्मण उसका शरीर है। गवय और गवाक्ष उसके विस्फारित नेत्र हैं। नल और नील उसकी दो भयंकर दाढ़ हैं। वह रामरूपी सिंह एकदम भयंकर है। जामवन्त और भामण्डल उसकी अयालकी भाँति हैं। अंग और अंगद तार, सुसेन, उसके नख हैं। उसकी पूँछके बाल हैं, पीछे लगी हुई सेना। ऐसा रामरूपी सिंह निश्चय ही, निशाचररूपी हाथियोंके गण्डस्थलों-को एक ही आक्रमणमें चूर चूर कर देगा, और उससे जानकीरूपी मोती निकालकर ही रहेगा।" ॥ १–९ ॥

[४] तब, समराङ्गणमें अजेय लक्ष्मणने भी फौरन अपना सन्देश भेजा,—"जाकर रावणसे कहना जहाँ जहाँ कुमुद समूह है, वहाँ पर मैं तेजस्वी दिनकरके समान हूँ। यदि तुम गिरिशिखरोंकी तरह लम्बे-तडंगे हो तो मैं भी इन्द्रका वज्र हूँ। यदि तुम नागराजके विषैले दाँत हो तो मैं भी भयंकर पक्षियोंका राजा गरुड़ हूँ। यदि तुम गरजते हुए हाथी हो तो मैं बहुमायावी मृगेन्द्र हूँ। यदि तुम आग हो तो मैं समुद्र-समूह हूँ। यदि तुम महामेघ हो तो मैं प्रलयपवन हूँ। यदि तुम उद्भट हो, तो निश्चय ही अपना विनाश समझो। यदि तुम 'च' शब्द हो तो मैं उसके लिए समास हूँ। यदि तुम रात हो तो मैं दिन हूँ। यदि तुम अश्व हो तो मैं महिष हूँ।

घत्ता

जलेँ थलेँ पायालेँहिँ विसम-खयालेँहिँ तुहुँ जर-पायवु-जहिँ जेँ जहिँ ।
लग्गेसइ विसउ झत्ति पलित्तउ लक्खण-हुअवहु तहिँ जेँ तहिँ" '॥९॥

[५]

एत्थन्तरेँ रण-भर-भीसणेण । सन्देसउ दिण्णु बिहीसणेण ॥१॥
'भणु "रावण जाइँ कियइँ छलाइँ । दरिसावमि ताइँ महाफलाइँ ॥२॥
जेँ हत्थेँ कड्ढिउ चन्दहासु । जेँ हत्थेँ वइरिहिँ किउ विणासु ॥३॥
जेँ हत्थेँ पणइहुँ दिण्णु दाणु । जेँ हत्थेँ धणयहोँ मलिउ माणु ॥४॥
जेँ हत्थेँ साहुक्कारु लद्धु । जेँ हत्थेँ सुरवइ समरेँ बद्धु ॥५॥
जेँ हत्थेँ सइँ समकद्धु अङ्गु । जेँ हत्थेँ वरुणहोँ कियउ भङ्गु ॥६॥
जेँ हत्थेँ कड्ढिय राम-घरिणि । पञ्चाणणेण वणेँ जेम हरिणि ॥७॥
तहोँ हत्थहोँ आइउ पलय-कालु । मइँ उप्पाडेवउ जिह मुणालु" ॥८॥

घत्ता

अण्णु वि सविसेसउ कहि सन्देसउ "पइँ पेम्में वि जण-सामण्णहोँ ।
राहव-संसग्गी पुरि आवग्गी होसइ पइँ विहीसणहोँ" ' ॥९॥

[६]

एत्थन्तरेँ दिण्णु स-मच्छरेण । सन्देसउ किक्किन्धेसरेण ॥१॥
'भणु "रावण कलहेँ कवणु खोज्जु । सुग्गीउ करेसइ समरेँ भोज्जु ॥२॥
दुप्पेक्ख-तिक्ख-णाराय-भत्तु । कणिणअ-खुरुप्प-अग्गिमउ देन्तु ॥३॥
सुक्केक्क-चक्क-चम्पडय-भाउ । सर-झसर-सत्ति-सावल्ल-सारु ॥४॥
तीरिय-तोमर-भिस्सण-णिहाउ । मोग्गर-मुसुण्ढि-गय-घत्त-साउ ॥५॥

जल, स्थल या आकाशमें कहीं भी तुम रहो, तुम जैसे जीर्ण वृक्षों पर प्रक्षिप्त शीघ्र प्रदीप्त लक्ष्मणरूपी आग लग कर रहेगी।"॥१-६॥

[५] इसी समय, रणभारमें भीषण, विभीषणने भी अपना सन्देश दिया—"रावणसे जाकर कहना कि तुमने जो भी भयंकर छल किये हैं, उनका फल तुम्हें चखाऊँगा। तुम्हारे जिस हाथने चन्द्रहास तलवार प्राप्त की, जिस हाथने शत्रुओंका विनाश किया है, जिस हाथने याचकोंको दान दिया, जिन हाथोंने कुबेरका मान खण्डित किया, जिन हाथोंने 'जय' अर्जित की, जिन हाथोंने इन्द्रको बन्दी बनाया, जिन हाथोंसे तुम्हें कामदेव उपलब्ध हुआ, जिन हाथोंने वरुणको भंग किया, जिन हाथोंने रामकी पत्नीका अपहरण किया, ठीक उसी प्रकार जैसे वनमें सिंह हिरनीका अपहरण कर ले, लगता है अब उन हाथोंका प्रलय काल आ गया है। मैं उन हाथोंको कमलनालकी भाँति उखाड़ फेकूँगा।" विभीषणने अपने सन्देशमें यह विशेष बात भी कही—"उसे (रावणको) बता देना कि तुम्हें यमके शासनमें भेज दिया जायगा, और श्री राघवके सहयोगसे कल लंका नगरी मेरे अधीन हो जायगी।" ॥ १–९ ॥

[६] उसके बाद, किष्किन्धा नरेशने भी मत्सरसे भरकर अपना सन्देश देना प्रारम्भ किया, "जाकर रावणसे पूछना कि कल कौन सा महोत्सव है, सुग्रीव कल युद्धके आँगनमें ही भोज देगा, दुर्दर्शनीय तीखे तीर उस भोजनमें भात होंगे। कर्णिका और खुरुप अस्त्रोंसे मैं पहला कौर ग्रहण करूँगा। छोड़ा गया एक चक्र उस भोजनमें घृतधाराका काम देगा। सर, झसर और शक्ति (अस्त्र) उसमें सालनका स्वाद देंगे। तीरिय और तोमर मिष्ठान्न के संघात होंगे। मुद्गर और

सव्वल-हुलि-हल-करवाल-हत्थु । फर-कणय-कोन्त-कलयण-विहत्थु ॥६॥
तं णेहउ भोज्जु अकायरेहिँ । भुञ्जेवउ परएँ णिसायरेहिँ ॥७॥
इन्दइ घणवाहण-रावणेहिँ । हत्था-पहत्थ-सुयसारणेहिँ ॥८॥

घत्ता ।

भुत्तोत्तर-कालेंहिँ रणउह-सालेंहिँ दाहर-णिवऍ भुत्तऍहिँ ।
अच्छेवउ सावेंहिँ विणय-पयावेंहिँ महु सर-सेज्जहिँ सुत्तऍहिँ'' ' ॥९॥

[७]

पुणु पच्छलें सुर-करि-कर-भुएण । सन्देसउ दिण्णउ मउ-सुएण ॥१॥
'भणु इन्दइ ''हच्चिउ होहि सज्जु । हणुवन्तु भिडेसइ परएँ तुज्झु ॥२॥
णिद्धुरिय-णयण-वणगुडमडाहँ । भञ्जन्तु मडप्फरु रिउ-भडाहँ ॥३॥
अलि-चुम्बिय-लम्बिय-मुहवडाहँ । असि-घाय देन्तु सिरेँ गय-घडाहँ ॥४॥
पक्खिकुल-पवर-पवणुच्छडाहँ । मोडन्तु दण्ड धुअ-धयवडाहँ ॥५॥
विहडप्फड-कडमद्दण-कराहँ । भञ्जन्तु पसरु रणेँ रहवराहँ ॥६॥
दिढ गुडु तोडन्तु तुरङ्गमाहँ । पर-बलु बलि देन्तु विहङ्गमाहँ ॥७॥
दरिसन्तु चउद्दिसु भड-चियाहँ । धूमन्तहँ जिह डुज्झण-सुहाहँ ॥८॥

घत्ता ।

इय लीलऍ साहणु रह-गय-वाहणु जिह उववणु तिह णिट्ठवमि ।
जें पन्थें अक्खउ णिउ दुप्पेक्खउ तेण पाव पइँ पट्ठवमि'' ' ॥९॥

[८]

पुणु दिण्णु अमरग-मडप्फरेण । सन्देसउ सीह-सहोयरेण ॥१॥
'भणु ''एसइ अजउ अलद्ध-थाहु । कल्लऍ सामण्डल-जलपवाहु ॥२॥
पहरण-कर-णरवर-जलयरोहु । धुय-धवल-छत्त-डिण्डीर-सोहु ॥३॥
चउरङ्ग-तुरङ्ग-तरङ्ग-भङ्गु । पवणाहय-धय-उम्मिर-विहङ्गु ॥४॥

भुसुण्डी पत्तोंके साग होंगे। सब्बल, हुलि, हल तथा करवाल ईखकी जगह होंगे, फर कणय, कोंत और कल्लवण नमकीनका काम देंगे। कल सवेरे अपना, हस्त-प्रहस्त, शुकसारण आदि निशाचरोंको मैं ऐसा ही भोज दूँगा। भोजके अनन्तर रणमें श्रेष्ठ, गहरी नींदसे अभिभूत, प्रतापशून्य वे जब मेरी शरशय्या पर सो रहे होंगे तो मैं भी वहाँ रहूँगा'' ॥ १–६ ॥

[७] अन्तमें गजशुण्डके समान हाथ वाले पवनसुत हनुमानने भी अपना सन्देश दिया —''इन्द्रजीतसे कहना, मुझे इच्छित युद्ध दो, कल सवेरे तुमसे लड़ूँगा, अपने भयावह नेत्रों और मुखोंसे अत्यन्त उद्भट शत्रुयोद्धाओंका घमण्ड, मैं चूर-चूर कर दूँगा। भौंरोंसे चूमी गयी और लम्बे मुखपट वाली गजघटाके सिर पर मैं तलवार की चोट करूँगा। उलटी हवामें, उद्धत और प्रकंपित ध्वजाओंके दण्डोंको मोड़ दूँगा। व्याकुलता और विनाश उत्पन्न करनेवाले रथोंका प्रसार, मैं युद्धमें एकदम रोक दूँगा। अश्वोंकी मजबूत लगामोंको तोड़ दूँगा। शत्रु-सेनाकी पंक्तियोंको दल दूँगा। भटसमूहको, चारों दिशाओंमें ऐसा घुमा दूँगा जैसे दुर्जनोंको घुमाया जाता है। रथ हाथी आदि वाहनोंको मैं उद्यान की ही भाँति खेलमें उजाड़ दूँगा, हे पाप, मैं तुझे भी उसी रास्ते भेज दूँगा जिस रास्ते दुर्दर्शनीय अक्षयकुमार गया है।'' ॥ १–९ ॥

[८] इसके बाद, अखण्डितमान, सीताके भाई भामण्डलने अपना सन्देश दिया और कहा,—''कल भामण्डल एक ऐसे जल प्रवाहकी भाँति आयेगा, जिसकी थाह, कोई नहीं पा सकता। प्रहार करनेवाले नरवर, उस प्रवाहके जलकी मछलियाँ होंगी। चंचल श्वेत छत्र, उसमें फेनकी शोभा देंगे। ऊँचे अश्वों रूपी लहरोंसे वह प्रवाह अत्यन्त कुटिल होगा। पवनाहत पताकाएँ

चक्कोहर-रउद्दु । सुंसुमार-पयरुद्दु । गज्जन्त-मत्त-मायङ्ग-मयरु ॥५॥
करवाल-पहर-परिहच्छ-मच्छु । णिय-णक्क-गाह-फरोह-कच्छु ॥६॥
कुम्भयल-सिलायल-विसम-व्यूहु । सिय-चमर-बलायावलि-समूहु ॥७॥
वेढउ भामण्डल-जलपवाहु । रेल्लमि कइ पइसइ अथाहु'' ॥८॥

घत्ता

सुणइ णल-णीलेहिँ दूसम-सीलेहिँ 'अच्छय गम्पिणु एम भणेँ ।
"अवेँ हत्थ-पहत्थहोँ पहर-णहत्थहोँ जिह सक्कहोँ तिह थाहु रणेँ" '॥९॥

[९]

णिय-वइरु सरेवि जसाहिवेण । सन्देसउ दिण्णु विराहिएण ॥१॥
भणु "रावण जिह पइँ किउ अकज्जु । चन्दोयरु मारेँवि लइउ रज्जु ॥२॥
वायरणु जेम सं जुज्जणीउ । वायरणु जेम स-विसज्जणीउ ॥३॥
वायरणु जेम आयम-णिहाणु । वायरणु जेम आएस-थाणु ॥४॥
वायरणु जेम अत्थुव्वहन्तु । वायरणु जेम गुण-विद्धि देन्तु ॥५॥
वायरणु जेम विग्गह-समाणु । वायरणु जेम सन्धिज्जमाणु ॥६॥
वायरणु जेम अव्वय-णिवाउ । वायरणु जेम किरिया-सहाउ ॥७॥

उड़ते हुए पक्षियोंके समान दिखाई देंगी। चक्रधारी सामन्त, उसमें ऐसे जान पड़ेंगे मानो सुंसमार जलचरोंका समूह हो। गरजते हुए, मतवाले हाथी ऐसे लगेंगे मानो मगर हों। तलवारों-की चोटें, मछलियोंकी कम्पन उत्पन्न करेंगी। राजा लोग उसमें मगर ग्राह फरोह और कछुए होंगे। गण्डस्थलरूपी चट्टानोंसे उस प्रवाहका तट अत्यन्त विषम होगा। श्वेत चमर, बगुलोंकी कतारके समान जान पड़ेंगे। भामण्डलरूपी ऐसा अथाह जल प्रवाह, रेलपेल मचाता हुआ लंका नगरीमें प्रवेश करेगा।" उसके बाद विषमस्वभाव नल और नीलने अपना सन्देश दिया—"अंगद, तुम जाकर हस्त प्रहस्तसे कहना कि तुम लोग जिस तरह भी बन सके, युद्धमें जमे रहना॥ १-९॥

[९] तदनन्तर, अपने पुराने वैरको याद कर, यशाधिप विराधितने अपने सन्देशमें कहा,—"रावणको याद दिला देना कि तुमने चन्द्रोदरको मारकर उसका राज्य हड़प लिया है, इससे बढ़कर बुरा काम, दूसरा क्या हो सकता है? इतना ही नहीं, गौरवशाली मेरा वह राज्य तुमने खर-दूषणको दे दिया। वह राज्य, जो व्याकरणकी भाँति अत्यन्त 'विसर्जनीय-सहित' (विसर्गों (:) और दूत एवं सन्देशहरोंसे युक्त) था, जो व्याकरणकी भाँति, आगम (वर्णागम और द्रव्यागम) का स्रोत था। व्याकरणकी भाँति जिसमें आदेशके लिए स्थान प्राप्त था, व्याकरणकी भाँति जो अर्थोंको धारण करता था। व्याकरणकी भाँति जो गुण और वृद्धिको प्रश्रय देता था। व्याकरणकी भाँति जिसमें विग्रह (पदच्छेद और सेना) की परिपूर्णता थी। व्याकरणकी भाँति ही जिसमें सन्धियोंकी व्यवस्था थी। व्याकरणकी भाँति जिसमें अव्यय और निपात थे। व्याकरणकी भाँति जिसमें

वायरणु जेम परलोय-करणु । वायरणु जेम गण-लिङ्ग-सरणु ॥८॥

घत्ता

तं रज्जु महारउ गुण-गउआरउ दिण्णु जेम खर-दूसणहुँ ।
तिह भीरु म छड्डहि अज्जु समोड्डहि मम णारायहुँ भीसणहुँ'' ' ॥९॥

[१०]

अवरो वि को वि जो जासु मल्लु । जो जसु उप्पवि उब्भहइ सल्लु ॥१॥
समरङ्गणेँ जेण समाणु जासु । सन्दिसइ पेसिउ तेण तासु ॥२॥
भीसावणु रावणु राउ जेत्थु । गउ अङ्गउ दूउ पहट्ठु तेत्थु ॥३॥
'भो सयल-भुवण-एक्कल-मल्ल । हरि-हर-चउराणण-हियय-सल्ल ॥४॥
जम-धणय-पुरन्दर-मडुप्फरट्ट । णिल्लोट्टाविय-दुग्घोट्ट-थट्ट ॥५॥
दुद्दम-दणुतड्ड-णिद्दलण-सील । तियसिन्द-विन्द-पक्खन्द-कील ॥६॥
थिर-थोर-हत्थि-णिट्ठुर-पचट्ठ । कइलास-कोडि-कन्दर-णिहट्ठ ॥७॥
दिवेँ दिवेँ किय-तइलोक्केक्क-सेव । सन्धाणु पयासँ करहि देव ॥८॥

घत्ता

विज्जाहर-सामिय अम्बर-गामिय वन्दिण-विन्द-णरिन्द-थुअ ।
चन्दक्किय-णामहुँ लक्खण-रामहुँ धुउ अप्पिज्जउ जणय-सुअ' ॥९॥

[११]

तं णिसुणेँवि हसिउ दसाणणेण । 'किं बुज्झिय सन्धि समासु केण ॥१॥
कें लक्खणु केण पमाणु सारु । किं वलु किं साहणु बुण्णिवारु ॥२॥

क्रियाकी सहायता ली जाती थी। व्याकरणकी भाँति जिसमें दूसरों (वर्णों—शत्रुओं) का लोप कर दिया जाता था व्याकरणकी भाँति जिसमें गण और लिङ्गोंसे सहायता ली जाती थी। "गुण और गौरवका स्रोत, मेरा राज्य, जो तुमने खर-दूषणको दे दिया है, ठीक है। तुम अपना धीरज नहीं छोड़ना, शीघ्र तुम मेरे भयंकर तीरोंके सम्मुख अपने अंग मोड़ोगे।" ॥ १–९ ॥

[१०] इस प्रसंगमें और भी जो प्रतिद्वंदी योद्धा वहाँ मौजूद थे, और जिसका जिससे वैर था, युद्ध प्रांगणमें जो जिसका प्रतियोगी था, उसने भी अपने प्रतिद्वंदीको सन्देश भेजा। अंगद (सबके सन्देश लेकर) वहाँ पहुँचा जहाँ रावण था। भीतर प्रवेश करते ही उसने कहना प्रारम्भ कर दिया—"हे रावण, तुम निस्सन्देह समस्त विश्वमें अद्वितीय मल्ल हो, ब्रह्मा, विष्णु और महेश, तुम्हें अपने हृदयका काँटा समझते हैं। यम, कुबेर और इन्द्रका तुमने विनाश किया है। गजघटाओंको तुम धरतीपर लिटा देते हो। दुर्दम दानवोंका दमन करना तुम्हारा स्वभाव है, देवताओंके समूहको रुलाना तुम्हारे लिए एक खेल है। बड़े-बड़े हाथियोंको तुम निर्दयतासे कुचल देते हो, कैलासपर्वतकी सैकड़ों गुफाओंको तुमने नष्ट किया, तीनों लोक दिन-रात तुम्हारी सेवामें लीन हैं। इसलिए आप प्रयत्नपूर्वक सन्धि कर लें। आप विद्याधरोंके स्वामी हैं और आकाशमें विचरण करते हैं। चारणवृन्द और राजा निरन्तर आपकी स्तुति करते हैं। आप प्रशस्तनाम वाले राम-लक्ष्मणको सीतादेवी सौंप दें" ॥ १–९ ॥

[११] यह सुनकर, रावणने मुसकराकर कहा, "क्या कोई सन्धि और समासकी बात समझ सका है। लक्ष्मणको

जो ण खलिउ देवेंहिँ दाणवेंहिँ । तहोँ कवणु गहणु किर माणवेंहिँ ॥३॥
जइ होइ सन्धि गरुडोरगाहुँ । सुर-कुलिस-णिहाय-महाणगाहुँ ॥४॥
जइ होइ सन्धि हुअवह-पयाहुँ । पञ्चाणण-मत्त-महागयाहुँ ॥५॥
जइ होइ सन्धि ससि-कञ्जयाहुँ । दिणयर-करोह-चन्दुज्जयाहुँ ॥६॥
जइ होइ सन्धि खर-कुञ्जराहुँ । खयकाल-पहञ्जण-जलहराहुँ ॥७॥
जइ होइ सन्धि सव्वरि-दिणाहुँ । जइ होइ सन्धि वम्मह-जिणाहुँ ॥८॥

घत्ता

कलियक्खर-अत्थहुँ दूर-पसत्थहुँ अणउ (?) णव पणस-रायणहुँ ।
जइ सन्धि पहावइ को वि पयावइ तो रणेँ राहव-रावणहुँ' ॥९॥

[१२]

तं णिसुणेँवि समरेँ अभङ्गएण । पुणु पुणु वि पवोल्लिउ अङ्गएण ॥१॥
'भो रावण किं गलगज्जिएण । णिष्फलेंण परक्कम-वज्जिएण ॥२॥
भणु सीय ण देन्तहोँ कवणु लाहु । किं जो सो सज्जण-हियय-डाहु ॥३॥
किं जो सो सम्बुकुमार-णासु । किं जो सो पर-णय-सूरहासु ॥४॥
किं जो सो चन्दणहो-पवञ्चु । किं जो सो खर-वल-वलि-विरञ्चु ॥५॥
किं जो सो आसालन्तकालु । किं जो सो विणिहय-कोट्टवालु ॥६॥
किं जो सो पवरुज्जाण-भङ्गु । किं जो सो हउ वलु चाउरङ्गु ॥७॥

कौन समझ सका है, कौन उसके प्रमाण और शक्तिको पहचान सका है? क्या बल, और क्या दुर्निवार सेना? जो देवताओं और दानवोंकी भी सेनासे नहीं डिगा, उसे मनुष्य कैसे पकड़ सकते हैं? यदि गरुड़की सर्पसे और इन्द्रके वज्रकी कुल पर्वतोंसे सन्धि सम्भव हो, यदि आग और पानी, सिंह और गजराजोंमें सन्धि हो सकती हो,' यदि चन्द्रमा और कमल, सूर्यकी किरणों और चाँदनीमें सन्धि होती हो, यदि गधे और हाथी, प्रलयकालके पवन और मेघोंमें सन्धि होती हो, यदि दिन-रातमें सन्धि सम्भव हो, यदि कामदेव और जिन भगवान्में सन्धि सम्भव हो, सुन्दर अक्षरवाले अर्थों और शब्दसे दूर रहनेवाले अर्थोंमें, अथवा वद्दंड और नये विनीत राजजनोंमें सन्धि सम्भव हो तभी राम और रावणमें सन्धि हो सकती है" ॥ १-९ ॥

[१२] यह सुनकर, युद्धमें अडिग अंगदने, रावणको बार-बार समझाया, और कहा, "हे रावण, तुम बार-बार व्यर्थ गरजते हो। तुम्हारा यह गरजना, एकदम व्यर्थ और पराक्रम शून्य है। बताओ, सीतादेवीको वापस न करनेमें तुम्हें क्या लाभ है, वह कौन है, जो इस प्रकार सज्जनोंके हृदयको जला रहा है, वह कौन है, जिसके कारण शम्बुकुमारका नाश हुआ। वह कौन है, जिसके कारण सूर्यहास खड्ग दूसरेके हाथमें चला गया। वह कौन है, जिसके कारण चन्द्रनखा की विडम्बना हुई। वह कौन है, जिसके कारण खरकी सेना और बालिकी भी विडम्बना हुई, वह कौन है, जिसके कारण आशाली विद्याका अन्त हुआ। वह कौन है, जिसके कारण कोटपाल मारा गया। वह कौन है, जिसके कारण विशाल उद्यान उजड़ गया। वह कौन है, जिसके कारण चतुरंग सेनाका नाश

किं जो सो उप्परि दिण्णु पाउ । किं जो सो मोडिउ घर-णिहाउ ॥८॥
किं जो सो एक्को घर-विभेउ । किं जो सो कलएँ प्राण-छेउ' ॥९॥

घत्ता

तं णिसुणेंवि रावणु भय-भीसावणु अमरिस-कुद्धउ अक्खयहोँ ।
उद्धूसिय-केसरु णाइँ मयङ्करु सिंह पधाइउ मयगलहोँ ॥१०॥

[१३]

'महु अग्गएँ मइ-चक्केहिं काइँ । सक्कन्ति जासु रणें सुर सयाइँ ॥१॥
दाहिणें करें कड्ढिएँ चन्दहासें । महँ सरिसु कवणु तिहुअणें असेसें ॥२॥
किं वरुण पवणु वइसवणु सक्कु । किं हरि हरु बम्भु फणिन्दु चक्कु ॥३॥
जं तुक्कइ हरु तं कलुणु भाउ । मं गउरिहें होसइ कहि मि घाउ ॥४॥
जं तुक्कइ बम्भु महन्त-बुद्धि । तं किर बम्भणें मारिएँ ण सुद्धि ॥५॥
जं तुक्कइ जमु अण-सण्णिघाउ । तं को किर पुच्छिउ लेइ पाउ ॥६॥
जं तुक्कइ ससि सारङ्ग-धरणु । तं किर रयणिहेँ उज्जोय-करणु ॥७॥
जं तवइ भाणु ववगय-तमालु । तं किर एँहु पभणु लोयपालु ॥८॥

घत्ता

दिट्ठएँ रहुणन्दणें स-भएँ स-सन्दणें जइ एक्कु वि पउ ओसरमि ।
तो भय-भीसाणहिँ (?) भगाभगमाणहिँ (?) हुअवह-पुञ्जें पइसरमि' ॥९॥

[१४]

तियसिन्द-विन्द-कन्दावणेण । जं सन्धि न इच्छिय रावणेण ॥१॥
तं इन्दइ-मुहें णीसरिउ सक्कु । 'पर सन्धिहेँ कारणु अत्थि एक्कु ॥२॥

हो गया ! वह कौन है, जिसके ऊपर पैर रखा गया। वह कौन है जिसके कारण सैकड़ों घर बरबाद हुए। वह कौन है, जिसके कारण घरमें भेद हुआ। वह कौन है, जिसके प्राणोंका कल अन्त होकर रहेगा।" यह सुनकर भयसे डरावना और क्रोधसे भरकर रावण अंगद पर उसी प्रकार टूट पड़ा जिस प्रकार नखोंसे भयंकर सिंह अपनी अयाल उठाकर महागजपर टूट पड़ता है ॥ १–६ ॥

[१३] "मेरे सम्मुख भटसमूह क्या कर सकता है, युद्धमें मुझसे देवता भी भय खाते हैं। जब मैं दायें हाथमें तलवार निकाल लेता हूँ तो समस्त त्रिलोकमें, मेरी समानता कौन कर सकता है ? क्या वरुण, पवन, वैश्रवण या कार्तिकेय ? क्या विष्णु ब्रह्मा-शिव-नागेश या चन्द्र ? यदि कहीं शिव युद्धमें धोखा खा गये, तो बड़ा करुण प्रसंग होगा, कहीं ऐसा न हो कि इससे बेचारी गौरीपर आघात पहुँचे। कहीं, विशालबुद्धि विधाता धोखा खा गये, तो ब्रह्महत्याकी शुद्धि मैं कहाँ करूँगा ! यदि यम जनता का नाश करने में चूक गया और मेरे हाथों मरा गया, तो इतना बड़ा पाप कौन अपने माथे पर लेगा, मृगधारण करनेमें यदि चन्द्रमा चूक गया तो फिर रात में प्रकाश कौन करेगा? यदि मैं अन्धकार दूर करनेवाले सूर्यको तपाता हूँ तो यह भी ठीक नहीं, क्योंकि यह पाँचवाँ लोकपाल है ! ध्वज और रथके साथ रामको देखकर यदि मैं एक भी पग पीछे हटूँ तो मैं अत्यन्त डरावनी धकधक जलती हुई अग्निज्वालामें प्रवेश करूँ" ॥ १–६ ॥

[१४] जब देवसमूहके लिए पीड़ादायक रावणने सन्धिकी बात ठुकरा दी तो इन्द्रजीतने अपने मुँहसे यह कहा, "परन्तु सन्धिका एक ही कारण हो सकता है ? राम अपने मनमें

जइ मणें परिचिन्तेंवि पउमणाहु । आमेल्लइ सीयहें तणउ गाहु ॥३॥
तो तहों ति-खण्ड महि धवल-छत्त । पउरइ णिहिउ रयणाइँ सत्त ॥४॥
सामन्त-मन्ति-पाइक्क-तन्तु । रहवर-णरवर-गय-तुरय-चन्तु ॥५॥
अन्तेउरु परियणु पिण्डवासु । स-कलत्तु स-बन्धउ हउ मि दासु ॥६॥
कुस-दीउ चीर-माइणु असेसु । वज्जरउ वीणु छोहार-देसु ॥७॥
वब्बरउलु जवणु सुवण्ण-दीउ । वेलन्धरु हंसु सुवेल-दीउ ॥८॥

घत्ता

अण्णइ मि पएसइँ लेउ असेसइँ गिरि वेयड्ढु जाम्ब धरेंवि ।
रावणु मन्दोयरि सीय किसोयरि तिण्णि वि बाहिराइँ करेंवि' ॥ ९॥

[१५]

तं णिसुणेंवि रोस-वसं-गएण । णिब्भच्छिउ इन्दइ अङ्गएण ॥१॥
'खलु खुद्दु पिसुणु पर-णारि-लेहु । सय-खण्ड केवँ तउ ण गय जीहु ॥२॥
जसु तणिय घरिणि तासु जें ण देहि । राहवें जियन्तें जम्मेंवि ण लेहि ॥३॥
जो रक्खइ पर-परिहव-सयाइँ । सो णिय-कज्जें ओसरइ काइँ' ॥४॥
जे दिण्ण विहीसण-हरि-बलेहिँ । सुग्गीव-हणुव-भामण्डलेहिँ ॥५॥
सन्देसा ते पभणेंवि तासु । गउ अङ्गउ बल-लक्खणहँ पासु ॥६॥
'सो रावणु सन्धिण करइ देव । सईं सरेण अमी-दिवारु जेम्व' ॥७॥

घत्ता

तं णिसुणेंवि कुद्धेंहिँ जय-जस-लुद्धेंहिँ कइकद्ध-अपराजिय-सुएँहिँ ।
बोहि मि बे चावइँ अतुल-पयावइँ अप्फालियइँ स इं भु एँहिँ ॥८॥

अच्छी तरह समझ-बूझकर यदि सीतामें अपनी आसक्ति छोड़ सकें, तो उन्हें मैं तीनखण्ड धरतीका एकाधिकार दूँ (एकच्छत्र शासन), चार ऋद्धियाँ और सात रत्न—सामन्त, मन्त्री, पैदलसेना, रथवर, नरवर, रथ और अश्व। अन्तःपुर परिजन, सगोत्री, पत्नी, बन्धु-बान्धवोंके साथ मैं भी दास हो जाऊँगा ? इसके अतिरिक्त कुशद्वीप, समस्त चोरवाहन, बब्बर चीन, छोहार देश, बर्बर, कुछ यवन, सुवर्णद्वीप, वेलन्धर, हंस और सुवेल द्वीप ले लें। जहाँतक विजयार्ध पर्वत है, वहाँ तकके प्रदेश वह ले सकते हैं, केवल तीन चीजोंको छोड़कर, रावण, मन्दोदरी और सीता देवी ॥ १–९ ॥

[१५] यह सुनकर अंगद आग-बबूला हो उठा। इन्द्रजीत-को बुरा-भला कहा, "दुष्ट नीच परनिन्दक, दूसरेकी स्त्रीको चाहनेवाली तेरी जीभके सौ टुकड़े क्यों नहीं हो गये ? सीता जिसकी पत्नी है, वह यदि उसे वापस नहीं मिलती, तो राम के रहते, तुम्हारा जीवित रहना असम्भव है। जो दूसरोंको सैकड़ों अपमानोंसे बचाता है, क्या वह स्वयं अपमानित होकर, चुप-चाप बैठा रहेगा ? इसके बाद, अंगदने वे सन्देश भी कह सुनाये जो लक्ष्मण, विभीषण, सुग्रीव और हनुमान एवं भामण्डलने दिये थे। अंगद वापस राम-लक्ष्मणके पास आ गया। उसने बताया, हे देव ! रावण सन्धि नहीं करना चाहता, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार 'अमी' शब्दके ईकारकी स्वरके साथ सन्धि नहीं होती !" ॥ १–७ ॥

अंगदकी बात सुनकर जय और यशके लोभी कैकेयी और अपराजिताके पुत्र राम एवं लक्ष्मण सहसा गुस्सेसे भर उठे। दोनोंने अपने अतुल प्रतापी धनुष चढ़ा लिये ॥८॥

●

[५९. एकुणसट्ठिमो संधि]

हणुवागमणें परोप्परु कुद्धइँ जय-सिरि-रामालिङ्गण-लुद्धइँ।
किय-कलयलइँ समुब्भिय-चिन्धइँ रावण-राम-बलइँ सण्णद्धइँ॥

(ध्रुवकम्)

[१]

गऍ अक्खय-कुमारें उग्गिण्ण-चन्दहासो।
सइँ सण्णहेँवि णिग्गओ सरहसो दसासो॥ १ (हेलादुवई)
धुरे अक्कलक्खो समारूढ-चयणो। धए वन्धुरो रक्खसो रत्त-णयणो॥२॥
रहे रावणो दुण्णिवारो असज्झो। कयन्तो व्व खयकाल-मच्चूण मज्झे॥३॥
थिर-थोर-भुव-पञ्जरो वियड-वच्छो। सु-भीसावणो भू-लया-भङ्गुरच्छो॥४॥
महा-पलय-कालो व्व कहकहकहन्तो। समुप्पाय-जलणो व्व धगधगधगन्तो॥५॥
समालोयणे सणि व्व मुह-विप्फुरन्तो। फणिन्दो व्व फर-फार-फुक्कार देन्तो॥६॥
गइन्दो व्व सुक्कङ्कुसो गुलगुलन्तो। मइन्दो व्व मेहागमे थरहरन्तो॥७॥
समुद्दो व्व पक्खुहणे मज्जाय-चत्तो। सुरिन्दो व्व बहु-रण-रसुक्किण्ण-गत्तो॥८॥
णहेँ असणि-जलउ व्व घुम्घुम्घुवन्तो। महा-विज्जु-पुञ्जो व्व तडतडतडन्तो॥९॥

(मयणावयारो णाम छन्दो)

घत्ता

अमर-वरङ्गणा-जण-भयावणें सरहसेँ सण्णज्झन्तऍ रावणें।
किङ्कर-साहणु कहि मि न मन्तउ णिग्गउ पुर-पओलि भेल्लन्तउ॥१०॥

उनसठवीं सन्धि

दूतके इस प्रकार वापस होनेपर, जयश्रीके आलिंगनके लोभी, राम और लक्ष्मण, दोनों गुस्सेसे भर उठे। कलकल ध्वनिके बीच राम और रावणकी सेनाएँ तैयार होने लगीं। उनकी पताकाएँ उड़ रही थीं।

[१] कुमार अंगदके जानेपर, रावणने अपनी चन्द्रहास तलवार निकाल ली। कवच पहनकर वह सहर्ष निकल पड़ा। आगे उसके अंग दिखाई दे रहे थे। उसका मुख क्रुद्ध दिखाई दे रहा था। उसकी ध्वजोंपर, सुन्दर लाल-लाल आँखवाले निशाचर अंकित थे। असाध्य रथपर बैठा हुआ रावण ऐसा दिखाई देता था, मानो क्षयकाल और मृत्युके बीच यमराज हो। उसका शरीर स्थूल और दृढ़ भुजाओंवाला था। विशाल वक्षवाला रावण अत्यन्त भीषण लग रहा था। भौंहोंसे उसकी आँखें भयानक लग रही थीं। महाप्रलय कालकी भाँति वह कहकहा लगा रहा था। प्रलयाग्निकी भाँति वह धकधका रहा था। देखनेमें उसका मुख शनिकी भाँति तमतमा रहा था। नागराजकी भाँति, वह अपनी फूत्कार छोड़ रहा था। अंकुश विहीन हाथीकी भाँति वह गरज रहा था। बादल आनेपर, सिंहकी तरह दहाड़ रहा था। कृष्णपक्षकी समाप्ति होनेपर, समुद्रकी भाँति वह एकदम मर्यादाहीन हो रहा था। इन्द्रकी तरह, उसका शरीर कई युद्धोंकी चाहसे रोमांचित हो रहा था। आकाश में, वज्रज्वालाकी भाँति, वह धू-धू कर रहा था, बिजलियोंके महापुंजकी भाँति तड़तड़ा रहा था। देवताओंके अंगनाजनको सतानेवाला रावण जब इस प्रकार युद्धके लिए स्वयं सजने लगा तो उसके अनुचर सैनिक फूले नहीं समाये। नगर और गलियोंमें रेल-पेल मचाते हुए चल पड़े॥ १-१०॥

[२]

के वि जय-जस-लुद्ध सण्णद्ध वद्ध-कोहा ।
के वि सुमित्त-पुत्त-सुकलत्त-चत्त-मोहा ॥१॥ (हेलादुवई)

के वि णीसरन्ति वीर । भूधर व्व तुङ्ग धीर ॥२॥
सायर व्व अप्पमाण । कुञ्जर व्व दिण्ण-दाण ॥३॥
केसरि व्व उद्ध-केस । चत्त-सव्व-जीवियास ॥४॥
के वि सामि-भत्ति-वन्त । मच्छरग्गि-पज्जलन्त ॥५॥
के वि आहवे असङ्क । कुङ्कुम-प्पसाहियङ्क ॥६॥
के वि सूर साहिमाणि । सत्ति-सूल-चक्क-पाणि ॥७॥
के वि गीढ-वारुणत्थ । तोण-वाण-चाव-हत्थ ॥८॥
कुद्ध जुद्ध-लुद्ध के वि । णिग्गया सु-सण्णहेवि ॥९॥
(तोमरो णाम छन्दो)

घत्ता

को वि पधाइउ हणु-हणु-सद्दें परिहइ कवउ को वि आणन्दें ।
रण-रसियहों रोमञ्चुब्भिण्णहों उरें सण्णाहु ण माइउ अण्णहों ॥१०॥

[३]

पभणइ का वि कन्त 'करि-कुम्भें उच्चडाइं ।
मुत्ताहलइं लेवि महु देज्ज तेत्तडाइं ॥१॥ (हेलादुवई)

का वि कन्त चिन्धइं अप्पाहइ । का वि कन्त णिय-कन्तु पसाहइ ॥२॥
का वि कन्त मुह-पंसि करावइ । का वि कन्त दप्पणु दरिसावइ ॥३॥
का वि कन्त पिय-णयणइँ अञ्जइ । का वि कन्त रण-तिलउ पउञ्जइ ॥४॥
का वि कन्त स-वियारउ जम्पइ । का वि कन्त तम्बोलु समप्पइ ॥५॥
का वि कन्त बिम्बाहरें लग्गइ । का वि कन्त आलिङ्गणु मग्गइ ॥६॥

[२] जय और यशके लोभी कितने ही निर्दय सैनिक, गुस्सेसे भरकर तैयार होने लगे। कितनोंने अपने अच्छे मित्रों, पुत्र और पत्नियोंका मोह छोड़ दिया।

पहाड़की भाँति ऊँचे और धीर कितने ही योद्धा निकल पड़े। वे समुद्रकी तरह अप्रमेय थे और हाथीकी भाँति दान देनेवाले। उनके केश, सिंहकी अयालकी भाँति चढ़े हुए थे। ये सब जीवनकी आशा छोड़ चुके थे। स्वामीकी भक्तिसे परिपूर्ण वे ईर्ष्याकी आगमें जल रहे थे। अनेक युद्धोंमें अजेय कितनोंके शरीर केशरसे प्रसाधित थे। अपने प्रणको साधनेवाले कितने ही योद्धाओंके हाथमें शक्ति, त्रिशूल और चक्र था। किसीने वरुणास्त्र ले रखा था। किसीके हाथमें तीर तरकश और धनुष था। कितने ही क्रुद्ध एवं युद्धके लोभी योधा सन्नद्ध होकर निकल पड़े। कोई 'मारो मारो' कहता हुआ दौड़ पड़ा। कोई योद्धा आनन्दके मारे अपना कवच ही छोड़े दे रहा था। वीररससे भरपूर, एक दूसरा योद्धा इतना रोमांचित हो उठा कि उसके शरीरपर कवच नहीं समा पा रहा था ॥१-१०॥

[३] किसीकी पत्नी कह रही थी, "देखो हाथीके सिरमें जितने मोती हों, वे सब मुझे लाकर देना।" कोई पत्नी अपने पतिको वस्त्रसे ढक रही थी, कोई पत्नी अपने पतिका शृंगार कर रही थी। कोई कान्ता मुखराग लगा रही थी, कोई दर्पणमें मुख दिखा रही थी। कोई कान्ता अपने प्रियके नेत्रोंको आँज रही थी। कोई कान्ता अपने प्रियके भालपर युद्धका तिलक निकाल रही थी। कोई कान्ता विकारग्रस्त होकर कुछ कह रही थी। कोई कान्ता पान समर्पित कर रही थी। कोई कान्ता अपने प्रियके ओठोंको चूम रही थी, और कोई अपने

का वि कन्त ण गणेइ णिवारिउ । सुरयारम्भु करेइ णिरारिउ ॥७॥
का वि कन्त सिरेँ बन्धइ फुल्लइँ । वत्थइँ परिहावेइ अमुल्लइँ ॥८॥
का वि कन्त आहरणइँ ढोयइ । का वि कन्त पर-मुहु जेँ पलोयइ ॥९॥
(मत्तमायङ्गो णाम छन्दो)

घत्ता

कहेँ वि अणेँ रामा ढुक्कें ण माइउ पिय-रणवहुयएँ सहुँ ईसालुउ ।
'जइ तुहुँ तहेँ अणुराइउ वट्टहि तो महु णह-वय देवि पयट्टहि' ॥१०॥

[४]

पभणइ को वि वीरु 'जइ धावहि एव भडज्जे ।
तो वरि ताहँ देमि जा जुत्तु सामि-कज्जे' ॥१॥ (हेलादुवई)
को वि भणइ 'णाय-गण्ड वलग्गइँ । आणमि मुत्ताहलइँ पवरग्गइँ' ॥२॥
को वि भणइ 'ण विलेमि पसाहणु । जाम ण भञ्जमि रावण-साहणु ॥३॥
को वि भणइ 'मुह-ससि ण णियच्छमि । जाम ण सुहड-सहक्क पडिच्छमि ॥४॥
को वि भणइ 'ण णिहालमि दप्पणु । जाम्व ण रणेँ विणिवाइउ लक्खणु ॥५॥
को वि भणइ 'णउ णयणइँ अञ्जमि । जाम्व ण सुरवइ-जण-मणु रञ्जमि' ॥६॥
को वि भणइ 'मुहँ पाणु ण लायमि । जाम्व ण रुण्ड-णिवहु णच्चावमि' ॥७॥
को वि भणइ 'णउ सुरउ समाणमि । जाम्व ण भडहुँ कुम्भ-त्थल आणमि' ॥८॥
को वि भणइ 'धणेँ फुल्ल ण बन्धमि । जाम्व ण सरवर-धोरणि सन्धमि' ॥९॥
(रयडा णाम छन्दो)

घत्ता

को वि भणइ 'धणेँ णउ आलिङ्गमि जाम्व ण दन्ति-दन्तेँ आलग्गमि' ।
को वि करइ णिवित्ति आहरणहोँ जाम्व ण दिण्ण सीय दहवयणहोँ ॥१०॥

प्रियसे आलिंगन माँग रही थी। कोई कान्ता मना करनेपर भी नहीं मान रही थी और निराकुल होकर, सुरतिकी तैयारी कर रही थी। कोई कान्ता अपने सिरमें फूल खोंस रही थी। और अमूल्य वस्त्र पहन रही थी। कोई कान्ता गहने दो रही थी। कोई कान्ता दूसरेका मुख देख रही थी। किसी कान्ताके अंगोंमें क्रोध नहीं समा रहा था, प्रियकी रणवधूके प्रति ईर्ष्यासे भरकर बोली, "यदि तुम्हें युद्धलक्ष्मीसे इतना अनुराग है तो मुझे मरणव्रत देकर ही जा सकते हो" ॥ १-१० ॥

[४] कोई वीर योद्धा अपनी पत्नीसे बोला, "यदि कहती हो कि मैं यों ही नष्ट हो जाऊँ, तो उससे अच्छा तो यही है कि मैं स्वामी के काजके लिए अपने प्राणोंका उत्सर्ग करूँ। कोई एक और योद्धा बोला, "गण्डस्थलों और ध्वजाग्रोंमें लगे हुए मोती लाऊँगा।" कोई बोला, "मैं तब तक प्रसाधन ग्रहण नहीं करूँगा कि जबतक रावणकी सेनाको नष्ट नहीं करता।" कोई कहने लगा, "जब तक मैं सुभटोंकी चपेटमें सफल नहीं उतरता मैं अंगराग पसन्द नहीं करूँगा।" कोई बोला, "मैं तबतक दर्पणमें मुख नहीं देखूँगा कि जबतक अपनी वीरताका प्रदर्शन नहीं कर लेता। किसी एकने कहा, "मैं तबतक अपनी आँखोंमें अञ्जन नहीं लगाऊँगा कि जबतक सुरवधुओंके नेत्रोंका रंजन नहीं करता!" एक और योद्धाने कहा, "जबतक मैं योद्धाओंके धड़ोंको नहीं नचाता, मैं अपने मुखमें पान नहीं रखूँगा।" एक बोला, "मैं सुरतिक्रीड़ाका सम्मान तबतक नहीं कर सकता कि जबतक योद्धाओंके कुलोंको मौतके घाट नहीं उतार देता।" कोई योद्धा कह रहा था, "धन्ये! मैं तबतक फूल नहीं बाँधूँगा कि जबतक उत्तम वीरोंकी कतार नहीं बाँध देता!" एक योद्धाने कहा, "मैं तुम्हारा आलिंगन तबतक नहीं

[५]

गरुअ-पओहराएँ अवन्त-गेहिणीए ।

रणेँ पइसन्तु को वि सिक्खविउ गेहिणीए ॥१॥ (हेलादुवई)

'णाह णाह समरङ्गण-काले । तूर-भेरि-दडि-सङ्ख-वमाले ॥२॥

उत्थरन्त-वर-वीर-समुद्दे । सीह-णाय-णर-णाय-रउद्दे ॥३॥

मत्त-हत्थि-गलगज्जिय-सद्दे । अब्भिडिज्ज पर राहवचन्दें' ॥४॥

का वि णारि परिहासइ एमं । 'सेम जुज्झु णउ लज्जमि जेमं' ॥५॥

का वि णारि पडिचोहइ णाहं । 'मग्गमाणेँ पइँ जीवमि णाहं' ॥६॥

का वि णारि पडिचुम्बणु देइ । को वि वीरु अवरुण्डि करेइ ॥७॥

कन्तेँ कन्तेँ मइँ सण्णह लएवी । अज्ज वि कत्ति-वहुअ चुम्बेवी' ॥८॥

का वि णाहेँ णवकारु करेइ । को वि वीरु रण-दिक्ख लएइ ॥९॥

(परिपन्दियं णाम छन्दो)

घत्ता

ताम्व भयङ्करु विप्फुरियाणणु पवर-विमाणु तिसूल-पहरणु ।

णिग्गउ कुम्भयण्णु मणेँ कुइयउ णहयलेँ धूमकेउ णं उइयउ ॥१०॥

[६]

णिग्गएँ कुम्भयण्णेँ मारीइ-महव्वला ।

जम्बव-जम्बुमालि-बीभच्छ-वज्जोयरा ॥१॥ (हेलादुवई)

धरणिन्धर-कुब्बर-वज्जधरा । खल-खुद्द-विन्द-खयकाल-करा ॥२॥

जय-दुज्जय-दुद्धर-दुद्दरिसा । दुद्दुम्मुह-दुम्मुह-दुम्मरिसा ॥३॥

कर सकता कि जबतक हाथीकी खीसोंसे भिड़कर लड़ नहीं लेता।" एक योद्धाने अपने समस्त अलंकार तबतकके लिए उतार दिये कि जबतक वह रावणसे सीतादेवीका उद्धार नहीं कर लेगा" ॥ १-१० ॥

[५] पीन पयोधरा और स्नेहमयी कोई एक गृहिणी, युद्धोन्मुख अपने प्रियको सीख दे रही थी,

"युद्धमें तुम रामके लिए अवश्य संघर्ष करना। असमय नगाड़ों, भेरी, दड़ि और शंखोंकी ध्वनि हो रही होगी। श्रेष्ठ वीरोंका समुद्र उछल रहा होगा। सिंहनाद और नरहुंकारसे भयंकर, उस युद्धमें मतवाले हाथियोंकी गर्जना हो रही होगी। राघवचन्द्र निश्चय ही शत्रुसे भिड़ जाँयगे।" कोई नारी कह रही थी, "इस प्रकार लड़ना जिससे मैं लजाई न जाऊँ"। कोई स्त्री अपने प्रियको समझा रही थी, "तुम्हारे नष्ट होनेपर मैं जीवित नहीं रहूँगी।" कोई स्त्री प्रतिचुम्बन दे रही थी और कोई वीर, उसकी उपेक्षा कर रहा था", वह कह रहा था, "हे प्रिये, मैं बलपूर्वक कीर्तिवधूको चूमूँगा।" कोई अपने प्रियको नमस्कार कर रही थी और कोई वीर सामन्त युद्धकी दीक्षा ले रहा था"। इसी बीच, कुम्भकर्ण क्रोधसे तमतमाता हुआ निकला, वह एक भारी विमानमें बैठा था, और त्रिशूल अस्त्र उसके पास था। ऐसा लगता था मानो आकाशमें धूमकेतु उग आया हो" ॥१-१०॥

[६] कुम्भकर्णके निकलते ही, मारी और माल्यवन्त भी निकल आये। भयानक और वक्र नेत्रवाले जाम्बवन्त और जम्बूमाली भी निकल आये। दुष्ट और क्षुद्रोंके समूहके लिए प्रलयंकर, धरणीधर कूबर और वज्रधर भी निकल आये। जयमें दुर्जेय दुर्द्धर और देखनेमें डरावने, दुर्मगमुख दुर्मुख और

दुरियागण-दुस्सर-दुव्विसहा । ससि-सूर-मकर-कुरूर-गहा ॥४॥
सुभसारण-सुन्द-णिसुन्द-गया । करि-कुम्भ-णिसुम्भ-वियम्भ-मया ॥५॥
सिव-सम्भु-सयम्भु-णिसुम्भ-चिहू । पिहु आसण-पिअर-पिङ्ग वि हू ॥६॥
कलुमाल-कराल-तमाल-तमा । जमघण्ट-सिही-जमदण्ड-समा ॥७॥
जमणाय-समुग्गणिणाय-लुली । हल-हाल-हलावह-हेल-हुली ॥८॥
मयरङ्क-ससङ्क-मियङ्क-रवी । [illegible]णि-पण्णय-णक्खय-सक्क-हवी ॥९॥

(तोडको णाम छन्दो)

घत्ता

सोहणियम्ब-पलम्ब-भुवङ्गल वीर गहीर-णिणाय महब्बल ।
एक्कमाइ सण्णहेंवि विणिग्गय पञ्चाणण-रह पञ्चाणण-धय ॥१०॥

[७]

धुन्धुद्दाम-धूम-धूमक्ख-धूमवेया ।
खिंखिडम-डमर-डिण्डिरह-चण्डि-चण्डवेया ॥१॥ (इल्लादुवई)
सवित्थ-उत्थ-लम्बरा । जमक्ख-डाहडम्बरा ॥२॥
सिहण्डि पिण्डि-पण्डवा । विलण्डि-तुण्ड-मण्डवा ॥३॥
पचण्ड-कुण्डमण्डला । कवोल-कण्ण-कुण्डला ॥४॥
मयाल-मोल-भुम्भला । विसालवक्खु-कोहला ॥५॥
कियन्त-डक्क-डण्डरा । कराल-चूल-सेहरा ॥६॥
चकोर-चारु-चारणा । सिलिन्ध-गन्धवारणा ॥७॥
पियङ्ग-णिङ्ग-सोहया । णिरीह-विज्जुजीहया ॥८॥
सुमालि-मालु-भीसणा । दुरन्त-दुद्दरीसणा ॥९॥

(णाराउ णाम छन्दो)

घत्ता

वज्जोयर-विवज्जोयर-चक्कल असणिणिघोस-हुल-हालाहल ।
इय णरवइ सण्णद्ध समुण्णय वग्ध-महारह वग्ध-महाधय ॥१०॥

दुर्मर्ष भी निकल आये। दुरितानन दुर्गन्ध्य और असह्य, चन्द्रमा सूर्य मकर और कुरूर ग्रह भी निकल आये। हाथियोंकी सूडों-को कुचलनेसे भयंकर, सुत सारण सुन्द और निसुन्द भी गये। शिव शम्भु स्वयंभु और विसुम्भ भी। पिहु आसण पिंजर और पिंग भी। कटुकालके समान भयंकर, तमालके समान श्याम, यम घण्ट आग और यमदण्डके समान भी। यमनादसे उत्पन्न निनादको भी मात देनेवाले हल हाल हलायुध और हुली। मयंक शशांक मियंक रवि; फणी पन्नग णक्किय शक्र और हविने कूच किया। सिंहके समान नितम्बोंवाले अर्गलाके समान विशाल बाहु, वीर गम्भीर नादवाले और महाबली, ऐसे वे वीर तैयार होकर निकल पड़े। उनके रथोंमें सिंह जुते हुए थे और ध्वजों पर भी सिंह अंकित थे ॥ १-१० ॥

[७] धुंधुधाम, धूम्र, धूम्राक्ष, धूम्रवेग, डिण्डिम, डमर, डिण्डिरथ, चण्डि, चण्डवेग, डवित्थ, डित्थ, डम्बर, यमाक्ष, डाहडम्बर, शिखण्डी, पिण्डि, पण्डय, वितण्ड, तुण्ड, भण्डव, प्रचण्ड, कुण्ड, मण्डल, कपोलकर्ण, कुण्डल, भयाल, भोल, भुम्भल, विशालचक्षु, कोहल, कृतान्त, दक्ष, ढण्ढर, कपालचूर्ण, शेखर, चकोर, चारुचारण, शैलिन्ध्र, गंधवारण, प्रियार्क, णिक्क, सीहय, निरीह, विद्युत्जिह्वा, सुमालि, मृत्युभीषण, दुरन्त, दुर्दशन आदि राजा भी निकल पड़े। वज्रोदर, विकटोदर, घंधल, अशनिनिर्घोष, हूल, हालाहल आदि राजा भी तैयार हो गये। इनके रथोंमें बाघ जुते हुए थे और उनकी ध्वजाओंमें भी बाघ अंकित थे ॥१-१०॥

[८]

मदुमह-अक्कइंसि-सम्भूल-सीहणाया ।
पञ्चल-चञ्चल-चवल-चल-लोल-भीमकाया ॥१॥ (हेलादुवई)

हत्थ-विहत्थ-पहत्थ-महत्था । सुत्थ-सुहत्थ-सुमत्थ-पसत्था ॥२॥
दारुण-रुद्द-रउद्द-णिघोरा । हंस-पहंस-किरीडि-किसोरा ॥३॥
मन्दिर-मन्दर-मेरु-मयरत्था । गन्धविमद्दण-रुक्ख-विहत्था ॥४॥
अण्ण-महण्णव-गण्ण-विगण्णा । धीरिय-धीर-धुरन्धर-कण्णा ॥५॥
भीम-भयाणय-भीमणिणाया । कद्दम-कोव-कयम्ब-कसाया ॥६॥
कञ्चण-कोञ्च-विकोञ्च-पचिपा । कोमल-कोन्तल-चित्त-विचित्ता ॥७॥
माहव-माहु-महोअर-मेहा । पावण-वायव-वारुण-देहा ॥८॥
सीहवियम्भिय-कुञ्जरलीला । विब्भम-हंसविलास-सुसीला ॥९॥

(दोद्धकं णाम छन्दो)

घत्ता

सल्हण-कहलोवहास-उल्लावण, पत्त-पमत्त-सत्तुसन्तावण ।
एम्व णराहिव अण्ण वि णिग्गय । हत्थि-महारह हत्थि-महाधय ॥१०॥

[९]

सङ्क-पसङ्क-रत्त-णिप्पङ्कअण-पहङ्का ।
पुक्खर-पुप्फचूड-घण्टाडह-पिसङ्का ॥१॥ (हेलादुवई)

पुप्फासवाण-पुप्फसयरा । फुल्लोअर-फुल्लन्धुअ-भमरा ॥२॥
वम्मह-कुसुमाउह-कुसुमसरा । मयरद्धय-मयरद्धयपसरा ॥३॥
मयणाणल-मयणारिसि-सुसमा । वरकामावत्थ-कामकुसुमा ॥४॥
मयणोदय-मयणोयर-अमया । एए तुरङ्ग-रह सुरय-वया ॥५॥
अवरे वि के वि मिग-सवरेहिं । घिस-मेस-महिस-खर-सूअरेहिं ॥६॥
ससहर-सल्लकइ-विसहरेहिं । सुंसुअर-मयर-मच्छोहरेहिं ॥७॥
अवरे वि के वि गिरि-रुक्ख-धरा । रवि-वारुण-वायव-सक्क-करा ॥८॥

[८] मधुमय, अर्ककीर्ति, शार्दूल, सिंहनाद, चंचल, चंडुल, चपल, चल, चोल, भीमकाय, हस्त, विहस्त, प्रहस्त, महस्त, सुस्त, सुहस्त, सुमत्त, प्रशस्त, दारुण, रुद्र, रौद्र, णिघोर, हंस, प्रहंस, किरीटी, किशोर, मन्दिर, मंदर, मेरु, मयस्त्र, गन्ध, विमर्दन, रुच्छ, विहस्त, अन्य, महार्णव, गण्य, विगण्य, धोरिय, धीर, धुरन्धर, धन्य, भीम, भयानक, भीमविनाद, कर्दम, कोप, कदम्ब, कषाय, कंचन, क्रौंच, विक्रौंच, पवित्र, कोमल, कान्त, चित्र, विचित्र, माधव, माह, महोदर, मेघ, पादप, बादप, चारुणदेह, सिंहविचंभित, कुंजरलीला, विभ्रम, हंस-विलास, सुशील आदि राजा भी निकल पड़े। मल्हण, लहल्लोल्लास, उल्हावण, पत्त, प्रमत्त, शत्रु-सन्तापन आदि तथा दूसरे राजा भी निकल पड़े। उनके महारथोंमें हाथी थे और पताकाओंमें भी हाथी ही अंकित थे ॥१-१०॥

[९] शंख, प्रशंख, रक्त, भिन्नांजन, प्रभांग, पुष्कर, पुष्पचूड, घण्टायुध, प्रभांग, पुष्पश्रवण, पुष्पाक्षर, पुष्पोदर, पुष्पध्वज, भ्रमर, वम्मह, कुसुमायुध, कुसुमसर, मकरध्वज, मकरध्वजप्रसर, मदनानल, मदनराशि, सुषमा, वरकामावस्था, कामकुसुम, मदनोदय, मदनोदर, अमय ये राजा अश्वरथों पर थे, और इनकी पताकाओंपर भी, अश्व अंकित थे। अन्य राजा मृगों, साभरों, वृषभ, मेष, महिष, खर और सूअरों, शशधर, शल्यक, विषधरों, सुंसुमार, मकर और मत्स्यधरोंपर, चल पड़े। और दूसरे राजा, अपने हाथोंमें पहाड़ों और वृक्ष, आग, वारुण,

खणन्तरें भड-कडमद्दणाहुँ । णीसरियउ दहमुह-णन्दणाहुँ ॥९॥

(पद्धडिया णाम छन्दो)

घत्ता

रहसुच्छलियहुँ रणें रसियहुँ, रक्खस-धयहुँ विमाणारूढहुँ ।

इन्दइ-घणवाहण-मुह-सारहुँ । पञ्च-अद्ध-कोडिउ कुमारहुँ ॥१०॥

[१०]

गय रण-भूमि जा[म] रक्खियइँ वाहणाइं ।

थिउ बलु बिण्णेवि पञ्चास-जोयणाइं ॥१॥ (हेलादुवई)

विमाणं विमाणेण छत्तेण छत्तं । धयग्गं धयग्गेण चिन्धेण चिन्धं ॥२॥

गइन्दो गइन्देण सीहेण सीहो । तुरङ्गो तुरङ्गेण वग्घेण वग्घो ॥३॥

जणाणन्दणो सन्दणो सन्दणेणं । णरिन्दो णरिन्देण जोहेण जोहो ॥४॥

तिसूलं तिसूलेण खग्गेण खग्गं । बले एक्कमण्णोण्ण-घट्टिज्जमाणे ॥५॥

कहिं मि पएसे विसूरन्ति सूरा । रणङ्के चिरङ्के थिरा वीर-लच्छी ॥६॥

कहिं मि पएसे विमाणेहिं छन्नं । सया सूरकन्तेहिं जाणन्ति अण्णं ॥७॥

कहिं मि पएसे सुणासेहि भग्गा । गइन्दाण कण्णेहिं पावन्ति वायं ॥८॥

सहस्साइँ चत्तारि अक्खोहणीहिं । बले जत्थ तं वण्णिउं कस्स सत्ती ॥९॥

(भुअङ्गप्पयाओ णाम छन्दो)

घत्ता

हत्थ-पहत्थ ठवेप्पिणु अग्गएँ, रावणु देइ दिट्ठि णिय-खग्गएँ ।

णं खय-कालु जगहों आरूसेँ वि । थिउ सङ्गाम-भूमि सइँ भूसेँवि ॥१०॥

शायध एवं वज्र लिये हुए थे। इसी बीचमें योद्धाओंको चकनाचूर कर देनेवाले रावणके पुत्रोंके रथ निकले। वे युद्धमें हर्षसे उछल रहे थे। विमानोंमें बैठे थे, ध्वजोंपर राक्षस अंकित थे। इन्द्रजीत मेघ-वाहन आदि ढाई करोड़ श्रेष्ठ पुत्र थे ॥१-१०॥

[१०] युद्धिभूमिमें पहुँचकर रथ खचाखच भर गये। सेना पचास योजनके विस्तारमें फैलकर ठहर गयी। विमानसे विमान, छत्रसे छत्र, ध्वजाग्रसे ध्वजाग्र, चिह्नसे चिह्न, गजेन्द्रसे गजेन्द्र, सिंहसे सिंह, अश्वसे अश्व, बाघसे बाघ, जनानन्ददायक रथसे रथ, नरेन्द्रसे नरेन्द्र, योद्धासे योद्धा, त्रिशूलसे त्रिशूल, खड्गसे खड्ग, इस प्रकार सेनासे सेना भिड़ गयी। किसी प्रदेशमें शूरवीर विसूर रहे थे। बहुत समय तक चलनेवाले उस युद्धमें वीर लक्ष्मी ऐसी जान पड़ रही थी, मानो वह नित्य या शाश्वत हो। किन्हीं भागोंमें रथोंके अभावसे इतना अँधेरा हो गया था कि योद्धा सूर्यकान्त मणियोंकी सहायतासे दूसरेको देख पाते थे। जिस सेनामें चार हजार अक्षौहिणी सेनाएँ हों, भला किसकी शक्ति है कि उसका समूचा वर्णन कर सके ॥ १-९ ॥

रावणने, हस्त और प्रहस्तको आगे कर, अपनी दृष्टि तलवार पर डाली। वह ऐसा लग रहा था, मानो क्षयकाल ही जगत से रुष्ट होकर युद्धभूमि में आकर स्थित हो गया हो ॥१०॥

●

[६०. सट्ठिमो संधि]

पर-बलें दिट्ठऍ राहवचन्दु पयट्टउ।
अइ-रण-रहसेँण उरें सण्णाहु विसट्टउ॥

[१]

सो राहवेँ पहरण-हत्थाए। हणुवन्त-णिद्दलण-समत्थाए॥ १॥
दीहर-मेहल-गुप्पन्ताए। चन्दण-कद्दम-खुप्पन्ताए॥ २॥
विच्छोइय-मणहर-कन्ताए। किय-माया-सुग्गीवन्ताए॥ ३॥
रण-रहसुद्धूसिय-गत्ताए। अप्फालिय-वज्जावत्ताए॥ ४॥
आवीलिय-तोणा-जुयलाए। किङ्किणि-कलयल-चल-मुहलाए॥ ५॥
कङ्कण-णिबद्ध-कर-कमलाए। सिरिवच्छुण्णय-वच्छयलाए॥ ६॥
कुण्डल-मण्डिय-गण्डयलाए। चूडामणि-चुम्बिय-भालाए॥ ७॥
मासल-फुल्लिआहल-णयणाए। रत्तुप्पल-सण्णिह-णयणाए॥ ८॥
जं सेण्ण-सणाहऍ दिट्ठाए। तं लक्खणे वि आरुट्ठाए॥ ९॥
(मागधप्रस्थिका णाम छन्दो)

घत्ता

कसि पलित्तउ अणुहरमाणु हुआसहों।
णाइँ समुट्ठिउ मत्थासूलु दसासहों॥ १०॥

[२]

सो जणयतणय-आणन्दयरु। सीहोयर-माण-मरट्ट-हरु॥ १॥
कल्लाणमाल-दंसण-पसरु। विञ्झाहिव-विक्कम-मलण-करु॥ २॥
वणमालालिङ्गिय-वच्छयलु। जियपउम-माण-पङ्कय-मसलु॥ ३॥
अरिदमण-पराइय-सत्ति-धरु। कुलभूसण-मुणि-उवसग्ग-हरु॥ ४॥
चन्दणहि-तणय-सिर-णिद्दलणु। सूरन्तय-सूरहास-हरणु॥ ५॥

साठवीं सन्धि

शत्रुसेनाको देखकर, राघवने भी युद्धके लिए कूच कर दिया। अतिरणके चावसे, उन्होंने विशेष प्रकारका कवच पहन लिया।

[१] निशाचर राजाओंको कुचलनेमें समर्थ रामने, हथियार अपने हाथमें ले लिये। लम्बी मेखला लगा ली। उनका शरीर चन्दनसे चर्चित था। अपनी सुन्दर कान्तासे वह वियुक्त थे। उन्होंने मायासुग्रीवका अन्त किया था। वीरतासे उनका शरीर रोमांचित हो रहा था। वह अपने वज्रावर्त धनुष को टंकार रहे थे। उनके दोनों तूणीर कसमसा रहे थे। चंचल किंकिणियाँ रुनझुन कर रही थीं। उनके हाथोंमें सुन्दर कंकण बँधा हुआ था। उनका वक्षस्थल उन्नत और विशाल था। गण्डमण्डल कुण्डलोंसे शोभित था, उनके भालको चूड़ामणि चूम रहा था। उनका मुख और ओठ कान्तिसे खिले हुए थे। उनके नेत्र रक्त कमलकी भाँति थे। लक्ष्मणने जब देखा कि सेना तैयार हो चुकी है तो वह भी सहसा आवेशसे भर उठा। आगके समान, वह शीघ्र ही भड़क उठा। उस समय ऐसा लगा, मानो रावणके माथे में दर्द हो उठा हो ॥१-१०॥

[२] लक्ष्मण, जो वज्रकर्णके लिए आनन्ददायक था, और जिसने सिंहोदरका मान गलित किया था, जिसने कल्याण-मालाको दर्शन दिये थे, विन्ध्यराजके पराक्रमको क्षीण किया था, जिसके वक्षने वनमालाका आलिंगन किया था, जो जितपद्माके नामरूपी कमलके लिए भ्रमर था, जिसने राजा अरिदमनकी शक्तिको बात-बातमें झेल लिया था, जिसने कुल-भूषणके उपसर्ग-संकटको टाला था, जिसने चन्द्रनखाके पुत्र

खर-दूसण-तिसिर-सिरन्तयरु । कोडिसिला-कोडि-णिहट्ट-उरु ॥६॥
सो लक्खणु पुलय-विसट्ट-तणु । सण्णज्झइ अमरिस-कुइय-मणु ॥७॥
पुणु रावण-बलु णिज्झाइयउ । णं सयलु जें दिट्ठिएँ माइयउ ॥८॥

(पद्धडिया णाम छन्दो)

घत्ता

जासु किसोअरँ जगु जिगिरोमउ जेत्तिउ ।
तासु विसालहुँ णयणहुँ तं बलु केत्तिउ ॥९॥

[२]

तहिँ तेहएँ अवसरें ण किउ खेउ । सण्णज्झइ सरहसु अञ्जणेउ ॥१॥
जो रणेँ माहिन्दि-महिन्द-घरणु । जो स-रिसि-कण्ण-उवसग्ग-हरणु ॥२॥
जो आसालियहेँ विणास-कालु । जो वज्जाउह-वणेँ जलण-जालु ॥३॥
जो लङ्कासुन्दरि-थण-णिहट्टु । जो णन्दणवण-मद्दण-पवट्टु ॥४॥
जो णिसियर-साहण-सण्णिवाउ जो अक्खकुमार-कयन्तराउ ॥५॥
जो तोयदवाहण-बल-विणासु । जो खण्ड-खण्ड-किय-णागपासु ॥६॥
जो विमुहिय-णिसियर-सामिसालु । जो दहमुह-मन्दिर-पलयकालु ॥७॥
जो जस-लेहडु एक्कल्ल-वीरु । सो मारुइ रोमञ्चिय-सरीरु ॥८॥

(रयडा णाम छन्दो)

घत्ता

पुणु पुणु वग्गइ पेक्खेँवि रावण-साहणु ।
'अज्जु सहत्थएँ करमि कयन्तहों भोअणु' ॥९॥

शम्बुकुमारका सिर काट डाला था, और जिसने वीरोंका संहार करनेवाले सूर्यहास खड्गको अपने वशमें कर लिया था, जिसने खरदूषण और त्रिशिरके सिर काट डाले थे, और जिसने कोटिशिलाको अपने सिरपर उठा लिया था। लक्ष्मणका शरीर रोमांचित हो उठा। वह मन-ही-मन क्रुद्ध हो कर, तैयारी करने लगा। जब वह रावणकी सेनाके बारेमें सोच रहा था तो ऐसा लगा मानो वह अपनी दृष्टिमें उसकी समूची सेनाको माप रहा हो। भला जिस लक्ष्मणके कृशोदरमें समूची दुनिया, एक छोटे-से बीजकी भाँति हो, उसके विशाल नेत्रोंमें रावणकी सेनाको क्या बिसात थी ॥१-९॥

[२] इस अवसरपर उसने भी जरा देर नहीं की, वह तैयार होने लगा। वह हनुमान् जिसने युद्धमें, इन्द्र और वैजयन्त को पकड़ लिया था, वह हनुमान्, जिसने ऋषिसहित कन्याओंके उपसर्गको दूर किया था। जो आशालीविद्याके लिए विनाश काल था, जो वज्रायुधरूपी वनके लिए अग्निज्वाल था। जिसने लंकासुन्दरीके स्तनोंका मर्दन किया था और जिसने नन्दनवनको उजाड़ डाला था, जो राक्षसोंकी सेनाके लिए सन्निपात था, जो अक्षयकुमारके लिए यमराज था, जिसने तोयदवाहनकी सेनाका काम तमाम किया था, जिसने नाग-पाशके टुकड़े-टुकड़े कर दिये थे, जिसने निशाचरोंके स्वामी प्रभु-को विमुख कर दिया था, जो रावणके प्रासादके लिए प्रलय-काल था, यशका लालची जो अकेला वीर था, वह हनुमान् भी सहसा सिहर उठा। रावणकी सेनाको देखकर, वह बार-बार उछल रहा था, और कह रहा था, आज मैं स्वेच्छासे यमराजको भोजन दूँगा ॥१-९॥

[४]

एम भणेवि वीर-चूडामणि । पउमप्पह-विमाणें थिउ पावणि ॥१॥
तहिं अवसरें सुग्गीउ विरुज्झइ । भामण्डलु सरोसु सण्णज्झइ ॥२॥
सज्जियाइँ चउ हंस-विमाणइँ । जिणवर-भवणहों अणुहरमाणइँ ॥३॥
गय-रयाइँ णं सिद्धहँ थाणइँ । मयण-जाणइँ णं कुसुमहों बाणइँ ॥४॥
मन्दर-सेल-सिहर-सच्छायइँ किङ्किणि-घग्घर-घण्टा-णायइँ ॥५॥
अलि-मुहलिय-मुत्ताहल-दामइँ । विज्जु-मेह-रवि-ससिपह-णामइँ ॥६॥
हरि-बलहद्दहुँ वे पट्ठवियइँ । वे अप्पाणहों कारणें थवियइँ ॥७॥
जिणु जयकारेंवि चडिउ विहीसणु । जो भय-भीय-जीव-मम्मीसणु ॥८॥

(मत्तमायङ्गो णाम छन्दो)

घत्ता

पुरउ परिट्ठिय सेण्णहों भय-परिहरणहों ।
णं धुर-धोरिय छ वि समास वायरणहों ॥९॥

[५]

के वि सण्णद्ध समरङ्गणे दुज्जया । के वि भामण्डलाइद्ध-चन्द-द्धया ॥१
के वि सिरि-सङ्ख-आवरिय-कलस-द्धया । के वि कारण्ड-कलहंस-कोञ्च-द्धया ॥२
के वि अच्छिवल-मायङ्ग-सीहद्धया । के वि खर-तुरय-विसमेस-महिस-द्धया
के वि ससि-सरह-सारङ्ग-रिच्छ-द्धया । के वि अहि-णउल-मय-मोर-गरुडद्धया
के वि सिव-साण-गोमाउ-पमय-द्धया । के वि घण-विज्जु-तरु-कमल-कुलिसद्धया

[४] वीरश्रेष्ठ हनुमान , यह कहकर, पद्मप्रभ विमानमें जाकर बैठ गया। इस अवसर पर सुग्रीव भी विरुद्ध हो उठा। रोषसे भरकर भामण्डल भी तैयारी करने लगा। चारों हंस-विमान सजा दिये गये, जो जिनवर-भवनोंके समान थे। वे विमान, सिद्ध-स्थानोंकी तरह, गतरज (पाप और धूलसे रहित) थे, कामदेवके बाणोंकी भाँति, भंगजन (मनुष्योंको विचलित कर देनेवाले) थे। उनके शिखर, पहाड़ोंकी चोटियों-के समान सुन्दर कान्तिमय थे। वे किंकिणी घग्घर और घण्टोंके स्वरोंसे निनादित थे। उसमें जड़ित मुक्तामालाओंको भौंरे चूम रहे थे। उन विमानोंके क्रमशः नाम थे—विद्युत्प्रभ, मेघ-प्रभ, रविप्रभ और शशिप्रभ। पहले दो, विभीषणने राम और लक्ष्मणके लिए भेजे थे, और बाकी दो अपने लिए रख छोड़े थे। जिन भगवान्की जय बोलकर विभीषण विमानपर चढ़ गया, वह विभीषण जो भयभीत लोगोंको अभय प्रदान करनेवाला था। विभीषण, भयहीन सेनाके सम्मुख, ऐसे खड़ा हो गया, मानो व्याकरणके सम्मुख छहों समास आ खड़े हुए हों ॥१-९॥

[५] युद्धमें अजेय कितने ही योद्धा तैयार हो गये। कितने ही योद्धाओंके ध्वजोंपर भामण्डल आदित्य और चन्द्रमा के चिह्न अंकित थे। कितनोंके ध्वजोंपर, श्री और शंखोंसे ढके हुए कलश अंकित थे। कितने ही ध्वजोंपर हंस, कलहंस और क्रौंच पक्षी अंकित थे। किन्हीं पताकाओंपर व्याघ्र, मातंग और सिंह अंकित थे। कितनी ही पताकाओंपर खर, तुरग, विषमेष और महिष अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर शश, सरभ, सारंग और रीछ अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर साँप, नकुल, मृग, मोर और गरुड़ अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर शिव, शाण, शृगाल

के वि सुंसुमार-करि-मयर-मच्छ-धया । के वि णक्कोहर-गाह-कुम्भ-धया ॥६॥
णील-णल-णहुस-रइमन्द-हत्थुब्भवा । जम्बु-जम्बुक्क-अक्कोहि-सव-जम्भवा ॥७॥
पत्थउप्पित्थ-पत्थार-दप्पुद्धरा । पिङ्गल-पिङ्गकाय-भुअङ्ग-उक्कन्धुरा ॥८॥

(मयणावयारो णाम छन्दो)

घत्ता

एए णरवइ गय-सन्दणेहिं परिट्ठिय ।
समुह दसासहों णं उवसग्ग समुट्ठिय ॥९॥

[६]

कुसुमाउत्त-महिन्द-मण्डला । सूरप्पभ-पहञ्ज-भाणुमण्डला ॥१॥
रइवद्धण-सङ्गामचञ्चला । दिढरह-सव्वप्पिय-करालला ॥२॥
मित्तागुरुवर-वग्घसूअणा । एए णरवइ वग्घ-सन्दणा ॥३॥
कुन्द-इन्द-दुप्पेक्ख-रउरवा । अप्पडिहाय-समाहि-महरवा ॥४॥
पियविग्गह-पञ्चमुह-कविमला । विउल-बहल-मयरहर-करयला ॥५॥
पुण्णचन्द-चन्दाणु-चन्दणा । एए णरवइ सीह-सन्दणा ॥६॥
तिलय-तरङ्ग-सुसेण-मणहरा । विसुकण्ण-सम्मेय-महिहरा ॥७॥
अनङ्गय-काल-विकाल-सेहरा । तरल-सील-वलि-वल-पओहरा ॥८॥

(उप्पहासिणी णाम छन्दो)

घत्ता

एए णरवइ मयल वि तुरय-महारह ।
णाइँ मिसिन्दहों कुद्धा कूर महागह ॥९॥

[७]

चन्दमरीचि-चन्द-चन्दोअर-चन्दण-अहिअ-अहिमुहा
गवय-गवक्ख-कुमुअ-दसणावलि-दामुद्दाम-दहिमुहा ॥१॥
संख-हिडिम्ब-चूड-चूडामणि-चूडावल-वत्तणा
कन्त-वसन्त-कीन्त-कोलाहल-कोमुइवयण-वासणा ॥२॥

और चन्द्र अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर घन, बिजली, वृक्ष, कमल और वज्र अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर सुंसुकर, हाथी, मगर और मछली अंकित थीं। किन्हीं पताकाओंमें नक्र, ग्राह और कच्छप अंकित थे। नील नल नहुष रतिमंद हस्ति-उद्भव जम्बु अम्बूक्क अम्भोधि जव जम्बव पत्थक पित्थ प्रस्तार दर्पोद्धर पृथुल पृथुकाय भ्रूभंग और उद्भंगुर। ये राजा गजरथोंमें बैठकर ऐसे आये मानो रावणके सामने संकट ही आ गया हो ॥१-९॥

[६] कुमुदावर्त, महेन्द्रमण्डल, सूरसमप्रभ, भानुमण्डल, रतिवर्धन, संग्रामचंचल, दृढ़रथ, सर्वप्रिय, करामल, मित्रानुद्धर, और व्याघ्रसूदन ये राजे व्याघ्ररथ पर आसीन थे। क्रुद्ध, दुष्ट, दुष्प्रेक्ष्य, रौरव, अप्रतिघात, समाधि भैरव, प्रियविग्रह, पंचमुख, कटितल, विपुल, बहुल, मकरधर, करतल, पुष्प चन्द्र, चन्द्रांशु और चन्दन ये राजे सिंहरथों पर थे। तिलक, तरंग, सुसेन, मनहर, विद्युत्कर्ण, सम्मेद, महीधर, अंगांगद, काल, चिकाल, शेखर, तरल, शील, बलि, बल और पयोधर, ये राजे अश्वरथों वाले थे, ये ऐसे लगते थे मानो कि दुष्ट महाग्रह ही निशाचरों पर क्रुद्ध हो उठे हों॥ १-९॥

[७] चन्द्रमरीची, चन्द्र, चन्द्रोदर, चन्दन, अहित, अभि-मुख, गवय, गवाक्ष, दुक्ख, दशनावली, दामुद्दाम, दधिमुख, ईड, हिडिम्ब, चूड, चूड़ामणि, चूडावर्त, वर्तनी, कन्त, बसन्त,

कणय-कुसुम-कुन्द-इन्दाइह-इन्द-फणिन्द-सुन्दरा
मल्ल-विसल्ल-मल्ल इल्लिर-कल्लोलुल्लोल कुञ्जरा ॥३॥
धामिर-धूमकक्खिय-धूमावलि-धूमावत्त-धूसरा
दूसण-चन्दसेण-दूसालण-दूसल-दुरिय-दुक्करा ॥४॥
दुप्पिय-दुम्मरिसण-दुज्जोहण-तार-सुतार-तासणा
झुरुझुर-ललिय-लुलियकुण्डल-तारावलि-गयासणा ॥५॥
ताराणिलय-तिलय-तिलयावलि-तिलयावत्त-नअणा
अरविहि-वज्जबाहु-मरुबाहु-सुबाहु-सुरिट्ठ-अअणा ॥६॥

(दुवई—कडवयं णाम छन्दो)

घत्ता

एए णरवइ समर-सएहिँ णिव्वूढा ।
चलिय असेस वि पवर-विमाणारूढा ॥७॥

[८]

रहवर-गयवरेहिँ एक्केक्केहिँ । तिहिँ तुरएहिँ पञ्चहिँ पाइक्केहिँ ॥१॥
वुच्चइ पत्ति सेण तिहिँ पत्तिहिँ । सेणामुहु तिहिँ सेणुप्पत्तिहिँ ॥२॥
गुम्मु ति-सेणामुह-अहिणाणेंहिँ । वाहिणि तिहिँ गुम्म-परिमाणेंहिँ ॥३॥
तिहिँ वाहिणिहिँ अण्ण तिहिँ पियणेंहिँ । तं चमु णामु पगासिउ णिउणेंहिँ ॥४॥
तिहिँ चमुहिँ पभणन्ति अणिक्किणि । दसहिँ अणिक्किणीहिँ अक्खोहणि ॥५॥
एवंक्खोहणीहिँ वि सहासइँ । जाइँ भुवणें जिय-णाम-पगासइँ ॥६॥
छउ कोडीउ सत्तीस लक्खइ चालीस सहस रह-गयहुँ सङ्ख ॥७॥
सत्तासी लक्खइ स-मच्छरहुँ वलेँ एक्कवीस कोडिउ णरहुँ ॥८॥

घत्ता

तेरह कोडिउ बारह लक्खइ अहहहुँ ।
वीस सहासइँ इउ परिमाणु तुरङ्गहुँ ॥९॥

कोन्त, कोलाहल, कौमुदीवदन, वामनी, कंजक, कुमुद, इन्द्रायुध, इन्द्र, मतीन्द्र, सुन्दर, शल्य, विशल्य, मल्ल, हुन्निर, कल्लोलुल्लोल, कुवंर, धामिर, धूम्रलक्षी, धूमावली, धूमावर्त, धूसर, दूषण, चन्द्रसेन, दूसासन, दूसल, दुरित, दुष्कर, दुष्प्रिय, द्रुमरिश्र, दुर्योधन, तार, सुतार, तासणा, हुल्लुर, ललित, लुंच, उल्लूरण, तारावली, गद्रासन, तारा, निलय, तिलक तिलकावलि, तिलकावर्त भंजन, जरविंध, वज्रबाहु, मरुबाहु, सुबाहु, सुरिंद्र, अंजन। सैकड़ों युद्धोंका निर्वाह करनेवाले ये राजा और जो बाकी बचे थे वे बड़े-बड़े विमानोंमें बैठकर चल पड़े॥ १-७॥

[८] एक रथवर, एक गजवर, तीन अश्वों और पाँच पैदल सिपाहियोंसे पंक्ति बनती है और तीन पंक्तियोंसे सेना। तीन सेना-पंक्तियोंसे सेनामुख बनता है। तीन सेनामुखोंसे एक गुल्म बनता है, और तीन गुल्मोंसे वाहिनी बनती है। तीन वाहिनियोंसे एक पृतना बनती है, और तीन पृतनाओंसे चमू बनती है। ऐसा पण्डितों ने कहा है। तीन चमुओंसे अनीकिनी बनती है और दस अनीकिनियोंसे एक अक्षौहिणी सेना बनती है। जिसकी एक हजार भी अक्षौहिणी सेनाएँ होती हैं उनका संसारमें नाम चमक जाता है। जिसके पास चार करोड़ सैंतीस लाख चालीस हजार अक्षौहिणी सेनाएँ हों, एक संख्य रथ और गज हों। सेनामें मत्सरसे भरे हुए इक्कीस करोड़ सत्तासी लाख आदमी थे। जिसमें तेरह करोड़ बारह लाख बीस हजार अभंग अश्वों की संख्या थी ॥ १-९॥

[९]

संचल्लें राहव-साहणेण । रोमञ्चुच्चलिय-पसाहणेण ॥१॥
आलाव हुअ हरिसिय-मणाहुँ । गयणङ्गणें सुर-कामिणि-जणाहुँ ॥२॥
एक्कएँ पवुत्तु 'हलें कवणु थिरु । जं सामि-कज्जें ण मएइ सिरु ॥३॥
कवणहिँ चल्लें पवर-विमाणाइँ । कञ्चणगिरि-अणुहरमाणाइँ ॥४॥
कवणहिँ पक्खरिय तुरंग थट्ट । कवणहिँ गुडकुस हत्थि-हड ॥५॥
कवणहिँ सर-धोरणि दुव्विसह । कवणहिँ महिहर-सङ्कास-रह ॥६॥
कवणहिँ सारहि सन्दण-कुसल । कवणहिँ सेणावइ अतुल-बल ॥७॥
कवणहिँ पहरणइँ भयङ्करइँ । कवणहिँ चिन्धाइँ णिरन्तरइँ ॥८॥

घत्ता

कवणु रणङ्गणें वाणहुँ साहउ देसइ ।
रावण-रामहुँ जयसिरि कवणु लएसइ' ॥९॥

[१०]

अण्णेक्कएँ दीहर-णयणियाएँ । पभणिउ पप्फुल्लिय-वयणियाएँ ॥१॥
'हलें वेण्णि मि अतुल-महाबलाइँ । वेण्णि मि परिवड्ढिय-कलयलाइँ ॥२॥
वेण्णि मि कुरुडाइँ स-मच्छराइँ । वेण्णि मि दारुण-पहरण-कराइँ ॥३॥
वेण्णि मि सवडम्मुह किय-गमाइँ । वेण्णि मि पक्खरिय-तुरङ्गमाइँ ॥४॥
वेण्णि मि गलगज्जिय-गयघडाइँ । वेण्णि मि पवणुद्धुअ-धयवडाइँ ॥५॥
वेण्णि मि सज्जोत्तिय-सन्दणाइँ । वेण्णि मि सुर-णयणाणन्दणाइँ ॥६॥
वेण्णि मि सारहि-दुद्दरिसणाइँ । वेण्णि मि सेणावइ-भीसणाइँ ॥७॥
वेण्णि मि छत्तोह-णिरन्तराइँ । वेण्णि मि भड भिउडि-भयङ्कराइँ ॥८॥

घत्ता

वेण्णि मि सेण्णइँ अणुसरिसाइँ महाहवेँ ।
विजउ ण जाणहुँ किं रावणेँ किं राहवेँ' ॥९॥

[९] रामकी सेनाके कूच करते ही, योद्धा रोमांचसे उछल पड़े। आकाशमें प्रसन्नमन देवबालाओंकी आपसमें बातचीत होने लगी। एक ने कहा, 'कौन-सी सेना ठहर सकती है ?' उसका ही उत्तर था, 'वही सेना टिक सकती है, जो स्वामी के लिए अपने सिरको भी कुछ न समझे।' किसीकी सेनामें विशाल विमान थे जो स्वर्णगिरिकी समानता रखते थे। किसी-में कवच पहने हुए अश्वघटा थी। किसीमें अंकुश छोड़ देने वाली हस्तिघटा थी। किसीमें असह्य तीरोंकी माला थी। किसीमें पहाड़की भाँति विशाल रथ थे। किसीके पास रथ-कुशल सारथि थे। किसीमें अतुल बल सेनापति थे। किन्हींके पास भयंकर हथियार थे, और किसीके पास निरन्तक पताकाएँ थीं। कोई युद्धके आँगनमें तीरोंका आलिंगन कर रहा था। देखें, राम और रावणमें, जयश्री पर कौन अधिकार करता है॥ १–६॥

[१०] एक दूसरी विशाल नेत्रवाली देवबालाने कहा, "हे सखी, दोनों ही सेनाएँ अतुल बल रखती हैं, दोनों में कोलाहल बढ़ रहा है। दोनों ही ईर्ष्या से भरी हुई क्रूर हो रही हैं, दोनों के हाथोंमें दारुण अस्त्र हैं। दोनों ही आमने-सामने जा रही हैं। दोनों सेनाओंके अश्व कवच पहने हुए हैं। दोनों में गज-सेनाएँ गरज रही हैं, दोनोंके ध्वजपट पवनमें उड़े जा रहे हैं। दोनोंमें रथ जुते हुए हैं, दोनों ही देवताओंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाले हैं, दोनों ही सारथियोंके कारण दुर्दर्शनीय हैं। दोनों ही सेनापतियोंके कारण भीषण हैं, दोनों ही छत्रोंके समूहसे ढकी हुई हैं, दोनों ही योद्धाओंकी भौंहों से भयंकर हैं। दोनों ही सेनाएँ उस महायुद्धमें एक दूसरेके समान थीं। इसलिए कहना कठिन है कि जीत किसकी होगी रामकी, या रावणकी ॥१–९॥

[११]

तं वयणु सुणेंवि बहु-मच्छराएँ । अण्णाएँ णिरुपच्छिय अच्छराएँ ॥१॥
'जहिँ रण-धुर-धोरिउ कुम्भयण्णु । सहुँ भीमें भीमणिणाउ अण्णु ॥२॥
जहिँ मउ मारीचि सुमालि मालि । जहिँ तोयदवाहणु जम्बुमालि ॥३॥
जहिँ अक्खकित्ति महु मेहणाउ । जहिँ मयरु महोयरु भीमकाउ ॥४॥
जहिँ हत्थु पहत्थु महत्थु वीरु । जहिँ धुम्धुरु धुम्धुक्खासु धीरु ॥५॥
जहिँ सम्भु सयम्भु णिसुम्भु सुम्भु । जहिँ मुण्डु णिमुण्डु णिकुम्भु कुम्भु ॥६॥
जहिँ सीहणियम्बु पलम्बबाहु । जहिँ बिप्फिसु डम्बरु नक्कगाहु ॥७॥
जहिँ जमु जमघण्टु जमग्घु सीहु । जहिँ मलयचन्दु जहिँ विज्जुजीहु ॥८॥

घत्ता

जहिँ सुउ सारणु वज्जोयरु हालाहलु ।
तहिँ रावण-बलें कवणु गहणु राहव-बलु' ॥ ९ ॥

[१२]

तं णिसुणेंवि विप्फुरियाणणाएँ । अवलोकएँ वुत्तु वरङ्गणाएँ ॥१॥
'जहिँ राहउ विडसुग्गीव-महणु । जहिँ गवउ गवक्खु विपक्ख-दहणु ॥२॥
जहिँ लक्खणु खर-दूसण-विणासु । जहिँ भामण्डलु जयसिरि णिवासु ॥३॥
जहिँ अङ्गउ अङ्गु सुसेणु तारु । जहिँ णीलु णहुसु णलु दुण्णिवारु ॥४॥
जहिँ अहिमुहु दहिमुहु मइसमुद्दु । मइकन्तु विराहिउ कुमुउ कुन्दु ॥५॥
जहिँ जम्बउ जम्बव-रयणकेसि । जहिँ कोमुइ-चन्दणु-चन्दरासि ॥६॥
जहिँ मारुइ णन्दणवण-कयन्तु । जहिँ रम्भु महिन्दु विहीस-वन्तु ॥७॥
जहिँ सुहडु विहीसणु सूल-हत्थु । सेणावइ सहुँ सुग्गीउ जेत्थु ॥८॥

घत्ता

तं बलु हलें सहि पुज्जिउ एउ करेसइ ।
रावणु पाडेंवि लङ्क स इं भुञ्जेसइ' ॥९॥

●

[११] यह सुनकर अत्यधिक ईर्ष्यासे भरी हुई एक दूसरी अप्सराने उसे डाँट दिया, "जहाँ युद्धभार उठानेमें अग्रणी, कुम्भकर्ण है, जहाँ भीमनिनादके साथ भीम हैं, जहाँ मय, मारीची, सुमालि, मालि हैं, जहाँ तोयदवाहन जम्बुमालि है, जहाँ अर्ककीर्ति, मधु और मेघनाद हैं, जहाँ मकर और भीमकाय महोदर हैं, जहाँ हस्त-प्रहस्त और महस्त जैसे वीर हैं, जहाँ वीर धुम्धुम और धुम्धुधाम हैं, जहाँ शम्भू, स्वयम्भू निशुम्भ और शुम्भ हैं, जहाँ सुन्द-निसुन्द, निकुम्भ और कुम्भ हैं। जहाँ सिंहनितम्ब, प्रलम्बबाहु, डिण्डिम, डम्बर और नक्रग्राह हैं, जहाँ ग्राहनाद, यमाक्ष और सिंह हैं। जहाँ माल्यवन्त और विद्युत्-जिह्व हैं। जहाँ शुकसारण, पद्मोदर और हालाहल हैं, रावणकी उस सेनामें रामकी सेनाकी क्या पकड़ हो सकती है॥ १–९॥

[१२] यह सुनकर एक और देवांगनाका चेहरा तमतमा उठा। उसने आवेशमें आकर कहा, "जिस सेनामें विट सुग्रीवको मारने वाले राघव हों, जिस सेनामें गवय, गवाक्ष, विपक्ष और वहन हों, जिस सेनामें खरदूषणका नाश करनेवाला लक्ष्मण और जयश्रीका निवास स्वरूप भामण्डल हों, जिस सेनामें अंगद, अंग, सुसेन और तार हों, जिस सेनामें नील, नहुष और दुर्निवार नल हों, जिस सेना में अहिमुख, दधिमुख, मतिसमुद्र, मतिकान्त, विराधित, कुमुद और कुन्द हों, जिस सेनामें जम्बुक, जम्बव, रत्नकेशी हों, जिस सेनामें कौमुदीचन्दन, चन्द्रराशि हों, जिस सेनामें नन्दनवनके लिए कृतान्त हनुमान् हों, जिस सेनामें रम्भ, महेन्द्र और विहीसचन्त हों, जिस सेनामें शूल हाथमें लेकर सुभट विभीषण हों, और जिस सेनामें सुग्रीव स्वयं सेनापति हों, हे सखी, निश्चय ही वह सेना, सिर्फ इतना ही करेगी कि रावणको धराशायी बनाकर लंकाका स्वयं भोग करेगी॥ १–९॥ ●

[६१. एकसट्ठिमो संधि]

जस-लुद्धहुँ अमरिस-कुद्धइँ हय-तूरइँ किय-कलयलइँ ।
अब्भिट्टइँ रहस-विसट्टइँ ताम्व राम-रावण-बलइँ ॥

[१]

वइदेहिहेँ कारणेँ अतुल-बलइँ । अब्भिट्टइँ रावण-राम-बलइँ ॥१॥
णं खुभ-खएँ महियल-गयणायलइँ । सविमाणइँ विज्जुल-वेय-चलइँ ॥२॥
पडु-पडह-भेरि-गम्भीर-सरइँ । अवरोप्परु अहिणव-रोस-भरइँ ॥३॥
सिल-पाहण-तरु-गिरि-गहिय-करइँ । सब्बल-हुलि-हल-करवाल-धरइँ ॥४॥
उग्गामिय-भामिय-भीम-गयइँ । आरालि-गरुअ-गज्जन्त-गयइँ ॥५॥
पडिपेल्लिय-रह-हिंसन्त-हयइँ । धुअ-धवल-छत्त-धुयन्त-धयइँ ॥६॥
साहीण-पाण-परिचत्त-भयइँ । पम्मुक्क-घाय-सङ्घाय-सयइँ ॥७॥
समुहेक्कमेक्क-सन्नद्ध-पयइँ । सयवार-वार-उग्घुट्ठ-जयइँ ॥८॥

घत्ता

स-पयावइँ कड्ढिय-चावइँ सर-सन्धन्त-सुअन्तइँ ।
णं घडियइँ विण्णि वि भिडियइँ पयइँ सुबन्त-तिङन्तइँ ॥९॥

[२]

तहिँ तेहएँ समरङ्गणेँ दारुणेँ । कुङ्कुम-केसुअ-अरविन्दारुणेँ ॥१॥
को वि वीरु णासङ्कइ पाणहुँ । पुणु पुणु अङ्गु समोड्डइ बाणहुँ ॥२॥
को वि वीरु पडिपहरइ पर-बलेँ । पुरउ थाइ पउ देइ ण पच्छलेँ ॥३॥
को वि वीरु असहन्तु रणङ्गणेँ । झम्प देइ पर-णरवर-सन्दणेँ ॥४॥

इकसठवीं सन्धि

तूर्य बज उठे। कलकल होने लगा। यशकी लोभी और अमर्षसे भरी हुई, राम और रावणकी सेनाएँ वेगके साथ एक दूसरेसे जा भिड़ीं।

[१] केवल एक वैदेहीके लिए, राम और रावणकी अतुल बलशाली सेना एक दूसरेसे भिड़ गयी। ऐसा जान पड़ रहा था मानो युगान्तमें धरती और आकाश, दोनों ही आपसमें भिड़ गये हों। सेनाओंके पास बिजलीके वेगवाले विमान थे। पट-पटह और भेरीकी गम्भीर ध्वनि गूँज उठी। आवेशमें सेनाएँ एक दूसरेपर टूट पड़ रही थीं। चट्टानें, पत्थर, पेड़ और पहाड़ उनके हाथमें थे। कुछ सब्बल, हुलिहुल और तलवार लिये थे। कुछ सैनिक विशाल गदा निकालकर उसे घुमा रहे थे। सिंहनाद सुनकर गजमाला गरज रही थी। मुड़ते हुए रथोंके अश्व हिनहिना रहे थे। सफेद छत्र और ध्वज हिल-डुल रहे थे। सैनिक अपने प्राणोंका भय छोड़ चुके थे। घावों और संघर्षकी उन्हें रत्तीभर भी परवाह नहीं थी। वे एक दूसरे के सम्मुख पग बढ़ा रहे थे। इस प्रकार वे सैकड़ों बार अपनी जीत की घोषणा कर चुके थे। दोनों सेनाएँ प्रतापी थीं। दोनों धनुषपर तीर रखकर चला रही थीं। मानो वे आपसमें भिड़नेके लिए ही बनी थीं, ठीक उसी प्रकार, जिसप्रकार शब्दरूप और क्रियारूप, आपसमें मिलनेके लिए निष्पन्न होते हैं॥१-९॥

[२] सचमुच वह भयंकर युद्ध केशर, टेसू और रक्त-कमलकी तरह लाल हो उठा। फिर भी, उसमें कोई भी योद्धा अपने प्राणों की परवाह नहीं कर रहा था। वे बार-बार, तीरों के सम्मुख अपना शरीर कर रहे थे। कोई एक योद्धा उठता

को वि वइरि करेँ धरेँ वि पकड्ढइ । पहरेँ पहरेँ परिओसु पवड्ढइ ॥५॥
को वि सराहउ पढइ विमाणहोँ । णावइ विज्जु-पुञ्जु णिय-थाणहोँ ॥६॥
को वि पइसइ चावेँहिँ पन्तउ । णं गुरुहिँ णरु णरएँ पडन्तउ ॥७॥
को वि दुम्मि-दुम्मेँहिँ आलग्गइ । करगु देवि कोँ वि उवरि वलग्गइ ॥८॥

घत्ता

गउ मारेँवि कुम्भु वियारेँवि जाहँ ताइँ कुम्भुच्छलइँ ।
गुणवन्तहँ पाहुडु कन्तहँ को वि लेइ मुत्ताहलइँ ॥९॥

[३]

हेमुज्जल-दण्ड-वलग्गाइँ । केण वि तोडियइँ धयग्गाइँ ॥१॥
ण समिच्छिउ जेण पियहोँ तणउ । तें रुहिरें कइउ पसाहणउ ॥२॥
मुहवत्ति ण इच्छिय जेण घरेँ । किय तेण सुहड भओँ वि समरेँ ॥३॥
चिरु जेण ण इच्छिउ दप्पणउ । रहेँ तेण णिहालिउ अप्पणउ ॥४॥
मुहेँ पण्णइँ जेण ण लाइयइँ । तें रुण्ड-सयइँ णच्चावियइँ ॥५॥
चिरु जेण ण सुरउ समाणियउ । तें रण-वहुअएँ सहुँ माणियउ ॥६॥
णिय-णारि ण इच्छिय आसि जेंण । आलिङ्गिय गय-घड बहुय तेंण ॥७॥
जो णहइँ ण देन्तउ णिय-पियाएँ । सो फाडिउ समरङ्गण-सियाएँ ॥८॥

और शत्रुपर हमला बोल देता। कोई एक योद्धा जब अपना कदम आगे बढ़ा देता तो पीछे कदम नहीं रखता। एक और योद्धा रण प्रांगणमें सहसा आपेसे बाहर हो उठता और शत्रु-सैन्य-रथों पर कूद पड़ता। कोई एक योद्धा, शत्रुको पकड़कर खींच रहा था। पल-पलमें उसका परितोष बढ़ रहा था। कोई एक योद्धा तीरोंसे आहत होकर जब रथोंपर जाकर गिरता, तो ऐसा लगता कि किसी मकानपर बिजली टूट पड़ी हो। कोई योद्धा तीरोंकी बौछारमें अवरुद्ध हो उठता, मानो आचार्यजीने नरकमें जाते हुए किसी जीवको रोक लिया हो।" किसी एक योद्धाने गजको मारकर, उसके मस्तकको चीर डाला, और उसमें कुन्दके समान स्वच्छ, जितने भी मोती थे, वे सब, अपनी पत्नीको उपहारमें देनेके लिए निकाल लिये ॥ १–९ ॥

[२] किसी एक योद्धाने स्वर्णदण्डमें लगी हुई ध्वजाओंके अगले हिस्सेको फाड़ डाला। जिस योद्धाको अपनी पत्नीका आदर नहीं मिला था, उसने युद्धमें रक्तसे अपना शृंगार कर लिया। जो अपने घरमें मुखपर पत्र रचना नहीं कर सका उसने युद्धमें शत्रुओंको बिछाकर, अपना शौक पूरा किया। जिस योद्धाने बहुत समय तक दर्पण नहीं देखा था, उसने रथमें अपना मुख देख लिया। जिसने अभी तक अपने मुखमें एक भी पान नहीं खाया था, उसने सैकड़ों धड़ोंको, युद्धमें नचा दिया। जिस योद्धाको अभीतक प्रेमक्रीड़ाका अवसर नहीं मिला था, उसने रणवधूके साथ अपनी इच्छा पूरी की। जिस योद्धाने आजतक अपनी स्त्रीकी कामना नहीं की थी, उसने जी भर गजघटाका आलिंगन किया। जो अपनी स्त्रीके लिए नख तक नहीं देता था उसे युद्धभूमिमें आज युद्धवधूने फाड़ डाला।

घत्ता

सम्मा-दाण-रिंग-मरियउ अच्छिउ जो हरन्तु चिह ।
सो रणउहें सुहडु पणच्चिउ सामिहें अग्गएँ देवि सिह ॥९॥

[४]

कहिंचि धीर-मण्डणं सिरोह-देह-खण्डणं ॥१॥
णरिन्द-चिन्द-दारणं तुरङ्ग-मग्ग-वारणं ॥२॥
दिसग्ग-मग्ग सन्दणं । भमन्त-सुण्ण-वारणं ॥३॥
भिडन्त-वीर-णिब्भरं । चवन्त णिट्ठुरं सरं ॥४॥
विमुक्क-चक्क-सब्बलं । तिसूल-सत्ति-सङ्कुलं ॥५॥
अणेय घाय-जज्जरं । पडन्त-बाहु-पञ्जरं ॥६॥
मुअन्त-हक्क-डक्कयं । हणन्त-एक्कमेक्कयं ॥७॥
लुणन्त-अङ्ग-हड्डयं । कुणन्त-खण्डखण्डयं ॥८॥
पडन्त जोह-विब्भलं । ललन्त अन्त-सुम्मलं ॥९॥
गलन्त-लोहिओहयं । मिलन्त-पक्खि जूहयं ॥१०॥
कहिं चि आहया हया । महीयलं गया गया ॥११॥
कहिं जि मासुरा सुरा । पहार-दारुणारुणा ॥१२॥
कहिं चि विद्धया धया । जलोह-भूरिणा धया ॥१३॥

घत्ता

तहिं आहवेँ पउम-भिडन्तउ राहव-साहणु भग्गु किह ।
दिवेँ दिवेँ दुव्वियड्ढहों माणेंण पोढ-विलासिणि सुरउ जिह ॥१४॥

[५]

राहव-बलु रावण-बलेंण भग्गु । णं दुग्गइ-गमणें सुगइ-मग्गु ॥१॥
णं कलि-परिणामें परम-धम्मु । णं घोराचारें मणुअ-जम्मु ॥२॥

सम्मान दान और ऋणके भारसे सन्तुष्ट कोई एक योद्धा अभीतक मन ही मन सोच रहा था वह युद्धके आँगनमें [illegible] साथ कहा कि वह अब अपने स्वामीके लिए अपना सिर दे सकेगा ॥१–९॥

[४] कहीं पर भयंकर संघर्ष मचा हुआ था। सिर, वक्ष और शरीरोंके टुकड़े-टुकड़े हो रहे थे। नरेन्द्र समूहका विदा-रण हो रहा था। अश्वोंका मार्ग रुद्ध हो गया था। दिशाओं के मार्ग रथोंसे पटे पड़े थे। रिक्त हो कर हाथी घूम रहे थे। वीर पूरे वेगसे लड़ रहे थे। अत्यन्त उग्रतासे वे जोर-जोरसे चिल्ला रहे थे। एक दूसरे पर चक्र और सब्बल फेंक रहे थे। त्रिशूल और शक्तियोंसे युद्धस्थल व्याप्त था। योद्धा घावोंसे जर्जर थे। उनके बाहुओं और शवोंसे धरती पट चुकी थी। इका और इक्क अस्त्र छोड़े जा रहे थे। वे एक दूसरेपर आक्रमण कर रहे थे। आसपास हड्डियाँ ही हड्डियाँ बिखरी हुई थीं। वे उनके खण्ड-खण्ड कर रहे थे। योद्धा धराशायी हो गये। उनकी शिखाएँ सुन्दर दिखाई दे रही थीं। अश्वोंका रक्त रिस रहा था। पक्षियोंके झुण्ड उसमें सराबोर हो रहे थे। कहीं आहत अश्व और हाथी धरती पर पड़े हुए थे। कहीं कान्तिमान देवता आघातोंसे अत्यन्त दारुण और आरक्त अत्यन्त भयंकर जान पड़ रहे थे। कहीं पर यश समूहसे मण्डित ध्वजाएँ विद्ध हो रही थीं। युद्धकी उस पहली भिड़न्तमें ही राघवकी सेना उसी प्रकार नष्ट हो गयी, जिस प्रकार दुर्विदग्धके मानसे किसी प्रौढ़ विलासिनीकी रति समाप्त हो जाय। १–१४॥

[५] राघवकी सेना, रावणकी सेनासे, इस प्रकार भग्न हो गयी मानो दुर्गतिसे सुगतिका मार्ग नष्ट हो गया हो। मानो कलिके परिणामसे परमधर्म नष्ट हो गया हो, या मानो कठोर तपःसाधनासे मनुष्यजन्म नष्ट हो गया हो। यह देखकर कि

विघलिय-पहरणु णिय-मणें विसण्णु । भज्जन्तउ पेक्खेंवि राम-सेण्णु ॥३॥
किउ कलयलु कमल-दलक्खिएहिँ । सुर-बहुअहिँ रावण-पक्खिएहिँ ॥४॥
'हलें पेक्खु पेक्खु णासन्तु तिमिरु । णं रवि-यर-णियरहों रयणि-तिमिरु ॥५॥
सुट्ठु वि सीयालु महन्त-काउ । किं विसहइ केसरि-णहर-घाउ ॥६॥
सुट्ठु वि जोइङ्गणु तेयवन्तु । किं तेण तवणु जिणइ तवन्तु ॥७॥
सुट्ठु वि सुन्दरु रासहहों कोल । किं पावइ वर-मायङ्ग-लील ॥८॥

घत्ता

सुट्ठु वि भूगोयरु दुल्लउ किं पुज्जइ विज्जाहरहों ।
सुट्ठु वि वालाहिउ चडुउ किं सरिसउ रयणायरहों' ॥९॥

[६]

तांव तुरङ्गम-रहँ-गय-वाहणु । वलिउ पडीवउ राहव-साहणु ॥१॥
णं उच्छलिउ खय-सायर-जलु । आहय-तूर-णिवहु किय-कलयलु ॥२॥
उब्भिय-कणय-दण्डु धुय-धयवडु । उद्ध-सोण्ड-उत्तुङ्ग-गय-घडु ॥३॥
जुत्त-तुरङ्गम-वाहिय-सन्दणु । जाउ पडीवउ मल्ल-कडमद्दणु ॥४॥
धाइय णरवर णरवर-विन्दहुँ । सीहहुँ सीह गइन्द गइन्दहुँ ॥५॥
रहियहुँ रहिय धयग्ग धयग्गहुँ । रह रहवरहुँ तुरङ्ग तुरङ्गहुँ ॥६॥
धाणुक्कियहुँ भिडिय धाणुक्किय । फारक्कियहुँ पवर फारक्किय ॥७॥
असिवर-हत्था असिवर-हत्थहुँ । एम हूअ किलिकिलिउ समत्थहुँ ॥८॥

घत्ता

दुग्घोट्ट-थट्ट-सङ्घट्टण पाडिय-सुहड-वड पडिय-गुड ।
अब्भिडइ अवसरें किट्टएँ वालालुञ्चि करन्ति भड ॥९॥

रामकी सेनाके हथियार छिन्न हो रहे हैं, सेना मन ही मन दुःखी है, वह बुरी तरह पिट रही है, रावणपक्षकी कमलनयना सुरवधुओंने खूब खुशी मनायी। वे कहने लगीं "हे सखी, देखो सेना नष्ट हो रही है मानो सूर्यकी किरणोंसे रात्रिका अन्धकार नष्ट हो रहा है। ठीक ही तो है, सियारका शरीर कितना ही बड़ा क्यों न हो? क्या वह सिंहके नखाघातको सह सकता है? जुगनूमें कितना ही तेज प्रकाश हो, क्या वह सूर्यको अपने तेजसे जीत सकता है? गदहेकी क्रीडा कितनी ही सुन्दर हो, क्या वह उत्तम गजकी क्रीड़ाको पा सकता है? मनुष्य कितना ही अजेय हो, क्या वह विद्याधरोंको पा सकता है? झील कितनी ही बड़ी हो, क्या वह बड़े समुद्रकी समता कर सकती है॥ १-९॥

[६] इसी बीच—अश्व, रथ, गज और वाहनसे युक्त राघव-सेना, फिरसे मुड़ी। ऐसा लगा मानो प्रलयसमुद्रका जल उछल पड़ा हो। तूर्योंके समूह बज उठे। कल-कल ध्वनि होने लगी। सुवर्णदण्ड उठा लिये गये, ध्वजपट फहरा उठे। गजघटा निरंकुश होकर अपनी सूँड़ें उठाये हुई थी। अश्व जोत दिये गये। रथ चल पड़े। फिरसे उलटा सैनिकोंका विनाश होने लगा। योद्धा योद्धाओंके ऊपर दौड़ पड़े, सिंह सिंह पर, और गजेन्द्र गजेन्द्र पर, रथी रथियों पर, और ध्वजाग्र ध्वजाग्रों पर, रथ श्रेष्ठरथों पर, अश्व अश्वों पर, धानुष्क धानुष्कों पर, फरशाबाज फरशाबाजों पर, तलवार हाथमें लेकर लड़नेवाले, तलवार वालों पर। इस प्रकार, उन दोनों संघर्ष सेनाओंमें घोर संघर्ष हुआ। गजघटा चूर-चूर हो गयी। उनके मुखकी झूलें गिर गयीं। कवच टूट पड़े। अस्त्रोंका अवसर निकल जाने पर योद्धा आपसमें एक दूसरेके बाल खींचने लगे॥ १-९॥

[७]

किय-कुण्डल-मिउडि-मउड-भासुराइँ । पहरन्ति परोप्परु णिट्ठुराइँ ॥१॥
उभय-बलइँ रुहिर-झलोहलियाइँ । तम्बिरच्छ-वणइँ णं फुल्लियाइँ ॥२॥
एत्थन्तरेँ जग-मण-भाविणीउ । कलयलन्ति गयणेँ सुर-कामिणीउ ॥३॥
'हलेँ वासवयत्तेँ वसन्तलेहेँ हलेँ कामसेणेँ हलेँ कामलेहेँ ॥४॥
हलेँ कुसुम-मणोहरि हलेँ अणङ्गेँ । चित्तङ्गेँ वरङ्गेँ हलेँ तरङ्गेँ ॥५॥
जो दीसइ रणउहेँ सुहडु एहु । कणिगाय-खुरुप्प-कप्परिय-देहु ॥६॥
सव्वउ मिलेवि एँहु मज्झु देहु । रणेँ अण्णु गवेसवि तुम्हेँ लेहु' ॥७॥
अण्णेक्कएँ हरिसिय-गत्तियाएँ । पभणिउ पप्फुल्लिय-वत्तियाएँ ॥८॥

घत्ता

'जो दन्ति-दन्तेँ आलग्गेँवि उरु भिन्दाविउ अप्पणउ ।
हलेँ धावहि काइँ गहिल्लिएँ एँहु भत्तारु महु तणउ' ॥९॥

[८]

जाम्व चोल सुर-कामिणि-सत्थहोँ । ताव वलेण समरेँ काकुत्थहोँ ॥१॥
भग्गु असेसु वि रावण-साहणु । विहलिय-पहरणु गलिय-पसाहणु ॥२॥
विहुणिय-कर-मुहकायर-णरवरु । तुट्ट-तुरङ्गमु मोडिय-रहवरु ॥३॥
चलचल-आमेल्लिय-धयवडु । गलिय-घाय-कड्ढाविय-गय-घडु ॥४॥
जं णासन्तु पदीसिउ पर-वलु । राहव-पक्खिएहिँ किउ कलयलु ॥५॥
'हलेँ हलेँ वारवार जं वण्णहि । जेण समाणु अण्णु णउ मण्णहि ॥६॥
सो वलु पेक्खु पेक्खु भज्जन्तउ । णं मयवणु दुव्वाएँ छित्तउ ॥७॥
णं सज्जण-कुडुम्बु खल-सङ्गेँ । णाइँ कुमुणिन्द-चित्तु अणङ्गेँ ॥८॥

[७] अपनी टेढ़ी भौंहोंसे अत्यन्त भयंकर एवं कठोर दोनों सेनाएँ एक दूसरे पर प्रहार करने लगीं। रक्त रूपी जलसे अनुरंजित दोनों सेनाएँ ऐसा लग रही थीं मानो रक्तकमलका वन खिल उठा हो। इसी बीच जनमनको अच्छी लगनेवाली देवबालाओंमें झगड़ा होने लगा। एक सुरबाला बोली, "हला वासन्तदत्ता, वसन्तलेखा, कामसेना, कामलेखा, कुसुम, मनोहारी अनंगा, चित्रांगा, वरांगना और वरांगा, तुम सुनो, युद्धमें जो यह सुभट दिखाई देता है, जिसकी देह सोनेकी खुरपीसे कट चुकी है। तुम यह मुझे दे दो, और अपने लिए मिल-जुल कर दूसरा योद्धा देख लो। एक और दूसरीने, जिसका शरीर हर्षसे खिल रहा था, कहा "हाथीके दाँतमें लगकर जिसने अपने आपको घायल कर लिया है, ओ पगली दौड़, वह मेरा स्वामी है" ॥ १-६ ॥

[८] सुरबालाओं में इस प्रकार बातचीत हो ही रही थी कि रामकी सेनाने युद्धमें समूची रावण सेनाको परास्त कर दिया उसके हथियार खिसक गये, और सभी साधन नष्ट हो गये। श्रेष्ठ मनुष्य अपना कातर मुख लिये हाथ मल रहे थे। अश्व दुखी थे। रथ मोड़ दिये गये थे। छत्र गिर चुका था। ध्वजाएँ अस्त-व्यस्त थीं। भयंकर आघातोंसे गजघटा बौखला गयी। शत्रुसेनाको नष्ट होते देखकर रामकी सेनामें कोलाहल होने लगा। देवबालाओंमें दुबारा बातचीत होने लगी। एक ने कहा "जिस सेनाके बारेमें तुम कह रही थी कि उसके समान दूसरी नहीं हो सकती, वही सेना नष्ट होने जा रही है। वह ऐसी दिखाई दे रही है जैसे प्रचण्ड पवनने उपवनको उजाड़ दिया हो।" या मानो किसी दुष्टकी संगतिसे कोई अच्छा कुटुम्ब बर्बाद हो गया हो, या खोटे मुनिका मन

घत्ता

रिउ-हरिण-जूहु हिण्डन्तउ पुण्णहिँ कह वि ण मारियउ ।
णालेप्पिणु कहिँ आरुसइ राहव-सीहहोँ कमेँ पडियउ ॥९॥

[९]

एत्थन्तरेँ रुट्ठेँ मम्मीस देवि । विरथक्क हत्थ-पहत्थ वे वि ॥१॥
णं पलएँ समुट्ठिय चन्द-सूर । णं राहु-केउ अच्चन्त-कूर ॥२॥
णं पलय-हुआसण पवण-चण्ड । णं मत्त महग्गय गिल-गण्ड ॥३॥
णं सीह समुद्धसिय-सरीर । णं खय-जलणिहि गम्भीर धीर ॥४॥
दुव्वार-वइरि-संघारणेहिँ । उत्थरियाणेएँहिँ पहरणेहिँ ॥५॥
अग्गेएँहिँ वारुण-वायवेहिँ । सिल-पाहण पव्वय-पायवेहिँ ॥६॥
जहिँ जहिँ भिडन्ति तहिँ मणेँ विसण्णु । साहारु ण बन्धइ राम-सेण्णु ॥७॥
विहडप्फडु णासइ पाण लेवि । तहिँ अवसरेँ थिय णल-णील वे वि ॥८॥

घत्ता

णं पवर-गइन्दु गइन्दहोँ सीहहोँ सीहु समावडिउ ।
णलु हत्थहोँ णीलु पहत्थहोँ सरहस-पहरणु अब्भिडिउ ॥९॥

[१०]

णल-हत्थ वे वि रणेँ ओवडिया । वेण्णि वि गय-सन्दणेहिँ चडिया ॥१॥
वेण्णि वि अभङ्ग-माणद्धया । वेण्णि वि सुपसिद्ध-लद्ध-विजया ॥२॥
वेण्णि वि भिउडी-भङ्गुर-वयणा । वेण्णि वि गुञ्जाहल-सम-णयणा ॥३॥
वेण्णि वि पचण्ड-कोवण्ड-धरा । वेण्णि वि अणवरय-विमुक्क-सरा ॥४॥
वेण्णि वि भग्गु-विप्पाणान्त-गया । वेण्णि वि सयवारोच्छिण्ण-धया ॥५॥
वेण्णि वि समरङ्गणेँ दुव्विसहा । वेण्णि वि सयवार-कुम-विरहा ॥६॥
वेण्णि वि थिय अहिणव-तरुवरेहिँ । वेण्णि वि पोमाइय सुरवरेहिँ ॥७॥
वेण्णि वि णन्दण पुणु वि किया । वेण्णि वि विमाण-वाहणेहिँ थिया ॥८॥

कामदेवने आहत कर दिया हो। शत्रुरूपी मृगोंका झुण्ड भटकता हुआ भाग्यसे कहीं भी जा पड़े, वह बच नहीं सकता। रामरूपी सिंहकी झपेटमें पड़कर आखिर वह कहाँ जायेगा॥ १–८॥

[९] इसी अन्तरमें सेनाको अभय वचन देकर हस्त और प्रहस्त दोनों आकर इस प्रकार खड़े हो गये: मानो प्रलयमें चन्द्र और सूर्य उदित हुए हों, या अत्यन्त क्रूर राहु और केतु हों, या पवनाहत प्रलयकी आग हो, या मदसे गीले महागज हों या पुलकित शरीर सिंह हो, या गम्भीर और विशाल प्रलय कालीन समुद्र हो। दुर्वार शत्रुओंका संहार करनेवाले आक्रमण शील हथियारों, आग्नेय वायव्य अस्त्रों, शिलाओं, पत्थरों, पर्वतों और वृक्षोंसे वे योद्धा जहाँ भी जा भिड़ते वहाँ लोगोंके मन खिन्न हो उठते। रामकी सेना ठहर नहीं पा रही थी। वह व्याकुल होकर अपने प्राणोंके साथ नष्ट होने जा रही थी, नल और नील दोनों आ पहुँचे। मानो विशाल गजसे विशाल गज या सिंहसे सिंह भिड़ गया हो। नल हस्तसे, और प्रहस्तसे नील भिड़ गये, एकदम पुलकित और अस्त्र सहित॥ १–९॥

[१०] नल और हस्त युद्धस्थलमें एक दूसरेसे भिड़ गये, दोनों गजरथों पर चढ़ गये। दोनोंके गज और ध्वज अभंग थे। दोनों ही प्रसिद्ध थे और उन्होंने विजयें प्राप्त की थीं। दोनोंकी भौंहोंसे मुख कुटिल हो रहा था। दोनोंकी आँखें मूँगे की तरह लाल हो रही थीं। दोनों ही प्रचण्ड धनुष धारण किये हुए थे। दोनों ही तीरोंकी अनवरत बौछार कर रहे थे। दोनोंने ही धनुर्विज्ञानकी विद्यामें अन्त पा लिया था। दोनों सौ-सौ बार ध्वजोंके टुकड़े कर चुके थे। दोनों ही युद्धके प्रांगणमें असहनीय थे। दोनों ही को सौ बार विरह हो चुका था, दोनों ही नये रथोंमें बैठे हुए थे, दोनोंकी देवता प्रशंसा

घत्ता

बेण्णि वि करन्ति रणेँ णिक्कउ पहु-लक्खण-दाण-रिणाहँ ।
पडिसुहड पहुँ णिज्झन्तहुँ णेहि वि णासु हेमि जिणहँ ॥९॥

[११]

एत्थन्तरेँ आयामिय-णलेण । पय-भारक्कन्त-रसायलेण ॥१॥
हय-तूर-पउर-किय-कलयलेण । ओरसिय-सङ्ख-दडि-काहलेण ॥२॥
हरिणिन्द-रुन्द-कडि-कडियलेण । सुन्दर-रङ्खोलिर-मेहलेण ॥३॥
दिढ-कढिण-वियड-वच्छत्थलेण । पारोह-सोह-सम-भुअ-बलेण ॥४॥
छण-चन्द-रुन्द-मुह-मण्डलेण । घोलन्त-कण्ण-मणिकुण्डलेण ॥५॥
तोणीरहोँ रावण-किङ्करेण । कड्ढिउ सरु भिउडि-भयङ्करेण ॥६॥
विउलक्खण-लक्खु रणेँ दुण्णिवारु । गुण-सन्धिय-मेल्लिउ सय-पयारु ॥७॥
आमेल्लिज्जन्तु सहास-भेउ । थोवन्तरेँ णवर अलद्धु-छेउ ॥८॥

घत्ता

जलेँ थलेँ पायालेँ णहङ्गणेँ बाण-णिवहु सन्दरिसियउ ।
रिउ-जलहरु सर-धाराहरु णल-कुलपव्वएँ वरिसियउ ॥९॥

[१२]

तं हत्थहोँ केरउ बाण-जालु । पूरन्तु असेसु दियन्तरालु ॥१॥
आयासेँ वि णलेँण दुद्दरिसणेण । आकरिसिउ सरेँ णाकरिसणेण ॥२॥
धारा-तिमिरु व किरणायरेण । भाणत्थेँ जगु व सणिच्छरेण ॥३॥
दहिमुह-पुरेँ रिसि-कण्णोवसग्गेँ । हणुवेण व सायर-जलु ख-मग्गेँ ॥४॥

कर रहे थे। दोनोंने, फिर एक दूसरेको विरथ कर दिया, दोनों विमान वाहनोंमें बैठ गये। दोनों ही अपने स्वामीसे प्राप्त दान और सम्मानके ऋणको चुका रहे थे। आक्रमण और प्रत्याक्रमण में दोनों ही, जिन भगवान्का नाम ले रहे थे" ॥ १–६ ॥

[११] इसी बीच, नलको भी झुका देने वाला हस्त आया। उसके पदभारसे धरती काँप जाती थी। नगाड़ोंकी ध्वनिके साथ उसने कोलाहल मचा दिया। शंख दुंदुभि और काहल वाद्य फूँक दिये गये। वह सिंहोंके झुण्डको मसमसा चुका था, उसका वक्षस्थल कठोर मजबूत, और भयंकर था। उसकी सुन्दर करधनी हिल-डुल रही थी। उसका मुख पूर्णिमाके चाँदकी तरह सुन्दर था। उसके कानोंमें सुन्दर मणि कुण्डल हिल-डुल रहे थे। भौंहोंसे भयंकर रावणके उस अनुचरने तरकससे, दुर्निवार विद्रूपण तीर निकाल लिया। डोरी चढ़ाने मात्रसे वह सौ प्रकारका हो जाता था। छोड़ते ही वह हजाररूपका हो जाता था, और थोड़ी ही देरमें उसका रहस्य समझना कठिन हो जाता था। जल, थल, पाताल और आकाशमें बाणोंका समूह दिखाई दे रहा था। इस प्रकार शत्रुरूपी जलका पानी तीररूपी बूँदोंसे नल रूपी पर्वत पर खूब बरसा ॥ १–९ ॥

[१२] जब हस्तके बाणजालने समूचे दिशाओंके अन्तरको घेर लिया तो दुर्दर्शनीय नलने अपना धनुष तान लिया। उसने खींचकर तीर मारा तो उससे आहत होकर, हस्त घायल होकर धरती पर गिर पड़ा, मानो रावणका दायाँ हाथ ही टूट गया हो, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार किरणोंसे अन्धकारका जाल या मीन राशिमें स्थित शनीचरसे दुनिया, या जिस प्रकार दधिमुख नगरमें ऋषि और कन्याओंके उपसर्गके अवसर पर हनुमानने आकाशमें समुद्रजलको तितर-बितर कर दिया था।

अण्णेक्कें वाणें छिण्णु चिन्धु । अण्णेक्कें रिउ वच्छयलें विद्धु ॥५॥
विहलङ्घलु महियलें पडिउ हत्थु । णं दढवयगहों जेवगउ हत्थु ॥६॥
एत्तहें वि वे वि रण-भर-समत्थ । ओवडिय भिडिय णील-प्पहत्थ ॥७॥
वेण्णि वि स-रोस वेण्णि वि पचण्ड । वेण्णि वि गज्जोल्लिय-बाहुदण्ड ॥८॥

घत्ता

पच्चारिउ णीलु पहत्थेंण 'पहरु पहरु एक्कहों जणहों ।
जय-लच्छि देउ आलिङ्गणु जिम रामहों जिम रामणहों' ॥९॥

[१३]

एत्थन्तरें णीलें ण किउ खेउ । णाराउ विसज्जिउ चण्ड-वेउ ॥१॥
तुण्ण-म्मामेल्लिउ चलिउ जेम । णिग्गयउ सहत्थें तिगुणु तेम ॥२॥
सो एन्तु पहत्थें कुद्धएण । करिवर-सन्दर्णेण करि-द्धएण ॥३॥
सयखण्डइँ किउ छहिँ सरवरेहिँ । णं महियलु आगमें मुणिवरेहिँ ॥४॥
चउवीस णवर णीलेण मुक्क । एक्केक्कहों वे वे बाण ढुक्क ॥५॥
विहिँ करि कप्परिय ससोणियन्त । विहिँ सारहि विहिँ धय थरहरन्त ॥६॥
रह एक्कें एक्कें कवउ छिण्णु । धउ एक्कें एक्कें छियउ भिण्णु ॥७॥
विहिँ बाहु-दण्ड विहिँ विलुअ पाय । एवं तहों मरणावत्थ जाय ॥८॥

घत्ता

सिर-कमल-करोडि छक्खण्डइँ जाउ सिलीमुह-कप्परिउ ।
लक्खिज्जइ मुहडु पडन्तउ णं भूअहँ बलि विक्खिरिउ ॥९॥

[१४]

जं विणिहय हत्थ-पहत्थ वे वि । थिउ रावणु मुहें कर-कमलु देवि ॥१॥
णं मत्त-महागउ गय-विसाणु । णं वासरे तेय-विहीणु भाणु ॥२॥

एक और बाणसे उसने ध्वजको छिन्न-भिन्न कर दिया, और एक दूसरेसे शत्रुको वक्ष स्थलमें घायल कर दिया। इधर, युद्धभार उठानेमें समर्थ वे दोनों नील और प्रहस्त भी आपसमें भिड़ गये। दोनों ही क्रुद्ध थे, दोनों ही प्रचण्ड थे, दोनोंकी बाहुएँ पुलकित हो रही थीं। प्रहस्तने नीलको ललकारा, "एक ही आदमी पर प्रहार कर जयलक्ष्मी आलिंगन दे, चाहे रामको या रावणको ॥ १-९ ॥

[१३] यह सुनकर नील घबड़ाया नहीं। उसने अपना चण्ड वेग तीर उसपर छोड़ा। वह डोरीके धर्मसे छूटकर उसी प्रकार सरसराता चला- जिस प्रकार विभ्रमशील चुगलखोर दूसरोंके पास जाता है। परन्तु रथमें बैठे हुए गजध्वजी क्रुद्ध प्रहस्तने उस तीरके, छह तीरोंसे छह टुकड़े उसी प्रकार कर दिये, जिस प्रकार महामुनियोंने शास्त्रोंमें धरतीको छह खण्डोंमें विभक्त किया है। तब नीलने चौबीस और तीर छोड़े जो एकके अनु-क्रममें दो दो बाण उसके पास पहुँचे। दो बाणोंने उछलते हुए हाथीको घायल कर दिया, दोने सारथीको, और दोने फहराती हुई ध्वजाको छिन्न-भिन्न कर दिया। एक तीरने रथ और दूसरेने कवचको नष्ट कर दिया। एकने धड़को और दूसरेने हृदयको छिन्न-भिन्न कर दिया। उसके दोनों हाथ और पाँव भी कट गये। उसकी मौत निकट आ पहुँची। तीरोंसे कट कर उसके सिर पैर हाथ और वक्षस्थलके छह टुकड़े हो गये। धरती पर बिखरा हुआ वह सुभट ऐसा लग रहा था मानो भूतोंके लिए बलि बिखेर दी गयी हो ॥ १-९ ॥

[१४] जब हस्त और प्रहस्त दोनों मारे गये तो रावण अपना कर-कमल माथे पर रखकर बैठ गया। वह ऐसा लग रहा था मानो दन्तविहीन महागज हो, या मानो दिनमें तेज

णं णी-ससि-सूरउ गयण-मग्गु । णं इन्द-पडिन्द-विमुक्कु सग्गु ॥३॥
णं मुणिवरु इह-पर-लोय-चुक्कु । णं कुकइ-कव्वु लक्खण-विमुक्कु ॥४॥
थिउ वलु वि णिरुज्जमु गलिय-गाउ । राहव-वलु परिवड्ढिय-पयाउ ॥५॥
एत्तहेँ स-पवह णीसइ सङ्खु । एत्तहेँ अप्फालिय तूर-लक्ख ॥६॥
एत्तहेँ वलेँ हाहाकारु वुट्ठु । एत्तहेँ पुणु जयजय-सद्दु घुट्ठु ॥७॥
एत्तहेँ वि गयणेँ अत्थमिउ मित्तु । णं हत्थ-पहत्थहुँ तणउ मित्तु ॥८॥

घत्ता

सुज्झन्तहुँ वेण्णि वि सेण्णइँ रयणिएँ णाइँ णिवारियइँ ।
भूएँहिँ सहुँ भूअ-सहासइँ रणेँ भोयणेँ हक्कारियइँ ॥९॥

•

[६२. वासट्ठिमो संधि]

पाडिएँ हत्थेँ पहत्थेँ वलइँ वे वि परियत्तइँ ।
णाइँ समत्तएँ कज्जेँ मिहुणइँ णिसुविय-गत्तइँ ॥

[१]

गएँ रायणेँ णिय-मन्दिरेँ पइट्ठे । हरि-हलहरेँ रण-वाहिरेँ णिविट्ठे ॥१॥
तहिँ अवसरेँ जग-वित्थिण्ण-णामु । जोक्कारिउ णल-णीलेहिँ रामु ॥२॥
तेण वि बहु-रयण-समुज्जलाइँ । दिण्णइँ णीलहोँ मणि-कुण्डलाइँ ॥३॥
हयरहोँ वि मउडु मणि-तेय-भिण्णु । जो रामचरिहिँ जम्बवेण दिण्णु ॥४॥
णं वे वि पपुज्जिय राहवेण । पच्छइ तुट्ठु किउ जम्बवेण ॥५॥
णर दाहिणेण हय उत्तरेण । गय पुव्वें रह अवरत्तणेण ॥६॥
विरइयइँ विमाणइँ गयण-मग्गेँ । थिय हरि-हलहर सीहासणग्गेँ ॥७॥
देवहु मि अच्छेउ अभेउ मूढु । णं थिउ मिलेवि पञ्चमुहु रूढु ॥८॥

रहित सूर्य हो, मानो सूर्य चन्द्रसे विहीन आकाश हो, मानो इन्द्र और प्रतीन्द्रसे रहित स्वर्ग हो, एक ओर नगाड़े और शंख निःशब्द थे, और दूसरी ओर लाखों तूर्य बज रहे थे। एक ओर सेनामें हाहाकार मचा हुआ था, दूसरी ओर जय-जय ध्वनि गूँज रही थी। इस ओर आकाशमें सूरज डूब गया, मानो वह हस्त और प्रहस्तका मित्र था। लड़ती हुई वे सेनाएँ रातमें भी नहीं हट रही थीं। सैकड़ों भूखे भूत युद्धमें भोजनके लिए एक दूसरेको पुकार रहे थे ॥ १-९ ॥

●

बासठवीं सन्धि

हस्त और प्रहस्तके मारे जाने पर, दोनों सेनाएँ अलग-अलग हो गयीं। ठीक उसी तरह, जिस तरह कार्य पूरा हो जाने पर शिथिलशरीर, दम्पति अलग हो जाते हैं।

[१] रावणने अपने आवासमें प्रवेश किया। राम और लक्ष्मण भी, युद्धभूमिसे बाहर आ गये। ठीक इसी समय विश्वमें विख्यातनाम नल-नीलने आकर, रामका अभिवादन किया। रामने भी नीलको बहुरत्न मणियोंसे समुज्ज्वल मणि कुण्डल प्रदान किये। दूसरे नलको भी मणियोंके प्रकाशसे चमकता हुआ मुकुट दिया। यह मुकुट रामपुरीमें उन्हें यक्षने भेंट किया था। राम जब उन दोनोंका सत्कार कर चुके तो जाम्बवने पंचव्यूहकी रचना की। मनुष्य दाँयें तरफ थे, और अश्व बायें तरफ। गज पूर्व दिशामें और पश्चिम भागमें रथ खड़े थे। उन्होंने आकाशमें विमानोंकी रचना कर डाली। राम और लक्ष्मण सिंहासनके अग्रभाग पर विराजमान थे। वह व्यूह देवताओंके लिए भी अभेद्य था। ऐसा जान पड़ता था

घत्ता

ताव रणङ्गण-मज्झे पुणु पुणु सिव फेक्कारइ ।
'रावण दुज्जउ रामु णाइँ समासएँ वारइ ॥९॥

[२]

कत्थ वि सिव का वि कलुणु रुवइ । 'रणु थोवउ जाइ अप्पणु वि हवइ' ॥१॥
कत्थ वि सिव का वि समल्लियइ । णं जोअइ 'को मुउ को जियइ' ॥२॥
कत्थ वि सिव सुहडहों छीण सिरें । चिवरोक्खएँ अंगणएँ भुत्ति करें ॥३॥
कत्थ वि सिव चुम्बइ मुह-कमलु । णं पोढ-विलासिणि अहर-दलु ॥४॥
कत्थ वि सिव मडहों लेइ हियउ । पुणु मेल्लइ 'मह अप्पणइँ हियउ' ॥५॥
कत्थ वि रणेँ भूअहुँ कलहणउ । 'सिरु तुज्झु कबन्धु महु तणउ' ॥६॥
अब्भिडइ अण्णु अण्णेण सहुँ । 'एउ मज्झु आवग्गउ देहि महु' ॥७॥
अण्णों वुच्चइ 'रावणहु वि ण तउ । जुज्झु एक्कु णामु महु होउ गउ' ॥८॥

घत्ता

भूअहुँ भीसण-लील रामहों वयणु समुज्जलु ।
सीयहें मणे परिओसु णिसियर-वलहों अमङ्गलु ॥९॥

[३]

जं णिसुणिउ हत्थु पहत्थु हउ । णल-णील-सरेंहिँ तम्बाह गउ ॥१॥
तं पलय-कालु ओवत्थियउ । पुरेँ हाहाकारु समुत्थियउ ॥२॥
णं पक्खिउलेंण विमुक्क रडि । णं णिवडिय महिहर-सिहरेँ तडि ॥३॥
तं णाउ घरु जेत्थु ण रुवइ धण । उब्भिय-कर धाहाविय-वयण ॥४॥

मानो सिंहोंका झुण्ड हो। इसी बीच, युद्धप्रांगणमें सियार बोलने लगा, मानो वह संकेतमें कह रहा था "हे रावण, तुम्हारे लिए राम अजेय हैं" ॥ १–२ ॥

[२] कहीं पर सियारिन करुण क्रन्दन कर रही थी "यदि युद्ध आज थोड़ी देर और हो, तो अच्छा है।" कहीं पर एक और सियारिन छिपी हुई थी, मानो वह देख रही थी कि कौन मरा हुआ है, और कौन जीवित है। एक और जगह, शृगाली एक सुभट पर कूद पड़ी, मानो वह दूसरेके पीठ पीछे भोजन करना चाहती थी। कोई सियार किसी सुभटका मुखकमल इस प्रकार चूम रहा था, मानो प्रौढ़ विलासिनीका अधरदल हो।" कहीं पर सियार योद्धाका हृदय निकालता और फिर उसे छोड़ देता, यह जानकर कि वह दूसरेका है। कहीं युद्धमें भूतोंका संघर्ष छिड़ा हुआ था। एक कहता, "सिर तुम्हारा और धड़ मेरा है।" एक दूसरा किसी और से भिड़ जाता और कहता, "यह पूरा योद्धा मुझे दो।" तब दूसरा कहता, "नहीं इसका एक टुकड़ा भी नहीं दूँगा, यह हाथी तो मेरे लिए एक कौर (ग्रास) होगा" भूत-प्रेतोंमें इस प्रकार भोजनलीला मची हुई थी। राम का मुख तेजसे उद्दीप्त था। सीता मन ही मन संतुष्ट थी। केवल निशाचरोंकी सेना में, अमंगल दिखाई दे रहा था ॥१–६॥

[३] निशाचरोंने जब सुना कि हस्त और प्रहस्त अब इस दुनियामें नहीं हैं, नल और नीलके अस्त्रोंसे उनका विनाश हो गया, तो जैसे उनमें प्रलयकाल मच गया, लंका नगरीमें हाहाकार होने लगा। उस समय ऐसा लगता था मानो पक्षि-समूह आक्रंदन कर रहा हो, या पहाड़ पर गाज (वज्र) आ गिरी हो।" एक भी ऐसा घर नहीं था जिसमें धन्या नहीं रो रही हो, वह

सो णउ भडु जासु ण अङ्गें वणु । सो णउ पहु जो णउ विमण-मणु ॥५॥
सो णउ रहु जो ण वि कप्पियउ । सो णउ हउ जो ण वि सर-भरिउ ॥६॥
सो ण वि गउ जासु ण असि-पहरु । सो ण वि हरि जो अभग्ग-णहरु ॥७॥
जणें एम कमन्तें परिट्ठियएँ । दुक्खाउरें णिद्दा-वसिकियएँ ॥८॥

घत्ता

अद्धरत्तें पच्छिमयणें जिणवर-परमेसरु ।
पुरें पच्छण्ण-सरीरु भमइ णाइँ जोगेसरु ॥९॥

[४]

पप्फुल्लिय-कुवलय-दल-णयणु । करवाल-भयङ्करु दढवयणु ॥१॥
आहिण्डइ रयणिहिँ घरेंण घरु । पेक्खइँ को केहउ चवइ णरु ॥२॥
पइसइ अचन्त-मणोहरइँ । पवरइँ वर-कामिणि-रहहरइँ ॥३॥
जहिँ सुरयारम्भु णह-सरिसु । जिह तं तिह तिं(?)वड्ढिय-हरिसु ॥४॥
जिह तं तिह भू-भङ्गुर-वयणु । जिह तं तिह जल-वाहिय-णयणु ॥५॥
जिह तं तिह आयड्ढिय-णहरु । जिह तं तिह उग्गामिय-पहरु ॥६॥
जिह तं तिह गल-गम्भीर-सरु । जिह तं तिह दरिसिय-अङ्गहरु ॥७॥
जिह तं तिह करण-बन्ध-पउरु । जिह तं तिह छन्द-सद्द-गहिरु ॥८॥

घत्ता

पेक्खेंवि सुरयारम्भु णरहों अणुहरमाणउ ।
सीय सरेवि दसासु परिणिन्दइ अप्पाणउ ॥९॥

दोनों हाथ ऊपर कर दहाड़ मार कर रो रही थी। ऐसा योद्धा एक भी नहीं था जिसके शरीर पर घाव न हो, एक भी ऐसा राजा नहीं था जिसका मन उदास न हो, एक भी ऐसा रथ नहीं था जो टूटा-फूटा न हो, जो क्षतिग्रस्त न हुआ हो और तीरोंसे न भरा हो।" एक भी हाथी ऐसा नहीं था, जिसपर तलवारका आघात न हो। ऐसा एक भी अश्व नहीं था जिसके नख न टूटे हों। इस प्रकार बहुत रात तक, वे करुण विलाप करते रहे, और बादमें वे गहरी नींदमें डूब गये। जब आधी रात हुई तो विद्याधरोंका राजा, गुप्तभेषमें नगरमें घूमनेके लिए निकला, मानो योगेश्वर ही हो।" ॥१-९॥

[४] उसके दोनों नेत्र खिले हुए थे। तलवारसे रावण भयंकर दिखाई दे रहा था। रात्रिमें वह घरों घर घूम रहा था यह जाननेके लिए कि कौन मेरे विषयमें क्या विचार रखता है। कहीं पर वह सुन्दर कामिनियोंके अत्यन्त सुन्दर क्रीड़ागृहों में घुस जाता। वहाँ नटोंकी तरह सुरत क्रीड़ा प्रारम्भ हो रही थी। नटलीलाकी ही भाँति इनमें उत्तरोत्तर आनन्द बढ़ रहा था। नटलीलाकी तरह इसमें मुख और भौंहें टेढ़ी हो रही थीं। नटलीलाकी भाँति इसमें पैर और आँखें चल रही थीं। नटलीलाकी भाँति, इसमें भी नख बढ़े हुए थे। नटलीला की भाँति इसमें भी प्रहरका उदय हो गया था। एकका स्वर गम्भीर हो रहा था, दूसरेका तीर, एकमें हाथ बँधे हुए थे और दूसरेमें बाजूबन्द थे। नटलीलाकी भाँति वह सुरत लीलाके भी स्वर और बोल गम्भीर थे। नटलीलाके ही अनुरूप सुरत क्रीड़ाके प्रारम्भको देखकर रावणको अचानक सीतादेवी की याद हो आयी और वह अपने आपको कोसने लगा ॥१-९॥

[५]

थोवन्तरु जाव परिब्भमइ । सहुँ कन्तएँ को वि वीरु चवइ ॥१॥
'सुन्दरि मिग-णयणेँ मराल-गइ । तं पहु-पसाउ किं वीसरइ ॥२॥
तं पेसणु तं आलिङ्गियउ । तं जीविय-दाणु अमग्गियउ ॥३॥
तं उब्भासण-मणि-वेयडिउ । तं मत्त-गइन्द-खन्धेँ चडिउ ॥४॥
तं मेहलु तं कण्ठाहरणु । तं चेलिउ तं जं समालहणु ॥५॥
तं फुल्लु सहत्थें तम्बोलु । तं असणु सु-परिमलु कच्चोलु ॥६॥
तं पीढि भाइ चामीयरहोँ । अवर वि पसाय लङ्केसरहोँ ॥७॥
एयहुँ जसु एक्कु ण आवडइ । सो लक्खमेँ णरयण्णवेँ पडइ ॥८॥

घत्ता

तहोँ उवयारहोँ कन्तेँ णिक्कउ करमि महाहवेँ ।
लायमि वयण-विचित्त थरहरन्त सर राहवेँ' ॥९॥

[६]

तं णिसुणेँवि गउ रावणु तेत्तहेँ । मन्दोअरि-जणेरु मउ जेत्तहेँ ॥१॥
जाल-गवक्खएँ थिउ एकन्तएँ । णिसुउ चवन्तु को वि सहुँ कन्तएँ ॥२॥
'धणेँ विहाणेँ कहेँ एउ करेसउ । तं अब्भुउ प्फर-जुउ दंसेसउ ॥३॥
दारुणु रण-कडिल्लु मण्डेसउ । जीविउ विसरिसु दवलु उवेसउ ॥४॥
चाउरङ्गु बलु चउ-धुर देसी । जामइ खंडिया-जुत्ति लएवी ॥५॥
पडिकलसउ रहवर साडेवा । हय-गय-जोह-छोह पाडेवा ॥६॥
खग्ग-लट्ठि करेँ कत्ति करेवी । जयसिरि-लंह सीह कड्ढेवी ॥७॥
सुहड-कबन्धु लेक्खु पिच्छेसउ । जीवग्गाहि रिउ-राहवु लएवउ ॥८॥

[५] रावण थोड़ी ही दूर पर गया था कि उसने देखा कि कोई योद्धा अपनी पत्नीसे कह रहा है, "हे हिरणके समान नेत्रोंवाली हंसगति सुन्दरी, क्या तुम स्वामीके प्रसादको भूल गयीं। वह सेवा, वह चाकरी, वह अयाचित जीवनदान, मणियों से जड़ित वह ऊँचा आसन, वह मत्तगजोंके कन्धों पर चढ़ना, वह मेखला, वह कण्ठका आभूषण, वे वस्त्र और वह सत्कार। अपने हाथसे फूल और पान देना। वह भोजन और सुवासित कचौड़ी, वह वस्त्र व भारी सोना। इसके अतिरिक्त और कई प्रसाद लंकेश्वरके मेरे ऊपर हैं। जो इनमें से एकको भी नहीं मानता, निश्चय ही वह सातवें नरकमें जायगा। हे रमणीये, मैं उसके उपकारका प्रतिदान युद्धमें चुकाऊँगा। रामके ऊपर मैं रंगबिरंगे थर्राते तीर बरसाऊँगा ॥१-९॥

[६] यह सुनकर, रावण वहाँ गया, जहाँ मन्दोदरीका पिता मय था। जालीद्वार गवाक्षके पास बैठकर, वह चुपचाप सुनने लगा कि मय अपनी पत्नीसे क्या कह रहा है। वह अपनी पत्नीसे कह रहा था, "हे प्रिये, कल मैं बहुत बड़ा जुआ (रणद्यूत) खेलूँगा। भयंकर रणद्यूत (कड्डित्त) रचाऊँगा और उसमें अपने अमूल्य जीवनकी बाजी लगा दूँगा। चार दिशाओंमें चतुरंग सेनाको लगा दूँगा, खड़िया मिट्टीसे लकीर खींचूँगा, (खडिया जुत्ति), मैं शत्रुके श्रेष्ठ रथोंको आहत कर दूँगा, गज, अश्व और योधाओंमें क्षोभकी लहर उत्पन्न कर दूँगा, तलवार रूपी पाँसा (फलि) अपने हाथमें लेकर, जयश्री की एक लम्बी लकीर खींच दूँगा। सुभटोंके धड़ोंको इकट्ठा करूँगा, और शत्रुओंको इस प्रकार दबोचूँगा कि उनके प्राण ही न रह

घत्ता

दण्डासहिउ कियन्तु लुहइ लीह पिसुण-वयणहों ।
णासइ महु जिह कें वि अहेउ अणेरिस दुव्वयणहाँ ॥९॥

[७]

तं णिसुणेंवि रावणु रुट्ठ-मणु । सञ्चल्लिउ मारिचहों भवणु ॥१॥
पच्छण्णु परिट्ठिउ पवर-भुउ । सहुँ कन्तएँ सो वि चवन्तु सुउ ॥२॥
'कलुएँ सोणिय-सम्मज्जणएँ । पइँ सेवउ महुँ रण-मज्जणएँ ॥३॥
रह-गय-वहिरुह-गन्धामलएँ । वर-असिवर कड्ढा-थामलएँ ॥४॥
णरवर-विहुरङ्ग-मङ्ग-करणें । जस-उव्वट्टणें मउ-मल-हरणें ॥५॥
अयलङ्कि-हरिद्द-विहूसियएँ । समरङ्गणें कुण्ड-पईसियएँ ॥६॥
परबल-जलोहेँ मेल्लावियएँ । पहरण-हुववहग्गि-सन्तावियएँ ॥७॥
भूगोयर-रुहिर-तोय-भरिएँ । असिधारा-णियरें पवित्थरिएँ ॥८॥

घत्ता

वइसेंवि करि-सिर-वीढें पहामि पइएँ णीसङ्कउ ।
जेण ण ढुक्कइ कन्तें जम्में वि अयस-कलङ्कउ' ॥९॥

[८]

तं णिसुणेंवि वयणु भयावणु । सुअ-सारणहँ घरइँ गउ रावणु ॥१॥
एक्कें सुणु सुरउ णिय-मज्झहें । 'कलुएँ चप्पमि कन्तें रण-सेज्जहें ॥२॥
भुअग-त्तमहों मज्झें णिक्खमहें । चाउरङ्ग-साहण-चउपायहें ॥३॥
गयवर-गत्त पईहर-गत्तहें । अन्त-वलन्त-सुबन्ध-सउत्तहें ॥४॥
हय-रुण्ड-विच्छड्डुत्थरियहें । करि-कुम्भोवहाण-वित्थरियहें ॥५॥
जस-पच्छाय-हत्थिणिया-रूढहें । वारण-मत्तवारणालिद्धहें' ॥६॥

जायें। मैं दण्ड सहित साक्षात् यमराज हूँ। मैं शत्रुओंके राजा-का नाम तक मिटा दूँगा, और समस्त शत्रु सेनाको जीतकर, रावणको भेंट चढ़ा दूँगा।" ॥ १-९ ॥

[७] यह सुनकर, रावण मन ही मन प्रसन्न हुआ। वह मारीचके घरकी ओर मुड़ा। विशालबाहु वह, पीछे जाकर खड़ा हो गया। उसने सुना कि मारीच अपनी पत्नीसे कह रहा था, "कल मैं रक्तरंजित युद्धसागरमें रणस्नान करूँगा। उस समुद्रमें रथ और गजोंसे गन्ध बह रही होगी। उत्तम तलवारोंके लोहूसे जो बहुत विस्तीर्ण है। जिसमें नर-श्रेष्ठोंके अंग कट-पिट रहे हैं, जो यशको उखाड़ देता है, और बहुत सी बुराइयों का अन्त कर देता है। जयश्री की हल्दीसे जो विभूषित है। जिसमें बड़े-बड़े कुण्ड दिखाई दे रहे हैं, जिसमें शत्रुसेना रूपी समुद्र आ मिला है, जिसमें महारथियोंका शोकानल शान्त हो जाता है। विद्याधरोंके रक्तसे, जो भरा हुआ है, और तलवारकी धाराओंसे भरपूर जो बहुत विशाल है। ऐसे उस विशाल रण समुद्रमें, हाथीकी पीठपर बैठकर मैं कल स्नान करूँगा। हे प्रिये, जिससे मुझे इस जन्ममें अयशका कलंक न लगे ॥ १-९ ॥

[८] इन क्रूर वचनोंको सुनकर, रावण सुत-सारणोंके घर गया। उनमें-से एक अपनी पत्नीके सामने कह रहा था, "हे प्रिये कल मैं रणकी सेजपर चढ़ूँगा, उस सेज पर जो तीनों लोकोंमें विख्यात है, चारों सेनाएँ जिसके चार पाये हैं। उत्तम-उत्तम गजोंके शरीर, जिसकी लम्बी आकृति बनाते हैं। उसकी सेजके बीचमें सुन्दर हिलती हुई डोरियाँ लटक रही होंगी। हड्डियों और धड़ोंके समूहसे आक्रान्त गजकुम्भोंके तकिये जिसमें भरे पड़े हैं। जिसमें यशकी पताका लिये हुए लोग हथ-नियों और मतवाले गजों पर आरूढ़ हैं।" एक और ने कहा,

अप्पणेण वुत्तु 'सुणु सुन्दरि । गुरु-णिब्भच्छें वियड-डरें किव्वाआरें ॥७॥
रहवर-गयवर-णरवर-बलियहँ । धय-तोरणहँ समर-वाहलियहँ ॥८॥

घत्ता

असि-चंचाण लएवि हणुहणुकारु करेवउ ।
कलहें सुहड-सिरेहिँ महँ भिन्दुएंण रमेवउ' ॥९॥

[९]

दुव्वार-वइरि-विणिवारणहुँ । तं वयणु सुणेवि सुअ-सारणहुँ ॥१॥
स-कलत्तहोँ गहिय-पसाहणहोँ । गउ मन्दिरु तोयदवाहणहोँ ॥२॥
थिउ आल-गवक्खएँ पइसरेंवि । णं केसरि गिरि-गुह पइसरेंवि ॥३॥
णिय-णन्दणु गलगज्जन्तु सुउ । वयणुब्भडु रहसुब्भिण्ण-भुउ ॥४॥
'णिय लील करन्तें तउ दक्खवमि । हउँ कलहें रण-वमन्तु रवमि ॥५॥
रिउ-सोणिय-घुसिणें-चच्चियउ । मज्जण-चच्चरि-परिअञ्चियउ ॥६॥
जसु णेमि विहञ्जेंवि सुरवरहुँ । जम-वरुण-कुबेर-पुरन्दरहुँ ॥७॥
रावण-मण-णयण-सुहावणिय । दावमि दणु-दवणा-मज्जणिय ॥८॥

घत्ता

करि-कुम्भ-त्थल-पीढें अरि वार-त्ती रम्भमि ।
लक्खण-राम-सरीरेंहिँ एमि हिंदोला वन्धमि' ॥९॥

[१०]

तं वयणु सुणेंवि घणवाहणओं । दुज्जयहोँ अणाहिय-साहणहोँ ॥१॥
गउ रावणु पर-मण-डहणु । जहिँ जम्बुमालि पइजारुहणु ॥२॥
तेण वि गलगज्जिउ गेहिणिहेँ । सीहेण व अग्गएँ सीहिणिहेँ ॥३॥

"सुन्दरी सुन, सचमुच तुम्हारे नितम्ब भारी हैं, उर विशाल है और उदर क्षीण है। निश्चय ही, मैं कल युद्धके मैदानमें खेल रचाऊँगा। उस मैदानमें जो श्रेष्ठ अश्वों, गजों और मनुष्योंसे खचाखच भरा है, और ध्वज-तोरणोंसे सजा। "उस युद्धके मैदानमें, मैं सचमुच तलवाररूपी चौगान लेकर, हुँकारोंके साथ, शत्रुसिरोंकी गेंदोंसे खेल खेलूँगा" ॥१-९॥

[६] दुर्वार शत्रुओंको हटानेमें समर्थ सुत-सारणके वचन सुनकर रावण वहाँ गया जहाँ तोयदवाहनका प्रासाद था। वहाँ वह अन्तःपुरके साथ सजधज कर बैठा हुआ था। वह गवाक्ष-के जालमें जाकर ऐसा बैठ गया, मानो सिंह गिरिगुहामें घुस-कर बैठ गया हो। रावणने अपने ही बेटेको कहते हुए सुना। उसके वचन अत्यन्त उद्भट थे, और हर्षसे उसकी भुजाएँ फड़क रही थीं। वह कह रहा था, "प्रिये, मैं तुम्हें अपनी लीला का प्रदर्शन बताऊँगा। कल मैं युद्धरूपी वसन्तमें क्रीड़ा करूँगा। शत्रुके रक्तकपूरसे अपनेको भूषित करूँगा, और सज्जनोंके साथ चाचर खेल खेलूँगा, यम वरुण कुबेर इन्द्र आदि बड़े-बड़े देवताओंको नष्ट कर यश लूँगा। रावणके मन और नेत्रोंको अच्छी लगनेवाली सीतादेवी उसे दिलाऊँगा। हाथियोंके गण्डस्थलोंके पीठपर असिरूपी वरांगनाका सन्धान करूँगा, और बादलोंमें राम-लक्ष्मणके तीरोंसे हिंदोल (झूला) बनाऊँगा ॥१-९॥

[१०] अजेय और अनिर्दिष्ट साधन मेघवाहनके ये वचन सुनकर रावण वहाँ गया, जहाँ दूसरेके मनका रमण करनेवाला जम्बुमाली कृतप्रतिज्ञ बैठा हुआ था। वह भी अपनी पत्नीसे गरज कर इस प्रकार कह रहा था, मानो सिंह सिंहनीसे कह रहा हो। उसने कहा, "हे सुन्दरी, सुनो कल मैं क्या करूँगा?

सुणु कन्तें कहेँ काइँ करमि । जिह खय-पाउसु तिह उत्थरमि ॥४॥
भमरुल-मत्त-मयगल-घणेँहिँ । दडि-दद्दुर-भेरि-वरहिणेँहिँ ॥५॥
चन्दिणेँहिँ लवन्तेँहिँ वन्दिणेँहिँ । पडरण-तुरवाएँहिँ बहु-विहेँहिँ ॥६॥
रहवर-पवरब्भाडम्बरेँहिँ । असिवर-विज्जुलेँहिँ भयङ्करेँहिँ ॥७॥

घत्ता

कुन्त-वलाया-पन्ति धणु-सुरधणु दरिसन्तउ ।
वरिसमि सर-धारेँहिँ पर-वलेँ पलउ करन्तउ' ॥८॥

[११]

तं णिसुणेँवि णाउ लङ्केसु जहिँ । स-कलत्तउ इन्दइ-राउ जहिँ ॥१॥
तेण वि गलगज्जिउ णिय-भवणेँ । णावइ खय-जलहरेण गयणेँ ॥२॥
'हउँ कल्लएँ पलय-हुआसु रणेँ । लग्गेसमि राहव-सेण्ण-वणेँ ॥३॥
पहरण-सिर-तीर-पहर-पउरेँ । कुञ्जर-णरवर-तरुवर-णियरेँ ॥४॥
भुवदण्ड-चवल-ओलोलि-धरेँ । करयल-पल्लव-णह-कुसुम-भरेँ ॥५॥
मणहर-कामिणि-कय-वेल्लहलेँ । छत्त-धय-सुक्क-दवग्ग-बहलेँ ॥६॥
हय-गय-रणवर-णाणाविहएँ । रिउ-पाय-समुड्डाविय-विहएँ ॥७॥
उत्तङ्ग-तुरङ्गम-हरिण-हरेँ । हरि-हलहर-वर-रहवर सिहरेँ ॥८॥

घत्ता

तहिँ हउँ पलय-दवग्गि कल्लएँ वणेँ लग्गेसमि ।
पर-वल-काणणु सव्वु छारहोँ पुञ्जु करेसमि' ॥९॥

[१२]

तं वयणु सुणेँवि सच्छलु तहिँ । मत्तु कुम्भयण्णु णिय-भवणेँ जहिँ ॥१॥
तेण वि पवुत्तु 'हेँ हंसगइ । कल्लएँ रण-णहयलेँ माणुवइ ॥२॥

कल मैं प्रलयकालकी वर्षाकी भाँति उठूँगा। उसमें मतवाले मेघ डूबते-उतराते होंगे, उनकी आवाज दवि, दर्दुर, भेरी और माक की ध्वनि के समान होगी। प्रशस्त शस्त्र करनेवाले स्वामियोंकी जगह उसमें पपीहे होंगे। उसमें हथियारोंकी विविध हवाएँ चल रही होंगी। रथवर घनघटाओंका काम देंगे। वह पावस, तलवारोंकी बिजलियोंसे सचमुच भयंकर होगा। छत्र उसमें बगुलोंकी कतारकी भाँति लगते हैं, और धनुष इन्द्र धनुषकी भाँति। तीरोंकी बौछार कर मैं शत्रुसेनामें प्रलय मचा दूँगा ॥१-८॥

[११] यह सुनकर लंकेश वहाँ गया, जहाँ पर इन्द्रजीत अपनी पत्नीके साथ था। वह भी अपने भवनमें ऐसे गरज रहा था, मानो आकाशमें दुष्ट मेघ गरज रहे हों। वह कह रहा था, "कल मैं राघवके सैनिक वनमें प्रलयकी आग बन जाऊँगा। प्रहरण सिप्पीर और प्रहरोंसे महान् उस वनमें दुर्धर मनुष्योंके पेड़ होंगे, जो भुजदण्डोंकी शाखाएँ धारण करता है। जो हथेलियों और अँगुलियोंके कुसुमोंसे पूरित है, सुन्दर स्त्रियों की लताओं और बिल्वफलोंसे युक्त है। छत्र और ध्वजाएँ जिसमें रूखे पेड़ हैं। अश्व और गज तरह-तरहके वनचर हैं, और जिसमें शत्रुओंके प्राणरूपी पंछी बस रहे हैं। त्रस्त अश्वरूपी हरिण जिसमें हैं। और जो राम एवं लक्ष्मणरूपी शिखरोंसे युक्त है। ऐसे उस सघन वनमें मैं कल प्रलयकी आग लगा दूँगा। और समस्त शत्रुरूपी वनको खाक कर दूँगा ॥१-९॥

[१२] यह वचन सुनकर, रावण वहाँ गया जहाँ योद्धा कुम्भकर्ण अपने भवनमें था। वह भी अपनी पत्नीसे कह रहा था, 'हे हंसगति भानुमती, कल युद्धरूपी आकाशमें ज्योतिष चक्र बन जाऊँगा, एकदम दुर्दर्शनीय, भयंकर और अगम्य।

दुप्पेक्खु मयङ्कुरु दुप्पगउ । सइँ हासमि ओहुल्ल-वक्कु हउँ ॥३॥
करिकुम्भ-कुम्भु कोमल-घणु । दुव्वार वार-वारणवहणु ॥४॥
णरवर-गक्खसु गइन्द-गहु । भड-थड्ड-खण्ड-सग्गी-णिवहु ॥५॥
अदिनह-जोह-सामन्त-दिणु । सिरिसिद्ध (?)-गगणाणि [illegible]-दिणु ॥६॥
साहण-उत्तर-दाहिण-अयणु । अणगणण-महारह-सङ्कमणु ॥७॥
दहमुह-विड्डप-आरद्ध-मणु । हरि-हलहर-चन्द-सूर-गहणु ॥८॥

घत्ता

रह गय घट्टन्तु हउँ पुणु कहि मि ण सण्ठमि ।
सव्वहाँ पलउ करन्तु धूमकेउ जिह उट्ठमि ॥९॥

[१३]

मह-बोल्लउ णिसुणेंवि दहवयणु । हरिसिय-भुउ पप्फुल्लिय-णयणु ॥१॥
अण्णइ सिक्कारेँ वि णीसरिउ । कहु णिय-अन्तेउरेँ पइसरिउ ॥२॥
णेउर-झङ्कार-घोर-सरएँ । कञ्ची-कलाव-रङ्खोलिरएँ ॥३॥
मणि-कडय-मउड-चूडाहरणेँ । सिय हार-फार-माहव्वहणेँ ॥४॥
कुण्डल-केऊर-विहूसियएँ । विब्भम-विलास-अहिविलसियएँ ॥५॥
ससि-मुहेँ मिग-णयणेँ हंस-गमणेँ । णं भसलु पइट्ठउ भिसिणि-वणेँ ॥६॥
फुल्लन्तु वराणण-सयदलहँ । कप्पूर-दूरगय-परिमलहँ ॥७॥
उक्कोवण-केसर-णियर-वसु । गेण्हन्तउ रय-मयरन्द-रसु ॥८॥
पहु एम-अन्तेउरेँ परिभमिउ । सुविहाणु भाणु ता उग्गमिउ ॥९॥

घत्ता

हत्थ-पहत्थहुँ झुज्जेँ मल-मलपुहिँ ण थाइउ ।
णाइँ पलोविउ काले भोयण-कज्जएँ आइउ ॥१०॥

गजकुम्भ उसमें कुम्भराशि होगी, धनुष, धनराशि, वह धनुष जो दुर्वार तीरोंको धारण करता है, मनुष्य श्रेष्ठ जिसमें नक्षत्र होंगे। गजेन्द्र, मह और योद्धाओंके धड़ोंके खण्ड राशिके समूह होंगे। लड़ते हुए योधा और सामन्त दिन होंगे एवं सेनाएँ उत्तरायण और दक्षिणायनकी जगह समझिए। तथा महारथों-को संक्रमणकाल समझना चाहिए। रावण कुद्धमन राहु है। राम और लक्ष्मण रूपी सूर्य-चन्द्रका ग्रहण होगा। अश्व और रथ टकरा जायँगे, परन्तु मैं कहीं भी नहीं ठहरूँगा, मैं धूमकेतु की तरह उठूँगा और सबका नाश कर दूँगा ॥१-९॥

[१३] उस योद्धाके ये शब्द सुनकर रावणकी भुजाएँ खिल गयीं और आँखें प्रसन्न हो उठीं। वह स्वयं अपना शृंगारकर बाहर निकला, और शीघ्र ही उसने अपने अन्तःपुरमें प्रवेश किया। वह अन्तःपुर जिसमें नूपुरोंकी झंकारके स्वर गूँज रहे थे, करधनियोंके समूहसे जिसमें कम्पन हो रहा था। मणि, कटक, मुकुट, चूड़ा और आभरणोंसे जो भरपूर था। जो श्रीहार की चमकके भारसे उद्वेलित हो रहा था। जो कुण्डल और केयूर से विभूषित था, और विभ्रम विलाससे अधिविलसित था। जिसमें मुख चन्द्रके समान, नेत्र मृगके और गति हंसके समान थी। ऐसे उस अन्तःपुरमें रावणने ऐसे प्रवेश किया मानो भ्रम-रियोंके वनमें भौंरेने प्रवेश किया हो। उत्तम अंगनाओंके उन शतदलोंको उसने चूम लिया, जिनसे दूर-दूर तक कपूरकी गन्ध उड़ रही थी। उद्दीपन रूपी केशरके वशमें होकर, वह काम-क्रीड़ाके रसका पान करता रहा। इस प्रकार वह अन्तःपुरमें विहार करता रहा। इतनेमें सूर्योदय हो गया। हस्त-प्रहस्तके उस युद्धमें जो मरे हुए योद्धा उठकर नहीं दौड़ सके, उससे लगा मानो महाकाल भोजनकी इच्छासे आया हो ॥१-१०॥

[१५]

जेहिँ जेहिँ रयणिहिँ गलगज्जिउ । जेहिँ जेहिँ णियय-कज्जु विवज्जिउ ॥१॥
जेहिँ जेहिँ लङ्काहिउ इच्छिउ । जेहिँ जेहिँ रण-भारु पडिच्छिउ ॥२॥
ताहँ ताहँ पप्फुल्लिय-वयणें । पेसिय णिय पसाय दहवयणें ॥३॥
कासु वि कुण्डल-जुअलु णिउत्तउ । कहों वि कडउ कण्ठउ कडिसुत्तउ ॥४॥
कहों वि मउडु कासु वि चूडामणि । कहों वि हारु कासु वि [illegible] ॥५॥
कहों वि गइन्दु तुरङ्गमु कासु वि । थोडउ कहों वि दिणार-सहासु वि ॥६॥
कहों वि [illegible] कहों वि सुवण्णाहों । अण्णहों लक्खु कोडि पुणु अण्णहों ॥७॥
कहों वि फुल्लु तम्बोलु स-हत्थें । कहों वि पसाहणु सहुँ वर-वत्थें ॥८॥

घत्ता

जे पट्ठविय पसाय ते णरवरें हिँ पवण्णें हिँ ।
णामेंवि सिर-कमलाइँ लइय स इं भुअ-दण्डें हिँ ॥९॥

[६३. तिसट्ठिमो संधि]

रवि उग्गमें अहिणव-गहिय-पसाहणइँ ।
सण्णद्धइँ राम-दसाणण-साहणइँ ॥

[१]

सो णीसरिउ रामणो समउ साहणेणं ।
रह-गय-तुरय-जोह-पञ्चमुह-वाहणेणं ॥१॥

पडु-पडह-सङ्ख-भेरी-रवेण कंसाल-ताल-दडि-रउरवेण ॥२॥
कोलाहल-काहल-णीसणेणं पञ्चविह-मउन्दा-भीसणेण ॥३॥
घुम्मुक्क-करड-टिविला-धरेण झल्लरि-रुञ्जा-डमरुअ-करेण ॥४॥
पडिवक्ख-हुडुक्का-बज्जिरेण घुम्मन्त-मत्त-गय-गज्जिरेण ॥५॥

[४] इस प्रकार जिन-जिन निशाचरोंने गर्जना की थी, जिस-जिसने अपना काम छोड़ दिया था, जिन्हें रावणने चाहा और जो युद्धभार उठानेकी इच्छा प्रकट कर चुके थे, वहाँ-यहाँ, प्रसन्नमुख रावणने अपना प्रसाद भिजवा दिया। किसी को कुण्डलोंका जोड़ा दिया, और किसीको कटक, कण्ठा और कटिसूत्र। किसीको मुकुट, किसीको चूड़ामणि, किसीको माला और किसीको इन्द्रमणि, किसीको गजेन्द्र और किसीको अश्व और किसीको हजारों दीनारें दीं। किसीको सोनेके भारसे तोल दिया, और किसी औरको लाखोंकी भेंट दे दी, किसीको अपने हाथसे पान दिया, और किसीको अपने हाथसे प्रसाधन एवं उत्तम वस्त्र दिये। जब रावणने प्रसाद भेजा तो प्रचण्ड मनुष्य श्रेष्ठोंने अपना सिर कमल झुकाकर, अपने बाहु दण्डों-से उसे स्वीकार कर लिया ॥१-९॥

●

त्रेसठवीं सन्धि

सूर्योदय होनेपर राम और रावणकी सेनाएँ नये प्रसाधनों के साथ तैयार होने लगीं।

[१] दशाननने अपनी सेनाके साथ कूच कर दिया। पट, पटह, शंख और भेरी की ध्वनियाँ गूँज उठीं। कसाल, ताल और दडि की आवाजें होने लगीं। कोलाहल और काहल का शब्द हो रहा था। इसी प्रकार माउन्द वाद्य की ध्वनि हो रही थी। घुम्मुक करट और टिविल वाद्य भी उसमें थे। झलरी रुञ्जा और डमरुक वाद्य, सेना के हाथ में थे। प्रतिढक्क और हुडुक्क बज रहे थे। घूमते हुए मतवाले गज गरज रहे

तणइच्चिय-कणय-विहूसिय-सिरेण । गुमुगुमुगुमन्त-दुरेहन्दिरेण ॥६॥
पक्खरिय-तुरय-पवणुब्भडेण । धूवन्त-धवल-धुअ-धयवडेण ॥७॥
मण-गमणाभेल्लिय-सन्दणेण । जम-वरुण-कुबेर-विमद्दणेण ॥८॥
वन्दिण-जयकारुग्घोसिरेण । सुरवहुअ-सत्थ-परिओसिरेण ॥९॥

घत्ता

सहुँ सेण्णेण महइ दसाणणु णीसरिउ ।
छण-चन्दु व तारा-णियरें परियरिउ ॥१०॥

[२]

सण्णज्झन्ति जाव सण्णद्धएँ दसासे ।
खुहिय महोवहि व्व सु-समुद्दिएँ विणासे ॥१॥

सण्णज्झइ ससहसु जम्बुमालि । किङ्किन्धु कामरु उद्धमरु मालि ॥२॥
सण्णज्झइ मउ मारीचि अण्णु । इन्दइ घणवाहणु भाणुकण्णु ॥३॥
सण्णज्झइ जक्खु अहिमाण-खम्भु । पञ्चमुहु णियम्बु सइम्भु सम्भु ॥४॥
सण्णज्झइ चन्दुहासु अक्कु । धूमक्खु जयाणणु मयरु णक्कु ॥५॥
पडिवक्खेँ वि सण्णज्झन्ति वीर । अङ्गय-गवय-गवक्ख धीर ॥६॥
णल णील-विराहिय-कुमुअ-कुन्द । जम्बव-सुसेण-दहिमुह-महिन्द ॥७॥
तारावइ-तार-तरङ्ग-रम्भ । सोमित्ति-हणुव अहिमाण-खम्भ ॥८॥
अक्कोस-दुरिय-सन्ताव-पहिय । णन्दण-भामण्डल राम-सहिय ॥९॥

घत्ता

सण्णद्धइँ एम राम-रावण-बलइँ ।
आलग्गाइँ णं खय कालेँ उवहि-जलइँ ॥१०॥

थे। अपने फैले हुए कानोंसे गज अपने गण्डस्थलोंको पीट रहे थे। भ्रमर उनपर गूँज रहे थे। कवच पहने हुए अश्व, पवनकी तरह उद्भट हो रहे थे। कम्पनशील शुभ्र ध्वजाएँ घूम रही थीं। मनकी भी गतिको छोड़ देनेवाले रथ उसमें थे। वह सेना यम, कुबेर और वरुणको चकनाचूर करनेमें समर्थ थी। बन्दीजनोंका जयघोष दूर-दूर तक फैल रहा था। आकाशमें देवांगनाएँ यह सब देखकर खूब सन्तुष्ट हो रही थीं। जब दशानन सेनाके साथ कूच कर रहा था तो ऐसा लगता मानो पूर्ण चन्द्र ताराओंके साथ घिरा हुआ हो ॥१-१०॥

[२] दशाननके तैयार होनेपर दूसरे योद्धा भी तैयारी करने लगे। उस समय ऐसा लगा मानो महाविनाश आनेपर महासमुद्र ही क्षुब्ध हो उठा हो। जम्बुमाली हर्षके साथ तैयार होने लगा। डिंडिम, डामर, डुमर और माली भी तैयार होने लगे। दूसरे और मद और मारीच तैयार होने लगे। इन्द्रजीत मेघवाहन और भानुकर्ण भी तैयार होने लगे। अभिमानस्तम्भ 'जर' भी तैयार होने लगा, पंचमुख, नितम्ब, स्वयम्भू और शम्भू भी तैयार होने लगे। उद्दाम चन्द्र और सूर्य भी तैयार होने लगे। धूम्राक्ष, जयानन, मकर और मक्र तैयार होने लगे। इसी प्रकार शत्रुसेनामें वीर तैयारी करने लगे। अंग, अंगद, गवय और गवाक्ष जैसे धीर भी तैयार होने लगे। नल, नील, विराधित, कुमुद, कुन्द, जाम्बवान्, सुसेन, दधिमुख और महेन्द्र भी तैयार होने लगे। तारापति, तार, तरंग, रंभ, अभिमानके स्तम्भ, सौमित्र, हनुमान्, अक्रोश, दुरित, सन्ताप, पथिक और राम सहित भामण्डल भी तैयार होने लगे। इस प्रकार राम और रावण की सेनाएँ आपसमें भिड़ गयीं। उस समय ऐसा लगता था मानो प्रलयकालमें दोनों समुद्र आपसमें टकरा गये हों ॥१-१०॥

[३]

भिडियइँ बे वि सेण्णइं आउ जुज्झु घोरो ।
कुण्डल-कडय-मउड-णिवडन्त-कणय-दोरो ॥१॥
हणहणहणकारु महा-रउद्दु । छणछणछणन्त-गुण-सिन्ध-सद्दु ॥२॥
करकरयरन्त-कोदण्ड-पयरु । थरथरहरन्त-णाराय-णियरु ॥३॥
खणखणखणन्त-तिक्खग्ग-खग्गु । हिलिहिलिहिलन्त-हय-चञ्चलग्गु ॥४॥
गुलगुलगुलन्त-गयवर-विसालु । हणुहणु-भणन्त-णरवर-वमालु ॥५॥
फुप्फुस-वस-णिग्गयन्त-मालु । धावन्त-कलेवर-सद्द-करालु ॥६॥
झलझलझलन्त-सोणिय-पवाहु । छिज्जन्त-चक्कण-तुट्टन्त-वाहु ॥७॥
णिवडन्त-सीसु णच्चन्त-रुण्डु । ओणल्ल-तुरय-धय-छत्त-दण्डु ॥८॥
तहिँ तेहएँ रणेँ रण-भर-समत्थु । राहव-किङ्करु सर-चाव-हत्थु ॥९॥

घत्ता

सीहरहु धवल-सीह-सन्दणेँ चडिउ ।
सन्तावणु सहुँ मारिचेँ अब्भिडिउ ॥१०॥

[४]

बेण्णि वि सीह-सन्दणा बे वि सीह-चिन्धा ।
बेण्णि वि चाव-करयला बे वि जगेँ पसिद्धा ॥१॥
बेण्णि वि जस-लुद्ध विरुद्ध कुद्ध । बेण्णि वि वंसुज्जल कुल-विसुद्ध ॥२॥
बेण्णि वि सुरवहु-आणन्द-जणण । बेण्णि वि सत्तुत्तम सत्तु-हणण ॥३॥
बेण्णि वि रण-धुर-धोरिय महन्त । बेण्णि वि जिण-सासणेँ भत्तिवन्त ॥४॥
बेण्णि वि दुज्जय जय-सिरि-णिवास । बेण्णि वि पणइ-यण-पूरियास ॥५॥
बेण्णि वि णिसियर-णरवर-वरिट्ठ । बेण्णि वि राहव-रावणहँ इट्ठ ॥६॥
बेण्णि वि जुज्झन्ति सिलीमुहेहिँ । णं गिरि अवरोप्परु सरि-मुहेहिँ ॥७॥

[३] दोनों सेनाएँ आपसमें टकरा गयीं। दोनोंमें भयंकर युद्ध हुआ। कुण्डल, कटक, मुकुट और सोनेके सूत्र टूट-टूटकर गिरने लगे। मारो-मारो की भयंकर ध्वनि हो रही थी। धनुष और प्रत्यञ्चा की छन-छन ध्वनि हो रही थी। धनुष-समूह कड़-मड़ा रहे थे। तीरोंका समूह 'घर-घर' कर रहा था। तीखी तल-वारें खनखना रही थीं! चंचल अश्व हिनहिना रहे थे। विशाल गज गरज रहे थे। श्रेष्ठ योद्धा "मारो मारो" चिल्ला रहे थे।

भयंकर शव और शरीर दौड़ रहे थे। रक्तकी धारा उछल रही थी। पैर कट रहे थे और हाथ टूट रहे थे। सिर गिर रहे थे। धड़ नाच रहे थे। अश्व, ध्वज, छत्र और दण्ड झुक चुके थे। ऐसे उस युद्धमें, रणभारमें समर्थ, रावणका अनुचर, हाथ-में धनुष बाण लेकर तैयार हो गया। सिद्धार्थ सफेद सिंहोंके रथपर चढ़ गया। सन्तापकारी वह मारीचके साथ, युद्धमें जा भिड़ा ॥१–१०॥

[४] दोनोंके रथोंमें सिंह जुते हुए थे। दोनोंकी ध्वजाओं-पर सिंह के चिह्न थे। दोनोंके हाथोंमें धनुष थे। दोनों ही विश्व विख्यात थे। दोनों ही यशके लोभी विरुद्ध और क्रुद्ध थे। दोनोंका ही वंश उज्ज्वल और विशुद्ध था। दोनों ही देवांग-नाओंको आनन्द देनेवाले थे। दोनों ही सज्जनोंमें उत्तम और शत्रुओंके संहारक थे। दोनों ही महान् थे और युद्धका भार उठानेमें समर्थ थे। दोनों ही जिनशासनमें भक्तिरत थे। दोनों ही अजेय और विजयलक्ष्मीके आश्रय थे। दोनों ही विनतजनोंकी आशा पूरी करने वाले थे। दोनों ही निशाचर राजाओंमें श्रेष्ठ थे, दोनों ही क्रमशः राम और रावणके लिए इष्ट थे। दोनों ही तीरोंसे युद्ध कर रहे थे। वे ऐसे लगते थे मानो नदी मुखोंसे पहाड़ आपसमें प्रहार कर रहे हैं। भय-भयंकर सन्तापकारी

मारिचहों भय-मांसासणेण । धणु छिण्णु णवर सन्तावणेण ॥८॥
तेण वि लहुँ चिर-पेसिय-सरेंहिं । संसारु व परम-जिणेसरेंहिं ॥९॥

घत्ता

विहिं मि रणेँ णिय-णिय-चावइँ चत्ताइँ ।
सप्पुरिसेंहिं णं णिग्गुणइँ कलत्ताइँ ॥१०॥

[५]

घत्तेंवि धणुवराइँ लइओ गयासणीओ ।
णाइँ कयन्त-दाढओ जग-विणासणीओ ॥१॥
णं पिसुण-मइउ दप्पुब्भडाउ । णं असइउ पर-णर-लम्पडाउ ॥२॥
णं कुणइउ मस-मांसासणाउ । णं दुम्महिलउ कलहण-मणाउ ॥३॥
णं दिट्ठिउ काल-सणिच्छराहँ । णं कुडिलिउ दुस्संवच्छराहँ ॥४॥
णं दित्तिउ पलय-दिवायराहँ । णं वीचिउ खय-रयणायराहँ ॥५॥
तिह लउडिउ भिउडि-भयङ्कराहँ । दासरहि-दसाणण-किङ्कराहँ ॥६॥
पेहन्ति करेंहिं रयणुज्जलाउ । णं मेह-णियम्बेंहिं विज्जुलाउ ॥७॥
मुच्चन्तिउ सङ्घट्टन्ति केम्व । गह-चक्कणें गह-पन्तीउ जेम्व ॥८॥
णहें अमर-विमाणइँ सङ्कियाइँ । गय-घाय-दवग्गि-तिडिक्कियाइँ ॥९॥

घत्ता

मारिचेंण स-रहु स-सारहि स-धउ हउ ।
सङ्कूरें वि हडुहुँ पोट्टलु णवर कउ ॥१०॥

[६]

पाडिएँ राम-किङ्करें रावण-किङ्करेंण ।
सीहणियम्बु कोक्किओ पहित्थ-णरवरेंण ॥१॥

सिद्धार्थने मारीचका धनुष छिन्न-भिन्न कर दिया। मारीचने भी, अपने चिरप्रेषित तीरोंसे सिद्धार्थका धनुष दो टूक कर दिया, उसी प्रकार, जिस प्रकार परम जिनेश्वर संसारको नष्ट कर देते हैं। युद्धमें उन दोनों वीरोंने अपने-अपने धनुष, उसी प्रकार छोड़ दिये, जिस प्रकार सज्जन पुरुष अपनी निर्गुन पत्नियोंको छोड़ देते हैं ॥१–१०॥

[५] अपने उत्तम धनुषोंको छोड़कर उसने गदा और वज्र ले लिये। दुनियाको विनाश करनेवाली कृतान्तकी दाढ़के समान था। वह सर्पसे उद्धत भटकी तरह दुष्ट बुद्धि था। असती स्त्री की तरह, पर पुरुष (शत्रु दूसरा आदमी) से लम्पट स्वभाव था, कुगतिकी तरह, भयसे डरावना था, दुष्ट स्त्रीकी तरह कलह स्वभाव था। वह काल और शनिकी तरह दिखाई दिया, मानो वह खोटे वर्षकी गलीके समान था। मानो वह प्रलयके सूर्यकी दीप्तिके समान था, मानो प्रलय समुद्रकी तरंगकी भाँति था। भौंहोंसे अत्यन्त भयंकर राम और रावणके उन अनुचरोंके हाथोंसे रत्नोज्ज्वल वह गदा–वज्र ऐसा सोह रहा था मानो मेघोंके बीच बिजली हो। वे दोनों टकराकर और अलग हो जाते, मानो ग्रहोंसे ग्रह टकराकर अलग हो जाते हों। दोनोंकी गदाओंके आघातसे अग्नि-ज्वाला फूट पड़ती, जो एक क्षणके लिए आकाशमें देवविमानकी शंका कर देती। अन्तमें मारीचने सिद्धार्थका रथ, सारथि और ध्वजके साथ गिरा दिये। वह ऐसा चकनाचूर हो गया कि केवल हड्डियोंकी गठरी ही नहीं बनी ॥१–१०॥

[६] रावणके अनुचरने जब रामके अनुचरको इस प्रकार मार गिराया, तो नरश्रेष्ठ पथिकने सिंहनितम्बकी पुकार मचायी।

'मइ मरु जिह मणु सइयहँ वञ्छहि । तिह रहु वाहि वाहि किं अच्छहि ॥२॥
जाणइ-णयणाणन्द-जणेरा । कुद्ध पाय तउ राहव-केरा' ॥३॥
एम भणेवि सरासणि पेसिय । असइ व सु-पुरिसेण परिसेसिय ॥४॥
तेण वि सरेंहिं णिवारिय एन्ती । णं पर-तिय आलिङ्गणु देन्ती ॥५॥
पुणु आयामेंवि मुक्क महा-सिल । णं पर-णरहों पासें गय कु-महिल ॥६॥
सीहणियम्बहों लग्ग उर-त्थलें । णिवडिउ मुच्छा-विमलु रसायलें ॥७॥
चेयण लहेंवि पडीवउ उट्ठिउ । णहयलें थक्कउ णं दुग्घिउ ॥८॥
कोव-हुवासण-धगधगमाणें । पाहणु जोयणेक्क-परिमाणें ॥९॥

घत्ता

आमेल्लिउ गउ णिय-वेआऊरियउ ।
तें घाएं पडिउ स-रहवरु चूरियउ ॥१०॥

[७]

पाडिएँ पहिय-णरवरें रणु-विमद्दणेणं ।
जउ दहवयण-किङ्करो धरिउ णन्दणेणं ॥१॥

अहिमद्दु जुज्झइ जर-णन्दणाहुँ । अन्तेउर-पियकर वाहिय-सन्दणाहुँ ॥२॥
सुरसुन्दरि-णयणाणन्दणाहुँ । विड-सड-भड-किय-कडमद्दणाहुँ ॥३॥
सामिय-पसाय-रय-रिण-मणाहुँ । वन्दिय जण-अणिवारिय-धणाहुँ ॥४॥
कामिणि-घण-थण-परिचड्डणाहुँ । जयलच्छि-वहुअ-अवरुण्डणाहुँ ॥५॥
पडिचक्खें मडप्फर-भञ्जणाहुँ । जयवन्तहुँ अयस-विसज्जणाहुँ ॥६॥
णिय-सयण-मणोरह-पूरणाहुँ । उग्गामिय-कोन्त-पहरणाहुँ ॥७॥

उसने कहा, "मर-मर तू यदि अपने मनकी चाहता है तो अपना रथ आगे बढ़ा, यहीं क्यों बैठा है तू।" यह कहकर, उसने अपना धनुष बाण उसी प्रकार प्रेषित कर दिया, जिस प्रकार सज्जन पुरुष, असती स्त्रीको वापस कर देता है। परन्तु आती हुई बाण-परम्पराको उसने भी तीरोंसे वापस कर दिया, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार आलिंगन देनेवाली परस्त्रीको सज्जन दूर कर देता है। तब उसने प्रयासपूर्वक एक बड़ी चट्टान उठाकर फेंकी, जो उसके पास उसी प्रकार गयी जैसे असती स्त्री परपुरुष के पास जाय। वह चट्टान सिंहनितम्बके वक्षस्थलमें जाकर लगी। मूर्छासे विह्वल होकर गिर पड़ा। थोड़ी देरमें वह उठकर फिर खड़ा हो गया, वह ऐसा लगता था, मानो आकाशमें धूमकेतु ही उदित हुआ हो। क्रोधकी ज्वालासे धकधक करते हुए उसने एक योजनका विशाल पत्थर, पथिकको दे मारा। पथिकने अपना गदा छोड़ दिया। वह वेदनासे तड़फ उठा। उस आघातसे पथिक और उसका रथ, दोनों चकनाचूर हो गये ॥१–१०॥

[७] दनुका संहार करनेवाला नरश्रेष्ठ पथिक जब मारा गया तो रामके अनुचर नन्दनने रावणके अनुचर जरपर आक्रमण किया। अब जर और नन्दनमें युद्ध होने लगा। उन्होंने एक दूसरे पर रथ चढ़ा दिये। दोनों सुर-सुन्दरियोंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाले थे। दोनोंने योद्धा-समूहको चकनाचूर कर दिया था। उनके मनमें था कि अभी हमें स्वामीके सैकड़ों प्रसादोंका ऋण चुकाना है। चारणजन उनके धनको मना नहीं कर सकते थे। दोनों स्त्रियोंके सघन स्तनोंका मर्दन करनेवाले थे। दोनोंने विजयलक्ष्मीका आलिंगन किया था। दोनोंने शत्रु-दलके घमण्डको चूर-चूर किया था। दोनों जयशील और अगश

विज्जाहर-करणेंहिँ वावरेवि । सहिरारुणु दारुणु रणु करेवि ॥८॥
चल-चवल-पराहिय-सन्दणेण । जउ कह वि किलेसें णन्दणेण ॥९॥

घत्ता

णीसेसहुँ सुरहुँ णियन्तहुँ गयण-यलेँ ।
विणिवाइउ कोन्तेंहिँ भिन्देंवि वच्छ-यलेँ ॥१०॥

[८]

पडिए जउ-णराहिवे भीम-पहरणाहुँ ।
रणु आलग्गु घोरु अक्कोस-सारणाहुँ ॥१॥

ते रावण-राम-भिच्च-भिडिय । णं मत्त महागय ओवडिय ॥२॥
णं सीह परोप्परु जणिय-कलि । णं भरह-णराहिव-बाहुबलि ॥३॥
णं आसग्गीव-तिविट्ठु णर । णं विज्जुसुग्गीव-राम पवर ॥४॥
णं इन्द-पडिन्द विसुद्ध-मण । णं ते वि पडीवा वे वि जण ॥५॥
अक्कोसें रोसें मुक्कु सरु । णं जिणवरेण संत-गहणु करु ॥६॥
मउडग्गेँ लग्गु तहोँ सारणहोँ । णं कुम्भे सरहसु वारणहोँ ॥७॥
तेण वि पडिवक्ख-खयङ्करेंण । रयणासव-णन्दण-किङ्करेंण ॥८॥
दुव्वार-वइरि-ओसारणेंण । धणु आयामेप्पिणु सारणेंण ॥९॥

घत्ता

अक्कोसहोँ परिवड्डिय-कलयल-मुहलु ।
सयवत्तु व खुडिउ सुरप्पें सिर-कमलु ॥१०॥

[९]

जं अक्कोसु पाडिओ जय-सिरी-णिवासो ।
रहु तुरिएण वाहिओ सुव-णराहिवासो ॥१॥

को धोनेवाले थे। वे अपने जनोंकी कामना पूरी करनेवाले थे। दोनोंने कोपट अस्त्र बाहर निकाल लिये। दोनोंने युद्धमें विद्याधरोंके अस्त्रोंका उपयोग किया। दोनों रक्तरंजित भयंकर युद्ध करते रहे। आखिर नंदनने अपना चंचल रथ, चपलतासे जरकी ओर हाँका। बड़ी कठिनाईसे, आकाशमें देवताओंके देखते-देखते नन्दनने भालोंसे वक्षःस्थल पर चोटकर जरको मार डाला ॥१-१०॥

[८] जब जर, इस प्रकार युद्धमें काम आ चुका तो अक्रोश और सारण अपने भयंकर अस्त्र लेकर घोर युद्ध करने लगे। राम और रावणके दोनों अनुचर युद्ध करने लगे। मानो दो मतवाले हाथी ही आ लड़े हों। मानो सिंह ही आपसमें युद्ध-क्रीड़ा कर रहे हों। मानो राजा भरत और बाहुबलि हों। मानो सुग्रीव और त्रिविष्ट हों। मानो कपट सुग्रीव और महान राम हों। मानो विशुद्ध मन इन्द्र और प्रतीन्द्र हों। परन्तु वे दोनों योद्धा भी धराशायी हो गये। इतनेमें अक्रोशने रोषमें आकर अपना तीर इस प्रकार छोड़ा मानो जिन भगवानने संसारका भयंकर डर छोड़ दिया हो।" वह तीर जाकर सारणके मुकुटके अग्रभागमें लगा, मानो महागजके सिरमें अंकुश जा लगा हो। तब, रत्नाश्रय और नन्दनके अनुचर, शत्रु पक्षके संहारक, दुर्वार शत्रुओंका प्रतिरोध करनेवाले सारणने भी अपना धनुष चढ़ा लिया। उसने अक्रोशके बहुत बड़-बड़ करनेवाले सिर कमलको खुरपीसे कमलकी भाँति काट डाला ॥१-१०॥

[९] इस प्रकार जयश्रीका निवास अक्रोश युद्धमें मारा गया। उसके बाद दुरितने नराधिराज सुतकी ओर अपना रथ

ते भिडिय परोप्परु आहयणें । कुम्भोह-थट्ट गिल्लोल्ल-घणें ॥२॥
णर-रुण्ड-हड्ड-विच्छड्ड-पहें । सन्दाणिय-भग्ग-तुरन्ति-रहें ॥३॥
हय-हय-गय-गट्ठ-णट्ठ-गमणें । दणु-छिन्द-भिन्द-सद्द-विद्दवणें ॥४॥
पडु-पडह-भेरि-गम्भीर-सरें । तिक्खग्ग-खग्ग-उग्गिण्ण-करें ॥५॥
मणुहर-टङ्कार-फार-बहिरें । सुरवर-सुन्दरि-मङ्गल-गहिरें ॥६॥
तहिँ तेहऍ आहवें उत्थरिय । दुप्पेच्छ अच्छि-मच्छर-भरिय ॥७॥
रहु रहहों देवि कुरिएण सुउ । सव्वङ्गिउ असि-पहरेहिँ लुउ ॥८॥
तेण वि खग्गें चलणेहिँ हउ । णं सनिव-विसऍ पय-छेउ किउ ॥९॥

घत्ता

कुरियाहिवु पिय-सहयरें ओणल्लियउ ।
कुम्भारेंण तरु जिह भग्गेंवि घल्लियउ ॥१०॥

[१०]

कुरियाहिवें पलोट्टिए वे वि साणुराया ।
रावण-राम-भिच्च उद्दाम-बग्घ-राया ॥१॥

ते वि विरुद्ध कुद्ध बद्धाउस । वेण्णि वि उत्थरन्ति जिह पाउस ॥२॥
आमेल्लन्ति परोप्परु अत्थइँ । दुद्धर-दणु-णिद्दलण-समत्थइँ ॥३॥
कु-कलत्ता इव चडुल-सहावइँ । कामिणि-णाह इव धीरण-भावइँ ॥४॥
दुज्जण-मुह इव विन्धण-सीलइँ । विस-रुक्ख इव मुच्छावण-सीलइँ ॥५॥
छाइउ णह-यलु पहरण-जालें । णं अवुहत्तणु मोह-तमालें ॥६॥
आयामेंवि भुय-फलिह-सहायें । सरु अमोउ विसज्जिउ विग्घें ॥७॥

आगे बढ़ाया और वे दोनों युद्धमें जा भिड़े, उस युद्धमें, जिसमें सघन गजघटा लोट-पोट हो रही थी। जिसमें पथ, धड़ों और हड्डियोंसे बिछे पड़े थे। रथ तड़-तड़ करके टूट रहे थे। अश्व आहत थे। डरसे उनकी गति अवरुद्ध थी। दानव-समूह विदीर्ण हो रहा था। पट-पटह और भेरीकी गम्भीर ध्वनि गूँज रही थी। तीखी पैनी तलवारें उनके हाथोंमें थीं। धनुर्धारियोंकी टंकार और आस्फालनसे कान बहिरे हो रहे थे, सुरसुन्दरियाँ मंगल कामना कर रही थीं। उस युद्धमें दुरित जा कूदा, वह अत्यन्त दुर्दर्शनीय था। उसकी आँखें मत्सरसे भरी हुई थीं। दुरितने सुतके रथसे रथ भिड़ा दिया। और उसके समूचे शरीर पर तलवारोंसे आघात पहुँचाया। तब उसने भी तलवारसे दुरितके पैरों पर चोट कर इस प्रकार आहत कर दिया, मानो सन्धिके लिए दो पदोंको अलग-अलग कर दिया हो। राजा दुरित, अपने ही श्रेष्ठ रथमें झुक गया। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार दुर्वातसे पेड़ नष्ट होकर गिर जाता है ॥१-१०॥

[१०] राजा दुरितके धराशायी होने पर, राम और रावणके दूसरे दो और अनुचर व्याघ्रराज और उद्दाम प्रेमके साथ जा भिड़े। वे दोनों क्रुद्ध होकर, एक-दूसरेके विरुद्ध हो उठे। दोनों ही पावसकी तरह उछल रहे थे। आपसमें, एक दूसरे पर अस्त्र फेंक रहे थे। दोनों दुर्द्धर दानवोंका संहार करनेमें समर्थ थे। खोटी स्त्रीके समान, दोनोंके स्वभाव चंचल थे। स्त्रियोंके नखों-की भाँति उनका स्वभाव चीरनेका हो रहा था। दुर्जन के मुख की भाँति, वे वेधनशील थे। विषफलकी भाँति वे लोगोंको बेहोश बना देते थे। अस्त्रोंके जालसे आकाश तल छा गया। मानो मोहान्धकारसे अज्ञान भर गया हो। हाथसे अपने लम्बे धनुषको चढ़ाकर, व्याघ्रने आग्नेय तीर छोड़ दिया। तब उद्दाम

वारुणु उद्दामें आमेल्लिउ । वायव्वु विसहरेंण पडिखलिउ ॥८॥
पुणु उद्दामें मुक्कु महोरगु । गारुड-तुरन्तु सय-कन्दरु ॥९॥

घत्ता

सं थिरवेंग विग्घु करेप्पिणु समर-मुहें ।
सुसुमूरेंवि जोइउ सुहडु कयन्त-मुहें ॥१०॥

[११]

जं दारिय महाहवे वाणरन्त सिग्घे ।
हय-सन्ताव-पहिय-अक्कोस-दुरिय-विग्घे ॥१॥

तं पवङ्गु दुक्खु पेक्खेप्पिणु । रवि अत्थमिउ णाइँ असहेप्पिणु ॥२॥
अहवइ णह-पायवहों विसालहों । सयल-दियन्तर-दीहर-डालहों ॥३॥
चउदिस-पल्लोकिर-उवसाहहों । सञ्झा-पल्लव-णियर-सणाहहों ॥४॥
महुवव (?)-अरुण-पत्त-सच्छायहों । गह-णक्खत्त-कुसुम-सङ्घायहों ॥५॥
पसरिय-अन्धयार-भमर-उलहों । तहों आयास-दुमहों वर-विउलहों ॥६॥
णिसि-णारिएँ खुडेंवि जस-लुद्धएँ । रवि-फलु गिलिउ णाइँ णियसद्धएँ ॥७॥
बहल-तमालें जगु अन्धारिउ । बिहि मि बलहँ णं जुज्झु णिवारिउ ॥८॥
वे वि बलइँ वण-णिसुढिय-गत्तइँ । णिय-णिय-आवासहों परियत्तइँ ॥९॥

घत्ता

रावण घरें जय-तूरइँ अप्फालियइँ ।
राहव-बलें मुहइँ णाइँ मसि-मइलियइँ ॥१०॥

[१२]

पभणिय को वि वीरु 'किं दुम्मणो सि देव ।
णिसियर-करिण-जूहें पइसरमि सीहु जेम' ॥१॥

ने वारुण तीर मारा। इसपर व्याघ्रने 'वायव्य तीर'से प्रहार किया। तब उद्दामने महीधर तीर छोड़ा, उसमें सैकड़ों गुफाएँ थीं, और बन्दर आवाजें कर रहे थे। अन्तमें व्याघ्रने, युद्धमें विघ्न उत्पन्न कर उद्दामको मसल दिया और जीते जी उसे कृतान्तके मुखमें डाल दिया ॥१-१०॥

[११] इस प्रकार महायुद्धमें लड़ते हुए सभी मारे गये। सन्ताप पथिक अक्रोश दुरित और व्याघ्र सभी आहत हो चुके थे। सूर्य इतना बड़ा दुःख नहीं देख सका, इसीलिए मानो वह डूब गया। अथवा लगता था कि आकाश रूपी वृक्षमें, सूर्य रूपी सुन्दर फल लग गया है। दिशाओंकी शाखाओंसे वह वृक्ष शोभित हो रहा था। संध्याके लाल-लाल पत्तोंसे वह युक्त था। बहुविध मेघ, उसके पत्तोंकी छायाके समान लगते थे। ग्रह और नक्षत्र उसके फूलोंका समूह थे। भ्रमर कुलकी भाँति, उसपर धीरे-धीरे अन्धकार फैलता जा रहा था। वह आकाश रूपी वृक्ष बहुत बड़ा था। परन्तु यशकी लोभिन निशा रूपी नारीने उसके सूर्य रूपी फलको निगल लिया। घने अन्धकारने संसारको ढँक लिया, मानो उसने दोनों सेनाओंके युद्धको रोक दिया। दोनों ही सेनाओंके शरीर ढीले पड़ गये, और वे अपने-अपने आवासको लौट आयीं। रावणके आवास पर विजय तूर्य बज रहे थे, जब कि राघवकी सेनाके मुख ऐसे लग रहे थे मानो उनपर किसीने स्याही पोत दी हो ॥१-१०॥

[१२] किसी एक वीरने जाकर रामसे पूछा, "हे देव, आप उन्मन क्यों हैं। मैं शत्रुओंके मृग-समूहमें सिंहकी तरह जा घुसूँगा। एक और दूसरा महान् योद्धा शत्रुसेनाकी निन्दा कर

को वि महाबलु पर-बलु णिन्दइ । को वि भणइ 'महु कलऍं छन्दइ' ॥२॥
को वि भणइ 'महु तोयदवाहणु' । को वि भणइ 'स-सुउ महु सारणु' ॥३॥
को वि भणइ 'पाउ पइँ जयकारमि । जाम ण कुम्भयण्णु रणें मारमि' ॥४॥
को वि भणइ 'हउँ मय-मारिच्चहुँ । भिडमि राहु जिह चन्दाइच्चहुँ' ॥५॥
को वि भणइ 'महु भरइ महोअरु । झुज्झमि कयन्त-वयणें वज्जोअरु' ॥६॥
को वि भणेइ 'करमि तउ पेसणु । पेसमि जम्बुमालि जम-सासणु' ॥७॥
को वि भणइ 'हय-गय-रह-वाहणु । महु आवग्गउ रावण-साहणु' ॥८॥
ताव विहाणु भाणु णहेँ उग्गउ । रयणिहेँ तणउ गब्भु णं णिग्गउ ॥९॥

घत्ता

आहिण्डेंवि जगु सयरायरु सिग्घ-गइ ।
सम्पाइउ णाइँ सइं भुवणाहिवइ ॥१०॥

[६४. चउसट्ठिमो संधि]

दणु-दारण-पहरण-हत्थइँ जयसिरि-गहण-समत्थइँ ।
रण-रस-रोमञ्च-विसट्टइँ बलइँ बे वि अब्भिट्टइँ ॥

[१]

अब्भिट्टइँ बे वि स-वाहणाइँ । वायरण-पयाइँ व साहणाइँ ॥१॥
जिह ताइँ तेम छल-सन्धाइँ । जिह ताइँ तेम किय-विग्गहाइँ ॥२॥

रहा था। कोई बोला, 'मेरी कल इन्द्रजीतसे भिड़न्त होगी।" कोई कहता, "मेरी मेघवाहनसे होगी।" कोई कहता—"मेरी सुत और सारणसे होगी।" कोई कह रहा था, "जब तक मैं युद्धमें कुंभकर्णका काम तमाम नहीं कर लेता, तबतक आपकी जय नहीं बोलूँगा"। कोई कहता, "मैं मय और मारीचसे लड़ूँगा। कोई कहता, "मैं राहुके समान सूर्य और चन्द्रसे, युद्ध करूँगा"। कोई कहता, "महोदरकी मौत मेरे हाथों होगी," कोई कहता, "मैं लम्बोदरको यमके मुखमें फेंक दूँगा।" कोई कहता, "मैं तुम्हारी आज्ञा मानूँगा और जम्बूमालीको यमके शासनमें भेजकर रहूँगा।" कोई कहता, "मैं अश्व, गज और रथ वाहनवाली रावणकी सेनासे जाकर भिड़ूँगा।" इसी बीच आकाशमें सवेरे सूर्योदय हो गया, मानो निशानारीका गर्भ ही प्रकट हो गया हो। शीघ्रगामी सूर्यने मानो संसारकी परिक्रमा कर अपने हाथोंसे अपना आधिपत्य संपादित किया हो॥१-१०॥

चौसठवीं संधि

विजय लक्ष्मीको ग्रहण करनेमें समर्थ, वे दोनों सेनाएँ आपसमें टकरा गयीं। दोनोंके पास निशाचरोंका विनाश करनेवाले अस्त्र थे। दोनों ही युद्धोचित उत्साहसे रोमांचित थीं।

[१] अपने-अपने वाहनोंके साथ, वे सेनाएँ ऐसे भिड़ गयीं, मानो व्याकरणके साध्यमान पद ही आपसमें भिड़ गये हों। जैसे व्याकरणके साध्यमान पदोंमें क ख ग आदि व्यञ्जनोंका

जिह ताइँ तेम सच्चिय-सराइँ । जिह ताइँ तेम पच्चय-कराइँ ॥३॥
जिह ताइँ तेम उवसग्गिराइँ । जिह ताइँ तेम्व जस-मग्गिराइँ ॥४॥
जिह ताइँ तेम पर-लोम्भिराइँ । बहु-एक्क-दु-वयण-पजम्पिराइँ ॥५॥
जिह ताइँ तेम्व अक्खुम्भलाइँ । परियाणिय-सयल-बलाबलाइँ ॥६॥
जिह ताइँ तेम्व णासायराइँ । जिह ताइँ तेम बहु-भासिराइँ ॥७॥
अण्णण्ण-सद्द-णिण्णासिराइँ ॥८॥

घत्ता

जिह ताइँ तेम आयरियइँ वाइ-णिराबहुँ चरियइँ ।
दीहर-समास-अहियरणइँ वलइँ ताइँ आयरणइँ ॥९॥

[९]

तहिँ तेहएँ रणेँ रयणीयरासु । सव्वूल्ल वलिउ वज्जोअरासु ॥१॥
ते भिडिय चण्ड-कोवण्ड-हत्थ । सुर-समर-पवर-भुर-भर-समत्थ ॥२॥

संग्रह होता है, उसी प्रकार सेनाओंके पास लाङ्गूल आदि अस्त्र थे। जैसे व्याकरणमें क्रिया और पदच्छेद आदि होते हैं, उसी प्रकार सेनाओंमें युद्ध हो रहा था, जैसे व्याकरणमें संधि और स्वर होते हैं, उसी प्रकार सेनामें स्वरसंधान हो रहा था, जैसे व्याकरणमें प्रत्यय विधान होता है, उसी प्रकार उन सेनाओंमें युद्धानुष्ठान हो रहा था। जैसे व्याकरणमें, प्र,परा आदि उपसर्ग होते हैं, उसी प्रकार सेनाओंमें घोर बाधाएँ आ रही थीं। जैसे व्याकरणमें जश् आदि प्रत्यय होते हैं, उसी प्रकार दोनों सेनाओंमें 'यश' (जस्) की चाह थी। जिस प्रकार व्याकरणमें, पद-पद पर लोप होता है, उसी प्रकार सेनाओंमें शत्रुलोपकी होड़ मची हुई थी। जैसे व्याकरणमें एक, दो,बहुवचन होता है, वैसे ही उन सेनाओंमें बहुत-सी ध्वनियाँ हो रही थीं। जिस प्रकार व्याकरण अर्थसे उज्ज्वल होता है, उसी प्रकार सेनाएँ शस्त्रोंसे उज्ज्वल थीं, और एक-दूसरेके बल-अबलको जानती थीं। जिसप्रकार व्याकरणमें 'न्यास' की व्यवस्था होती है उसी प्रकार सेनामें भी थी। जिस प्रकार व्याकरणमें बहुत-सी भाषाओंका अस्तित्व है, उसी प्रकार सेनाओंमें तरह-तरह की भाषाएँ बोली जा रही थीं। जैसे व्याकरणमें दीर्घ समास-अधिकरणमें शब्दोंका नाश होता है, वैसे ही सेनाओं में विनाश लीला मची हुई थी। उन सेनाओंका लगभग, व्याकरणके समान आचरण था, दोनोंके चरितमें निपात था, व्याकरणमें आदि निपात है, सेनामें योद्धा अन्तमें धराशायी हो रहे थे ॥१-६॥

[२] निशाचरोंकी उस भयंकर लड़ाईमें रामरूपी सिंह वज्रोदरके निकट पहुँचा। प्रचंड धनुष हाथमें लेकर वे आपसमें लड़ने लगे। वे दोनों ही देवताओंके भारी युद्धका भार उठानेमें तत्पर थे। दोनों ही पैर आगे बढ़ाकर पीछे नहीं हटते थे।

घउ अग्गएँ देन्ति ण ओसरन्ति । पहरन्ति ण पहरणु वीसरन्ति ॥३॥
दरिसन्ति मरप्फर णेय दुट्ठि । जीविउ सिढिलन्ति ण चाव-मुट्ठि ॥४॥
मेल्लन्ति बाण ण मुअन्ति धीरु । परिहउ रक्खन्ति ण णियय-सरीरु ॥५॥
कणगाइ णाराउ ण कुलें कलङ्कु । सरु वङ्कइ वयणु ण होइ वङ्कु ॥६॥
गुणु छिज्जइ सीसु ण दुण्णिवारु । धउ पडइ ण हियउ ण पुरिसयारु ॥७॥
मोक्कुण्ण-तुरङ्गम-धुअ-धयरहु । रहु भज्जइ भज्जइ णाउ मरट्टु ॥८॥

घत्ता

पडिवक्ख-पक्ख-पडिकूलहुँ वज्जोअर-समहूलहुँ ।
बिहि को गरुआरउ किज्जइ एक्कु वि जिणइ ण जिज्जइ ॥९॥

[३]

एत्तहेँ वि भिउडि-भङ्गुर-वयण । ते बाहुबलिन्द-सोहद्दमण ॥१॥
अब्भिट्ट बे वि मल्लामरिस । गिरिमलय-सुवेलसंक-सरिस ॥२॥
हरिदमणें 'पहरु पहरु' भणेंवि । सिरेँ मोग्गर-घाएं आहणेंवि ॥३॥
महि-मण्डलेँ पाडिउ बाहुबलि । तासिय व परिवड्ढन्त-कलि ॥४॥
पुणु चेयण लहेँवि समच्छरेण । आरुट्ठें राहव-किङ्करेण ॥५॥
पडिवारउ आहउ मोग्गरेण । वच्छत्थलेँ णं इन्दीवरेण ॥६॥

प्रहार करते थे, अपना अस्त्र नहीं भूलते थे। वे अपने अहंकार-का प्रदर्शन करते थे, पीठ नहीं दिखाते थे। उनके प्राण भले ही शिथिल हो उठते, परन्तु धनुषकी मुट्ठी ढीली कभी नहीं पड़ती थी। वे तीर छोड़ते थे, अपना धीरज उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। वे पराभवको बचा रहे थे. अपने शरीर-रक्षाकी उन्हें जरा भी चिन्ता नहीं थी। वे तीरसे आहत होनेके लिए प्रस्तुत थे, परन्तु अपने कुलको कलंक नहीं लगने देना चाहते थे। उनके तीर जरूर मुड़ जाते थे परन्तु उन्होंने अपना मुख कभी नहीं मोड़ा। उनके धनुषकी डोरी क्षीण हो जाती थी, परन्तु उनका दुर्निवार सिर कभी नहीं झुका। उनकी पताकाएँ अवश्य गिर जाती थीं, परन्तु उनका हृदय और पुरुषार्थ कभी नहीं गिरा। जिन अश्वोंसे जुता रथ भले ही नष्ट हो जाये, पर उसमें बैठे हुए योद्धाका मान कभी नष्ट नहीं हो सका। शत्रुपक्षके लिए अत्यन्त कठिन वज्रोदर और राममें तुमुल संग्राम हो रहा था। विधाता, दोनोंमें-से किसे गौरव देता है, कहना कठिन था। उनमें से एक भी न तो स्वयं जीत रहा था, और न दूसरेको हरा पा रहा था ॥१-९॥

[३] इधर भी, भौंहोंसे भयंकर मुख महाबाहु और सिंहदमन-की आपसमें भिड़न्त हो गयी। दोनों ही, एक-दूसरेके प्रति क्रोध से अभिभूत थे। दोनों मलय और सुवेल पर्वतके समान दिखाई दे रहे थे। सिंहदमनने 'मारो-मारो' कहकर महाबाहु-के सिरमें मुद्गर दे मारा। वह धरतीपर गिर पड़ा। फिर क्या था, शत्रुसेनामें खलबली मच गयी। उसी अन्तरमें राम का अनुचर महाबाहु होशमें आ गया। वह क्रोधसे तम-तमा रहा था। उसने भी मुद्गरसे ही उसके वक्षपर इस तरह चोट की मानो नीलकमलसे चोट की हो। ठीक इसी समय,

तहिँ तेहएँ कालेँ समावडिय । मह विजय-सयम्भु वे वि भिडिय ॥७॥
रणेँ परिसक्कन्ति ससन्ति किह । चल चवल विज्जुल-पुञ्ज जिह ॥८॥

घत्ता

आयामेँ वि रावण-भिच्चेँण णिय-कुल-णह-आइच्चेँण ।
जट्टियएँ विजउ विणिभिण्णउ पडिउ णाइँ दुमु छिण्णउ ॥९॥

[४]

रणेँ विजउ सयम्भु वि णिहउ जं जेँ । खविया रि-वीर-सङ्कोहु तं जेँ ॥१॥
अब्भिडइ परोप्परु धुक्कइ अङ्गु । णं खग-णारायण रणेँ अभङ्गु ॥२॥
णं रावणिन्द विप्फुरिय-तुण्ड । णं मत्तहत्थि उद्दण्ड-सुण्ड ॥३॥
एत्थन्तरेँ सुरवरहु मि असक्कु । सङ्कोहेँ मेल्लिउ चक्कु चक्कु ॥४॥
गयणङ्गणेँ तं पज्जलन्तु जाइ । अत्थइरिहेँ दिणयर-बिम्बु णाइँ ॥५॥
खविया रि-णिवहहों वच्छयलेँ लग्गु । जिह णलिणि-पत्तु तिह तहिँ जि भग्गु ॥६॥
तेण वि पडिवक्खहों चक्कु मुक्कु । सङ्कोहहों णं जमकरणु ढुक्कु ॥७॥
सिरु खुडिउ मरालेँ जेम कमलु । णं इन्दिन्दिरु रुण्टन्त-मुहलु ॥८॥

घत्ता

सिरु गयउ कबन्धु जं णच्चइ सुहडु मड-बोक्क ण कुप्पइ ।
णिय-सामिहेँ पेसणु सरइ । विउणउ णं भडु पहरइ ॥९॥

[५]

बल-किङ्करु जं सङ्कोहु हउ । धाविउ विसाहि तं रणेँ अजउ ॥१॥
'कहिँ गच्छहि अच्छमि जाम हउँ । रहु वाहेँ वाहेँ सयम्भुहउँ ॥२॥
सङ्कोहु जेम घाइउ छलेण । तिह पहरु पहरु णिय-भुव-बलेण' ॥३॥
तं वयणु सुणेँ वि किर ओवडइ । विहि-राउ ताम्ब तहोँ अब्भिडइ ॥४॥

विजय और स्वयंभू, ये दोनों सुभट आपसमें युद्ध करने लगे। युद्ध-भूमिमें वे ऐसे घूम रहे थे, मानो चंचल बिजलियोंका समूह हो। आखिरकार, अपने कुलके सूर्य, रावणके अनुचर स्वयम्भूने लाठीसे विजयको आहत कर दिया, वह ऐसे गिर पड़ा मानो उसकी पूँछ कट गयी हो ॥ १–९ ॥

[४] जब इस प्रकार विजय और स्वयम्भू भी मारे गये तो जो खपितारि और वीर संकोह थे, वे भी रोमांचित होकर जा भिड़े। मानो खरदूषण और नारायण युद्धमें भिड़ गये हों। मानो महोदर रावण और इन्द्र लड़ रहे हों, मानो सूँड़ उठाये हुए दो मतवाले हाथी हों। इसी बीचमें सुरवरोंके लिए अशक्य, संकोहने पहले अपना चक्र छोड़ा। वह गगनांगनमें जलता हुआ जा रहा था, जैसे अस्ताचल पर सूर्य-बिम्ब हो। वह चक्र खपितारि राजा के वक्षमें जाकर लगा। वह कमलिनी पत्रकी तरह वहींका वहीं नष्ट हो गया। तब उसने भी शत्रुपक्ष पर अपना जयकरण शस्त्र फेंका, वह संकोहके पास पहुँचा। उससे उसका सिर उसी प्रकार कट गया जिस प्रकार हंस जिसमें भौंरे गुनगुना रहे हैं, ऐसे नील कमलको काट देता है। उसका सिर कट गया और धड़ अब भी घूम रहा था, परन्तु उसके मुखसे वीरता भरे वाक्य निकल रहे थे। वह अपने स्वामीकी आज्ञाका पालन कर रहा था, गिरकर भी वह बेचारा योद्धा प्रहार कर रहा था ॥१–४॥

[५] रामका अनुचर संकोह जब इस प्रकार मारा गया, तब युद्धमें अजेय वितापी दौड़ा। उसने कहा, "जब तक मैं यहाँ हूँ, तबतक तुम कहाँ जा सकते हो, अपना रथ सामने बढ़ाओ, तुमने संकोहको जिस प्रकार छलसे मार डाला, उसी प्रकार लो अब मुझपर आक्रमण करो-अपने बाहुबलसे।" यह वचन

ते विहि-वि ताथि व आरुट्ठ-मणा । उत्थरिय स-मच्छर बे वि जणा ॥५॥
णं पलय-कालेँ पलयम्बुहरा । जिह ते तिह सर-धारा-पवरा ॥६॥
जिह ते तिह परिचक्कलिय-धणु । जिह ते तिह विज्जुज्जलिय-तणु ॥७॥
जिह ते तिह भीस-णिणाय-करा । जिह ते तिह सूर-पयास-हरा ॥८॥

घत्ता

विहि-राएं अमरिस-कुद्धएँण अहिमाण-जयसिरि-लुद्धएँण ।
पाडिउ बिताथि णाराएँण गिरि जिह वज्ज-णिहाएँण ॥९॥

[६]

जं हउ विताथि तं ण किउ खेउ । कोवग्गि-पलित्तु विसाहसेउ ॥१॥
विहि-रायहुँ भिडइ ण भिडइ जाम । हक्कारिउ सम्भु-णिवेण ताम ॥२॥
ते बे वि परोप्परु अब्भिडन्ति । णं गिरि स-परक्कम ओवडन्ति ॥३॥
एत्थन्तरेँ सम्भु ण किउ खेउ । उरेँ सत्तिएँ भिण्णु विसाहसेउ ॥४॥
ओणल्लिउ महियलेँ विगय-पाणु । णिय-साहणु पेक्खेँवि कोक्कमाणु ॥५॥
सुग्गीउ पधाइउ विप्फुरन्तु । 'लइ वलहोँ वलहोँ' समु उत्थरन्तु ॥६॥
णं णिसियर-सेण्णहोँ मइयवट्टु । णं केसरि मिग-जूहहोँ विसट्टु ॥७॥
णं तिहुयण-चक्कहोँ काल-दण्डु । णं जलहर-विन्दहोँ पलय-चण्डु ॥८॥

घत्ता

विज्जाहर-वंस-पईवहोँ भिडमाणहोँ सुग्गीवहोँ ।
थिउ अन्तरेँ वाहिय-सन्दणु राम पहञ्जण-णन्दणु ॥९॥

सुनकर विधिराज युद्धमें कूद पड़ा। दोनोंकी मुठभेड़ होने लगी। विधि और वितापी दोनों ही क्रुद्धमना थे। दोनों ही युद्ध-प्रांगणमें ऐसे उछल पड़े मानो प्रलयकालके मेघ हों। जैसे मेघोंमें जलकी धारा होती है, वैसे ही इनके पास तीरोंकी बाणावलि थी। जैसे मेघोंमें इन्द्रधनुष होता है, वैसे ही इन्होंने भी अपना इन्द्रधनुष तान रखा था। मेघोंके समान, वे दोनों भी बिजलीके समान चमक रहे थे। मेघोंके समान, उनकी ध्वनि सान्द्र थी। मेघोंकी ही भाँति, वे सूर्यके तेजको ढकनेमें समर्थ थे। दोनों नयी-नयी विजयोंके लोभी थे! विधिराजने इस प्रकार बाणोंसे भर कर वितापीको मार गिराया, उसी प्रकार जिस प्रकार वज्रके आघातसे पहाड़ टूट गिरता है ॥१–९॥

[६] वितापीके इस प्रकार आहत होने पर विशालतेजने जरा भी देर नहीं की। वह क्रोधसे भड़क उठा। वह विधिराजसे भिड़ने वाला ही था कि शम्भुराजने उसे ललकारा। फलतः वे दोनों आपसमें भिड़ गये। उस समय लगा कि पहाड़ ही पराक्रम पूर्वक आपसमें भिड़ गये हों। इसी अन्तरालमें शम्भुराजने जरा भी देर नहीं की। उसने शक्तिसे विशालतेजको छातीमें घायल कर दिया। वह प्राणहीन होकर धरती पर गिर पड़ा। जब सुग्रीवने देखा कि उसकी सेना धराशायी होती चली जा रही है तो वह तमतमाकर मैदानमें निकल आया, "मुड़ो-मुड़ो" की ध्वनिके साथ वह ऐसा उछला, मानो निशाचरोंका विनाश आ गया हो, मानो मृगके झुण्डोंमें सिंह हो, मानो त्रिभुवन चक्रमें कालदण्ड हो, मानो जलधर समूहमें प्रलयपवन हो। जब विद्याधरवंशका प्रदीप सुग्रीव संग्राममें भिड़ गया तो पवनसुत हनुमान् भी अपना रथ हाँक कर, दोनोंके बीचमें आ गया ॥१–९॥

[७]

हणुवन्तें वुच्चइ 'माम माम । तुहुँ अच्छहि जहिँ सोमित्ति-राम ॥१॥
हउँ एक्कु पहुच्चमि णिसियराहुँ । जिह गरुडु असेसहुँ विसहराहुँ ॥२॥
जिह धूमकेउ अग्गें पायवाहुँ । पञ्चाणणु जिह अर-तरुवराहुँ ॥३॥
जिह पलय-पहञ्जणु जलहराहुँ । सुर-कुलिस-दण्डु जिह गिरिवराहुँ ॥४॥
वलु णं वणु भञ्जमि रसमसन्तु । वंसुब्भव-मुत्ता-तारुक्खणन्तु ॥५॥
रयणीयर-तरुवर णिद्दलन्तु । भुय-दण्ड-चण्ड-डालाहणन्तु ॥६॥
सुललिय-करयल-पल्लव लुणन्तु । णक्खावलि-कुसुम समुच्छलन्तु ॥७॥
धय-छत्तइँ पत्तइँ विक्खिरन्तु । णरवर-सिर-फल-सहसइँ खुडन्तु ॥८॥

घत्ता

मारुइ ओमिअण-णन्दणु स-कमठ स-णाउ स-सन्दणु ।
पर-वलें पइसरइ महव्वलु विञ्झें जेम दावाणलु ॥९॥

[८]

पउम-भिडन्तें तेण वाइणा । वासुपुज्ज-चक्क-पक्खवाइणा ॥१॥
हयवरेण णवराहओ हओ । गयवरेण सो आगओ गओ ॥२॥
रहवरेण रय-सूरहो रहो । धयवडेण जस-लुद्धओ धओ ॥३॥
णरवरेण वयणुब्भडो भडो । पर-सिरेण पर-संसिरं सिरं ॥४॥
करयलेण सु-भयङ्करो करो । भड-कमेण स-परक्कमो कमो ॥५॥
दारुणं कयं एव सञ्जुयं । हड्डु-रुण्ड-विच्छड्ड-सञ्जुयं ॥६॥
सुहड-सुहड सन्दाणवन्तयं । घोर-मारि-सम्माणवन्तयं ॥७॥

[७] हनुमानने कहा, "हे आदरणीय, आप वहीं रहिए जहाँ लक्ष्मण और राम हैं। मैं अकेला ही निशाचरोंके लिए काफी हूँ। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार समस्त सर्पकुलके लिए गरुड़ काफी होता है, नरश्रेष्ठके लिए धूमकेतु, पुराने वृक्षोंके लिए प्रलयकी आग, बड़े-बड़े पहाड़ोंके लिए इन्द्रका वज्र होता है। मैं सेनाको नन्दनवनकी तरह रौंद डालूँगा। उज्ज्वल वंशोंको पेड़ोंकी जड़ोंकी तरह उखाड़ दूँगा। निशाचर रूपी वृक्षोंको नष्ट कर दूँगा। भुजदण्ड रूपी प्रचण्ड डालोंको आहत कर दूँगा। सुन्दर हथेलियों रूपी पत्तोंको नोंच डालूँगा। सुन्दर सुमनोंकी भाँति सुन्दर नाखूनोंको उखाड़ दूँगा। ध्वजपत्ररूपी पत्तोंको बखेर दूँगा। श्रेष्ठ मनुष्योंके फलोंको तोड़-फोड़ दूँगा। गर्जनाके अनन्तर अंजनापुत्र महाबली हनुमान् कवच अश्व और रथ के साथ शत्रुसेनामें घुस गया, वैसे ही जैसे महागज विन्ध्याचलमें घुस जाय ॥१-९॥

[८] रामके पक्षपाती हनुमानने अपनी पहली भिड़न्तमें अश्वसे दूसरे अश्वको आहत कर दिया। गजवरसे आगत हाथीको चलता किया। रथवरसे प्रलयसूर्यके रथको नष्ट कर दिया। ध्वजपटसे यशके लोभी ध्वजको नष्ट कर दिया। नरवरसे वचनोद्धत योद्धाका काम तमाम कर दिया। शत्रुसिरसे शत्रुकी प्रशंसा करनेवाले सिरको समाप्त कर दिया। करतलसे भयंकर महान् हाथको काट डाला। योद्धाके पैरसे किसी पराक्रमी पैरको परिसमाप्त कर दिया। इस प्रकार हनुमानने युद्धको एकदम भयंकर बना दिया। वह हड्डियों और धड़ोंके ढेरोंसे भरा हुआ था। सुभटों, गजघटाओं और रथों एवं अश्वोंका वह अन्त कर

जस्थ तस्थ अत्थमिय-सूरयं । णिसि-णाहं व अत्थमिय-सूरयं ॥८॥
छिण्ण-बाहु-णिब्भिण्ण-वच्छयं । काणणं व ओणल्लु-वच्छयं ॥९॥
णिरसि पाणि णीविक्कमं थियं । खार-जलहि-सलिलं व मच्छियं ॥१०॥

घत्ता

जं हणुवहों बलु आलग्गउ लोकएँ जिन्द लियम भग्गउ ।
सवडम्मुहु वज्जिय-सङ्कउ एक्कु मालि पर थक्कउ ॥११॥

[५]

थक्कन्तें कोक्किउ पवण-पुत्तु । 'किं कायरेहिं सहुँ भिडेंवि जुत्तु ॥१॥
वलु वलु सामरिणि देहि जुज्झु । महँ मुएँवि मल्लु को अण्णु तुज्झु ॥२॥
तुहुँ रामहों हउँ रावणहों दासु । जिह तुहुँ तिह हउ मि महि-प्पगासु ॥३॥
तुहु एक्कु म मइलउ णियय-वंसु । जसु दावइ जय-सिरि होउ तासु' ॥४॥
तं णिसुणेंवि उववण-महण्णेण । दोच्छिउ पवणञ्जय-णन्दणेण ॥५॥
'तुहुँ कवणु गहणु महँ दुज्जएण । हणुवन्त-कयन्तें कुद्धएण ॥६॥
किं ण सुअउ खउ वज्जाउहासु । उज्जाण-भङ्गु किङ्कर-विणासु ॥७॥
अक्खहों कयन्तु पहूणहों केउ । हउँ सो जो पईसिउ अप्पमेउ ॥८॥

घत्ता

एहु वाहि वाहि सवडम्मुहु पहरु पहरु लइ आउहु ।
हउँ पईं पावेण वि मारमि पहिलउ तेण ण पहरमि' ॥९॥

दे रहा था। उसकी चपेट अत्यन्त घातक और मारक थी। जहाँ होता वहाँ सूर्यास्त हो जाता, निशाचरकी भाँति वह सूर्यास्त कर देता था। योद्धाओंके वक्ष आहत थे और हाथ कटे हुए। वे ऐसे लग रहे थे, मानो आहतवृक्षोंका कोई उपवन हो। तलवार, हाथ और पराक्रम से शून्य समूची सेना ऐसी जान पड़ती थी, मानो क्षीरसमुद्रका पानी मथ दिया गया हो। जो सेना हनुमान्‌से आकर लड़ी, उसने उसे खेल-खेलमें समाप्त कर दिया। फिर उसके सम्मुख मालि निश्शंक होकर खड़ा हो गया ॥१-११॥

[६] सामने डटकर उसने हनुमानको ललकारा, "क्या कायरोंके साथ युद्ध करना उचित है। मुड़ो-मुड़ो हनुमान्, मुझे युद्ध दो। मुझे छोड़कर, और कौन तुम्हारा प्रतिद्वन्द्वी हो सकता है। तुम रामके अनुचर हो, और मैं रावणका। जैसे तुम इस धरतीके प्रकाश हो, उसी प्रकार मैं भी। एक तुम हो और एक मैं, जिन्होंने अपना कुल कलंकित नहीं होने दिया। रहा प्रश्न विजयलक्ष्मीका। वह जिसे पसन्द करे उसकी हो जाय।" यह सुनकर नन्दनवनको उजाड़नेवाले हनुमानने मालिको फटकारते हुए कहा, "हनुमान्-जैसे अजेयकृतान्तके क्रुद्ध होने पर तुम्हें पकड़नेमें क्या रखा है। क्या वज्रायुधका बेटा नहीं मारा गया, क्या उद्यान नहीं उजड़ा, और क्या अनुचरोंका विनाश नहीं हुआ। मैं वही हनुमान् फिरसे आया हूँ, जो कुमार अक्षयके लिए कृतान्त है और नगरके लिए केतु। जरा अपना रथ सामने बढ़ाइए, और अस्त्र लेकर प्रहार कीजिए, मैं तुम्हें पहले आघातमें समाप्त कर दूँगा, इसलिए खुद प्रहार नहीं करना चाहता" ॥१-९॥

[१०]

तं णिसुणेंवि मालि ण थिउ जेउ । सर-जालें छाइउ अणुपवेउ ॥१॥
णं सुअणु अणेएँहिँ दुज्जणेहिँ । णं पाउसें दिणयरु णव-घणेहिँ ॥२॥
हणुवेण वि सर अट्ठ-उण मुक्क । पसरन्त हणन्त छिन्दन्त ढुक्क ॥३॥
आयासें ण भन्ति ण धरणि-वीढें । णा धयग्गें ण रहवरें हय-पगीढें ॥४॥
अग्गाऍँ पच्छऍँ अ-परिप्पमाण । जउ जउ जें दिट्ठि तउ तउ जि बाण ॥५॥
ओसरिउ मालि णिविसन्तरेण । रहु दिण्णु ताम्व वज्जोअरेण ॥६॥
हक्कारिउ अहिमुहु पवण-जाउ । 'कहिँ जाहि पाव खय-कालु आउ ॥७॥
पत्तेण जि तुज्झु मरट्टु जाउ । जं भग्गु भिडन्तें मालि-राउ ॥८॥

घत्ता

हउँ वज्जोयरु भड-मद्दणु तुहुँ पवणञ्जय-णन्दणु ।
अब्भिडहुँ बे वि भय-भासुर रणु पेक्खन्तु सुरासुर' ॥९॥

[११]

ते बिण्णि वि गलगजन्त दुक्क । मुक्कङ्कुस मत्त-गइन्द जेम्व ॥१॥
अब्भिड महाहवेँ अतुल-मल्ल । पडिवक्ख-पक्ख-णिक्खन्त-सल्ल ॥२॥
अहिमाण-अणुब्भव सुद्ध-वंस । सङ्गाम-सएँहिँ लद्ध-प्पसंस ॥३॥
तो णवर समीरण-णन्दणेण । सर-सूर-समप्पह-सन्दणेण ॥४॥
विद्धि सरेँहिँ सरासणु छिण्णु तासु । णं हियउ खुडिउ वज्जोयरासु ॥५॥
किर अवरु चाउ करेँ चडइ जाम्व । रय-खण्ड-खण्डु रहु कियउ ताम्व ॥६॥

[१०] यह सुनते ही मालिने अविलम्ब, तीरोंके जालसे हनुमान्‌को ढक दिया। मानो अनेक दुर्जनोंने सज्जनको घेर लिया हो, मानो पावसमें मेघोंने सूर्यको ढक लिया हो। तब हनुमान्‌ने भी आठ तीर छोड़े, जो फैलते-मारते हुए दिशाओंके भी छोरों तक पहुँच गये। न तो वे आकाशमें समा पा रहे थे, और न धरतीपर। न वे ध्वजाओंपर ठहर रहे थे, और न अश्वोंसे जुते हुए रथोंपर। आगे-पीछे सब ओर, वे अप्रमेय थे। जहाँ भी दृष्टि जाती, वहाँ बाण-ही-बाण दिखाई दे रहे थे। एक ही क्षणमें मालि वहाँसे हट गया, और तब वज्रोदरने अपना रथ आगे बढ़ाया। उसने हनुमान्‌को सामने ललकारा, "हे पाप, तू कहाँ जाता है, मैं तुम्हारा क्षयकाल आ गया हूँ, तुम्हें इतनेमें ही घमण्ड हो गया कि युद्धमें तुमसे मालि हार गया। मैं योद्धाओंका मर्दक वज्रोदर हूँ, तुम पवनसुत हनुमान हो, भयभास्वर हम दोनों लड़ें, थोड़ा सुरासुर भी हमारा संग्राम देख लें" ॥१-९॥

[११] वे दोनों ही, इस प्रकार गरज रहे थे मानो निरंकुश मतवाले दो महागज हों। दोनों बेजोड़ मल्ल एक-दूसरेसे भिड़ गये। दोनों शत्रुओंके मनमें शंका उत्पन्न कर देते थे। दोनोंका अभिमान अखण्ड था। दोनोंका वंश शुद्ध था। दोनों सैकड़ों युद्धोंमें प्रशंसा प्राप्त कर चुके थे। फिर भी पवनसुत हनुमानने, जिसके पास प्रचण्ड सूर्यके समान कान्ति सम्पन्न रथ था, दो ही तीरोंसे उसके धनुषको इस प्रकार छिन्न-भिन्न कर दिया, मानो वज्रोदरका हृदय ही कट गया हो। वह दूसरा धनुष अपने हाथमें ले ही रहा था कि इसी बीचमें, हनुमानने उसके रथके सौ टुकड़े कर दिये। जब तक वह दूसरे रथ पर चढ़नेका प्रयास करता, तब तक उसने धनुषके टुकड़े-टुकड़े

आमण्ण-महारहेँ चडइ वीरु । धणुहरु वि तावँ किउ सय-सरीरु ॥७॥
मइयउ कोदण्डु ण लेइ जाम । बीओ वि महारहु छिण्णु ताम ॥८॥

घत्ता

तो णिसियरु जुज्झ-विसारउ वि-रहु कियउ वे-वारउ ।
पुणु पच्छलेँ माणेंहिँ मल्लिउ । महिहरु जिह ओणल्लिउ ॥९॥

[१२]

जं हउ असोअ-वणु मालि । तं स-रहसु धाइउ जम्बुमालि ॥१॥
मन्दोअरि-णन्दणु दणु-विणासु । सउ सीहहुँ रहेँ संजुत्तु तासु ॥२॥
ते वियड-दाढ ओरालि-वयण । उद्धुसिय-केस णिद्धुरिय-णयण ॥३॥
कन्धर-वलग्ग-लङ्गूल-दण्ड । णह-णियर-भयङ्कर चलण-चण्ड ॥४॥
आएँहिँ करि-कुम्भ-वियारणेहिँ । जसु जुत्तउ रहु पञ्चाणणेहिँ ॥५॥
सो जम्बुमालि मय-णन्दणासु । णिब्भारवण-वण-मद्दणासु ॥६॥
आलग्गु सु-करयलेँ करेँवि चाउ । सु-कलत्तु जेम्व जं सु-पणाउ ॥७॥
तं आयामेंवि बहु-मच्छरेण । णाराउ विसज्जिउ णिसियरेण ॥८॥

घत्ता

जण-णयणाणन्द-जणेरउ धउ हणुवन्तहों केरउ ।
विन्धेप्पिणु महियलेँ पाडिउ णह-सिरि-हारु व तोडिउ ॥९॥

[१३]

जं छिण्णु महद्धउ दुद्धरेण । तं पवण-सुएण धणुद्धरेण ॥१॥
दो दीहर सर-णाराय मुक्क । रिउ-रहवर-धयासण्णा ढुक्क ॥२॥
एक्केण कवउ एक्केण चाउ । णिद्दलिउ णाइँ जिणेण पाउ ॥३॥
अण्णाहु अण्णु परिसँ वि मलेण । धणुहरु वि लेवि विहडप्फडेण ॥४॥

कर दिये। जब तक वह तीसरा धनुष ले, तब तक उसने दूसरा रथ भी छिन्न-भिन्न कर दिया। फिर भी निशाचरको युद्धका चाव हो रहा था, उसे भी चार रश्मिहीन बना दिया गया, परन्तु वह नहीं माना। आखिरकार उसे तीरोंसे इतना छेद दिया गया कि वह पहाड़की भाँति झुक गया ॥१–९॥

[१२] वज्रोदरके इस प्रकार मारे जाने पर, मालि भी नष्ट प्राय हो गया। उसके बाद जम्बूमालि हर्षसे उछलता हुआ युद्ध स्थल पर दौड़कर आया। यह मन्दोदरी देवीका पुत्र था। उसने दानवोंका नाश किया था। उसके रथमें सौ सिंह जुते हुए थे। उनकी दाढ़ें विकराल थीं और मुख टेढ़े थे। केश पुलकित हो रहे थे, और नेत्र भयंकर थे। उनकी पूँछ कन्धों को छू रही थी, उनका नख समूह और चरण दण्ड भयंकर थे। इस प्रकार गजघटाको विदीर्ण करनेवाले सिंहोंसे उसका रथ युक्त था। जम्बुमाली, अपने हाथमें धनुष लेकर, हनुमान् के पीछे हाथ धोकर पड़ गये, उस हनुमान् पर जिसने नन्दन-वनका विनाश किया था। उन्होंने धनुष अपने हाथमें ले लिया। वह धनुष अच्छी स्त्रीकी भांति था। ईर्ष्यासे भर कर उस निशाचरने तीर मारा। जनोंके नेत्रोंको आनन्ददायक हनुमान् का ध्वज, उस तीरसे बिंधे होकर धरती पर गिरा दिया। मानो आकाश रूपी स्त्रीका हार टूट कर गिर पड़ा हो ॥१–९॥

[१३] जब महाध्वज छिन्न-भिन्न हो गया तो उद्धत धनुर्धारी पवनसुत हनुमान्ने दो बड़े-बड़े लम्बे तीर फेंके जो शत्रुके रथ-वर की पीठासनके निकट पहुँचे। एक तीरने कवच, दूसरेने धनुष नष्ट कर दिया, मानो जिन भगवान्ने पाप नष्ट कर दिया हो। दूसरा सण्णाह (?) छोड़कर विकट योद्धाने धनुष ले लिया। लम्बे तीरोंसे उसने हनुमान्को घायल कर दिया, जैसे कोमल

रत्तुप्पलु विन्दु इन्दिवर-सरीहिँ । जं कोमल-दल-इन्दीवरेहिँ ॥५॥
हणुवेण वि मेल्लिउ अद्धयन्दु । अइ-दीहरु णाइँ समास-दण्डु ॥६॥
उम्मोत्तिय तेण समत्थ सीह । मत्तेभ-कुम्भ-मुत्ताहलोह ॥७॥
अवरुण्ड पडिपिल्लिय वलु असेसु । ओहामिय-हय-गय-णरवरेसु ॥८॥

घत्ता

उद्धुय-कक्खुउल-पईहेँहिँ वलु लज्जन्तउ सीहेँहिँ ।
णासइ भय-वेविर-गत्तउ अवरोप्परु ओहुल्लत्तउ ॥९॥

[१४]

वलु सयलु वि किउ भय-विहलु जाम्ब हणुवन्तु दसाणणेँ भिडिउ ताम ॥१॥
पञ्चाणणा-सन्दणु पवय-चिन्धु । थिउ उवहेँ वि रण-भर-धुरहेँ खन्धु ॥२॥
सो जुज्झमाणु जं दिट्ठु तेण । मयणाहु लइउ लङ्काहिवेण ॥३॥
रण-रहसुच्छलियहोँ उरेँ ण माइ । सुहि-सङ्कमेँ गरुअ-सणेहु णाइँ ॥४॥
पुणु दुक्खु दुक्खु आइद्धु अङ्गेँ । सीसक्कु करेप्पिणु उत्तमङ्गेँ ॥५॥
आयामिउ धणुहरु लइउ वाणु । पारद्धु समरु हणुवेँ समाणु ॥६॥
तहिँ तेहएँ कालेँ धणुद्धरेण । रहु अन्तरेँ दिण्णु महोअरेण ॥७॥
हक्कारिउ मारुइ 'थाहि थाहि । सवडम्मुहु रहवरु वाहि वाहि' ॥८॥

घत्ता

मं सुणेँ वि महोअरु जेत्तहेँ रहवरु वाहिउ तेत्तहेँ ।
उत्थरिय बे वि समरङ्गणेँ णं खय-मेह णहङ्गणेँ ॥९॥

[१५]

हणुवन्तेँ महोअरु भिडिउ जाम । सो जम्बुमालि सम्पत्तु ताम ॥१॥
सण्णोहेंवि रहवरेँ समरु सीहु । ढुक्कन्तु चण्डु कलुगुल-दीहु ॥२॥

नीलकमलोंने वेध दिया हो। तब हनुमान्‌ने भी अर्धचन्द्र छोड़ा, वह इतना लम्बा था, मानो समास दण्ड हो। उससे समर्थ सिंह सहसा उत्तेजित हो उठे। वे सिंह जो मतवाले हाथियोंके गण्डस्थलोंके मोतियोंकी इच्छा रखते हैं। समस्त सेना आपस में भिड़ गयी। गज अश्व और नरवर सब झुक गये। उठी हुई पूँछों वाले सिंहोंकी सेना एक दूसरेके लिए एक दूसरेको कवलित कर रही थी। भयभीत शरीर वह नष्ट हो रही थी और एक दूसरे पर लोट-पोट हो रही थी ॥१-९॥

[१४] जब समूची सेना भयभीत हो उठी तो हनुमान्‌को जाकर दशाननसे भिड़ना पड़ा। उसके रथपर सिंह एवं पताकाओंपर बन्दर थे। वे ऐसे जान पड़ते जैसे धूलिकण जाकर चिपक गये हों, हनुमान्‌को लड़ते देखकर रावणने भी अपना कवच उठा लिया। युद्ध जनित उत्साहसे पूरित हृदयमें वह कवच नहीं समाया। मानो पण्डितोंके मध्य भारी स्नेह-धारा न समा पा रही हो। बड़ी कठिनाईसे उसने शरीरमें कवच पहन लिया, और सिर पर टोपी पहन ली। धनुष झुका कर उसने उसपर तीर रख दिया, और हनुमान्‌के साथ युद्ध प्रारम्भ कर दिया। ठीक इसी समय महोदरने दोनोंके बीचमें अपना रथ आगे बढ़ा दिया। उसने मारुतिसे पुकार कर कहा, "ठहरो ठहरो, अपना श्रेष्ठ रथ सम्मुख बढ़ाओ"। यह सुनकर महोदरकी ओर मारुतिने अपना रथ आगे बढ़ा दिया। वे दोनों युद्धके मैदानमें अपने रथोंसे इस प्रकार उतर पड़े मानो आकाशमें प्रलयके मेघ हों ॥१-९॥

[१५] हनुमान् इस प्रकार महोदरसे भिड़ ही रहा था कि इतनेमें जम्बूमालि वहाँ आ धमका। उसने सभी सिंह अपने रथमें जोत लिये। वे सब उद्दण्ड प्रचण्ड और लम्बी पूँछ वाले

सहुँ तेण पराइउ मल्लवन्तु । धुन्धुरु धूमक्खु कयन्तदन्तु ॥३॥
हालाहलु विज्जुलु विज्जुजीहु । भिण्णञ्जणु पहु भुअ-फलिह-दीहु ॥४॥
जमघण्टु जमाणणु कालदण्डु । विहि डिण्डिमु डम्बरु डमरु-चण्डु ॥५॥
कुसुमाउहु अङ्कु मयङ्कु सङ्कु । खरवियारि सम्भु करि मयरङ्कु ॥६॥
सुउ सारणु मउ मारिच्चि-राउ । बीभच्छु महोयरु भीमकाउ ॥७॥
आएँहिँ लङ्काहिव-किङ्करेहिँ । वेढिउ हणुवन्तु भयङ्करेहिँ ॥८॥

घत्ता

जं सव्वेँहिँ लइउ असेसेँण हणुवेँ हरिसिय-गत्तेँण ।
आयामिय समरेँ पचण्डेँहिँ वइरि स इं भुव-दण्डेँहिँ ॥९॥

[६५. पंचसट्ठिमो संधि]

हणुवन्तु रणेँ परिवेढिज्जइ णिसियरेँहिँ ।
णं गयणयलेँ बाल-दिवायरु जलहरेँहिँ ॥

[१]

पर-बलु अणन्तु हणुवन्तु एक्कु । गय-जूहहोँ णाइँ मइन्दु थक्कु ॥१॥
आरोक्कइ कोक्कइ समुहु थाइ । जहिँ जहिँ जेँ थट्टु तहिँ तहिँ जेँ धाइ ॥२॥
गय-घड भड-थड भञ्जन्तु जाइ । वंसत्थलेँ लग्गु दवग्गि णाइँ ॥३॥
एक्कु रहु महाहवेँ रस-विसट्टु । परिभमइ णाइँ चक्केँ महयवट्टु ॥४॥
सो ण वि भडु जासु ण मलिउ-माणु । सो ण वि धउ जासु ण लग्गु बाणु ॥५॥
सो ण वि पहु जासु ण कवउ छिण्णु । सो ण वि गउ जासु ण कुम्भु भिण्णु ॥६॥
सो ण वि तुरङ्गु जसु गुडु ण तुट्टु । सो ण वि रहु जासु ण रहङ्गु फुट्टु ॥७॥
सो ण वि भडु जासु ण छिण्णु गत्तु । तं ण वि विमाणु जं सरु ण पत्तु ॥८॥

थे। उसके साथ माल्यवंत भी आ गया। धुन्धुरु, धूम्राक्ष, कृतान्तदन्त, हालाहल, विद्युत, विद्युतजिह्वा, भिन्नांजन और पथ भी गये। उनकी भुजाएँ शलकके समान थीं। यमघट, यमानन, कालदण्ड, विधि, डिण्डिम, डम्बर, डमर, चण्ड, कुसुमायुध, अर्क, मृगाङ्क, शक्र, खपिता, अरि, शम्भु, करि, मकर और नक्र आदि रावणके भयंकर अनुचरोंने हनुमान्को घेर लिया, इस प्रकार सबने मिलकर, हनुमान्को घेर लिया और क्षात्रधर्मकी चिन्ता नहीं की। हनुमान्का शरीर हर्षसे उछल पड़ा, और युद्धमें अपनी प्रचण्ड भुजाओंसे सबको नत कर दिया॥१-९॥

•

पैंसठवीं सन्धि

हनुमान्को निशाचरोंने युद्धमें इस प्रकार घेर लिया, मानो आकाशतलमें बालसूर्यको मेघोंने घेर लिया हो।

[१] शत्रुसेना असंख्य थी, और हनुमान् अकेला था, मानो गजघटाके बीच, सिंह स्थित हो। वीर हनुमान्, उन्हें रोकता, ललकारता और सम्मुख जाकर खड़ा हो जाता। जहाँ झुण्ड दिखाई देता, वहीं दौड़ पड़ता। वह गजघटा और सैन्यसमूह-को इस तरह नष्ट कर रहा था, मानो बाँसोंके झुरमुटोंमें आग लगी हो। एक रथ होकर भी, वह उस महायुद्धमें उत्साहसे भरा हुआ था। वह कालकी भाँति सेनामें घूम रहा था। ऐसा एक भी योद्धा नहीं था जिसका मान गलित न हुआ हो, ऐसा एक भी ध्वज नहीं था जिसमें तीर न लगा हो, ऐसा एक भी राजा नहीं था, जिसका कवच न टूटा-फूटा हो, ऐसा एक भी गज नहीं था, जिसका गण्डस्थल आहत न हुआ हो। एक भी ऐसा अश्व नहीं था कि जिसकी लगाम साबित बची हो।

घत्ता

जगबन्धु मल्लु मारिउ भिण्णइ जहिँ जेँ जहिँ ।
सङ्गाम-महि रुण्ड-णिरन्तर तहिँ जेँ तहिँ ॥९॥

[१]

जं जिणेँ वि ण सक्किउ वर-भडेंहिँ । वेढाविउ मारुइ गय-घडेंहिँ ॥१॥
गिरि-सिहर-गहिर-कुम्भत्थलेंहिँ । अणवरय-गलिय-गण्डत्थलेंहिँ ॥२॥
छप्पय-झङ्कार-मणोहरेंहिँ । घण्टा-टङ्कार-भयङ्करेंहिँ ॥३॥
तण्डविय-कण्ण-उद्धुअ-करेंहिँ । सुकङ्कुसेंहिँ मय-णिब्भरेंहिँ ॥४॥
जं वेढिउ रण-मुहेँ पवण-जाउ । तं धाइउ कइधय-भड-णिहाउ ॥५॥
जहिँ उम्मउ णीलु सुसेणु हंसु । गउ गवउ गवक्खु विसुद्ध-वंसु ॥६॥
सन्तासु विराहिउ सूरजोत्ति । पीइङ्करु किङ्करु कच्छिभुत्ति ॥७॥
चन्दप्पहु चन्दमरीचि रम्भु । सद्दूलु विउलु कुलपवणधम्मु ॥८॥

घत्ता

आऍहिँ भडेँहिँ मारुइ उव्वेढावियउ ।
णं णिय-गुणेँहिँ जीउ व भव मेल्लावियउ ॥९॥

[२]

रण-रसिएँहिँ वेढाविद्धएहिँ । पेल्लिउ पडिवक्खु कइद्धएहिँ ॥१॥
णासइ णिहंसप्फलु गलिय-खग्गु । चूरन्तु परोप्परु चलण-मग्गु ॥२॥
भज्जन्तउ पेक्खेँ वि णियय-सेण्णु । रावणु जयकारें वि कुम्भयण्णु ॥३॥
धाइउ मय-भीसणु भीम-काउ । णं राम-बलहों खय-कालु आउ ॥४॥
परिसक्कइ रण-भूमिहेँ ण माइ । गिरि मन्दरु माणहों चलिउ णाइँ ॥५॥

ऐसा एक भी रथ नहीं था जिसका पहिया टूटा-फूटा न हो। एक भी ऐसा योद्धा नहीं था जिसका शरीर आहत न हुआ हो। ऐसा एक भी विमान नहीं था जिसमें तीर न लगे हों। सेनासे लड़ता भिड़ता, हनुमान् जहाँ भी निकल जाता, युद्धभूमि, वहाँ धड़ोंसे पट जाती ॥१-९॥

[२] जब बड़े-बड़े योद्धा नहीं जीत सके तो हनुमान्‌को गजघटाओंने घेर लिया। उनके कुम्भ स्थल, पर्वतशिखर के समान गम्भीर थे। ऐसे सिर जिनसे अनवरत मद्‌जल बह रहा था। भौंरोंकी सुन्दर झंकार हो रही थी। घण्टोंकि टंकारसे वे भयंकर लग रहे थे। वे अपने कान फड़फड़ा रहे थे। उनकी सूँड़ें उठी हुई थीं। अंकुशसे रहित, वे अत्यन्त मतवाले हो रहे थे। जब युद्धमुखमें पवनपुत्र इस प्रकार घिर गया तो वानर योद्धाओंका समूह दौड़ा। वहाँ जाम्बवान नील सुसेन हंस गय गवय विसुद्धवंश गवाक्ष सन्तास विराधित सूर ज्योति पीतङ्कर किंकर लक्ष्मीभुक्ति चन्द्रप्रभ चन्द्रमरीच रम्भ शार्दूल विपुल और कुलपवन स्तम्भ थे। इन योद्धाओंने हनुमान्‌को बन्धन हीन बना दिया,ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार संसारमें जीव अपने गुण उसे छोड़ देते हैं ॥१-९॥

[३] क्रुद्ध युद्धजन्य उत्साहसे भरे हुए कपिध्वजियोंने शत्रुओंको खदेड़ दिया। व्याकुलतासे वे नष्ट होने लगे। उनकी तलवारें छूट गयीं। वे एक दूसरेके चरणचिह्न रौंधने लगे। अपनी सेनाको इस प्रकार नष्ट होते देखकर कुम्भकर्णने रावण-की जय बोली। भयभीषण, विशालकाय वह इस प्रकार दौड़ा मानो रामकी सेनापर विशाल काल ही टूट पड़ा हो। वह युद्ध भूमिमें नहीं समा रहा था, मानो मन्दराचल ही अपने

जउ जउ जेँ स-मच्छरु देइ दिट्ठि । तउ तउ जेँ पडइ णं पलय-विट्ठि ॥६॥
को वि वाएं को वि भिउडिएँ पणट्ठु । को वि ठिउ अवठम्भेँ वि धरणि-वट्टु ॥७॥
को वि कह वि कडक्खएँ णिरु णिसुक्कु । को वि दूरहोँ जेँ पाणेंहिँ विमुक्कु ॥८॥

घत्ता

सुग्गीव-बलेँ गइअउ हुअउ हुलप्फलउ ।
णं भग्गहरेँ हत्थि पइट्ठउ राउलउ ॥९॥

[४]

उच्चेढाविउ हणुवन्तु जेहिँ । गउ सक्किउ वयणु वि णिएँवि तेहिँ ॥१॥
परिचिन्तिउ 'सइ आइउ विणासु । किय(?)बलु जेँ करेसइ एक्कु गासु' ॥२॥
तहिँ अवसरेँ धाइउ अमियचिन्धु । दहिमुहु माहिन्दु महिन्दु इन्दु ॥३॥
रइवद्धणु णन्दणु कुमुउ कुन्दु । मइकन्तु महोवहि मइसमुद्दु ॥४॥
कोलाहलु तरलु तरङ्गु तारु । सुग्गीउ अङ्गु अङ्गयकुमारु ॥५॥
सम्मेउ सेउ ससिमण्डलो वि । चन्दाहु कन्तु मामण्डलो वि ॥६॥
विद्धुमइ वसन्तु वेलन्धरो वि । वेलक्खु सुवेलु जयन्धरो वि ॥७॥
आयामेँ वि बहुरिहि तणउ सेण्णु । समकम्पिउ सव्वेंहिँ कुम्भयण्णु ॥८॥

घत्ता

एक्कलएँण तो वि थक्कन्तें सम्मुहेंण ।
बलु तासियउ गय-जूहु व पञ्चाणणेंण ॥९॥

[५]

जं तत्तु मुणिवि कइद्धएहिँ । समकम्पिउ देहाविद्धएहिँ ॥१॥
तहिँ कइकेसि-णन्दणाणन्दणेण । रूसेँ वि रयणासव-णन्दणेण ॥२॥
दारुणु धम्मण-मोहणु समत्थु । पम्मुक्कु दंसणावरण-अत्थु ॥३॥
सोवाविउ साहणु सयलु तेण । णं जगु अत्थन्तें दिणयरेण ॥४॥

स्थानसे च्युत हो गया था। वह ईर्ष्यासे जिसके ऊपर दृष्टि डालता उसपर मानो प्रलयकी वर्षा ही हो जाती। कोई उसकी वाणीसे, और कोई उसकी भौंहोंसे नष्ट हो रहा था। कोई धरतीकी पीठको पकड़ कर रह जाता। कोई उसके कटाक्षको देख कर ही जा छिपता और कोई दूरसे ही उसे देखकर अपने प्राण छोड़ देता। सुग्रीवकी सेनामें इससे ऐसी भयंकर हड़कम्प मच गयी, मानो राजकुलके अग्रगृहमें हाथी घुस आया हो ॥१-९॥

[४] जिन लोगोंने हनुमानको बन्धनमुक्त किया था, वे कुम्भकर्णका मुख तक देखनेका साहस नहीं कर पा रहे थे। वे मन ही मन सूख रहे थे कि लो अब तो विनाश आ पहुँचा। वह समूची सेनाको एक कौरमें समाप्त कर देगा। ठीक इसी अवसर पर अमृतबिन्दु, दधिमुख, माहेन्द्र, महेन्द्र, इन्दु, रतिवर्धन, नन्दन, कुमुद, कुन्द, मतिकान्त, महोदधि, मतिसमुद्र, कोलाहल, तरल, तरंग, तार, सुग्रीव, अंग, अंगदकुमार, सम्मेत, श्वेत, शशिमण्डल, चन्द्रांशु, कन्द, भामण्डल, पृथुमति, वसन्त, वेलन्धर, वेलाक्ष, सुवेल और जयन्धर आदि शत्रुसेनाने मिलकर कुम्भकर्णको घेर लिया। परन्तु उस अकेले वीरने ही सम्मुख आकर समस्त सेनाको इतना त्रस्त कर दिया, मानो सिंहने किसी गजसमूहको भयभीत कर रखा हो। ॥१-९॥

[५] जब क्रोधाभिभूत कपिध्वजियोंने क्षात्रधर्मको ताकपर रखकर कुम्भकर्णको चारों ओरसे घेर लिया, तो कैकशीके नेत्रोंको आनन्द देनेवाले रत्नाश्रवके पुत्र कुम्भकर्ण ने, अपना दृष्टि-आवरण नामका अस्त्र छोड़ा, वह अस्त्र स्थम्भन और सम्मोहन, दोनोंमें समर्थ था। उसके प्रभावसे समूची सेना सो गयी मानो सूर्यके अस्त होनेसे संसार ही सो गया हो।

को वि घुम्मइ को वि सरीरु वलइ । कासु वि किवाणु करयलहों गलइ ॥५॥
घुरुहुरइ को वि णिद्दाएँ सुत्तु । को वि गब्भन्तरें णरु णाइँ सुत्तु ॥६॥
एत्थन्तरें किक्किन्धाहिवेण । पडिबोहणत्थु पमुक्कु तेण ॥७॥
उम्मोहिउ वड्ढिउ वलु तुरन्तु । 'कहिँ कुम्भयण्णु वलु वलु' भणन्तु ॥८॥

घत्ता

भवकम्मुहउ पुणु वि पडीवउ धावियउ ।
णं उवहि-जलु महि रेल्लन्तु पराइयउ ॥९॥

[६]

पर-वलु णियवि रणेँ उत्थरन्तु । लङ्काहिवेण थरथरहरन्तु ॥१॥
करें कड्ढिउ णिम्मलु चन्दहासु । उग्गमिउ णाइँ दिणयर-सहासु ॥२॥
रिउ-साहणें णिवडइ ण णिवडइ जाम । [illegible] ताम ॥३॥
इन्दइ-घणवाहण-पजणक्क सिर-णमिय-किय-ञ्जलि-हत्थ थक्क ॥४॥
'अम्हेहिँ जीवन्तेँहिँ किङ्करेहिँ तुहुँ अप्पणु पहरहि किं करेहिं' ॥५॥
साभिउ सम्माणेंवि अद्ध-कोह तिण्णि वि समरङ्गणें भिडिय जोह ॥६॥
चण्डीअर-तणयहों भामणङ्कु घणवाहणु भामण्डलहों थक्कु ॥७॥
इन्दइ सुग्गीवहों समुहु वलिउ णं मेरु महोवहि महहुँ चलिउ ॥८॥

घत्ता

णरु णरवरहों तुरयहों तुरउ समावडिउ ।
रहु रहवरहों गयहों महग्गउ अभिमडिउ ॥९॥

[७]

सम्मुहुएँ जय-लच्छि-पसाहणेण । तिहुअणकण्टय-गय-वाहणेण ॥१॥
हक्कारिउ सुरवइ-मद्दणेण । सुग्गीउ दसाणण-णन्दणेण ॥२॥
'खल खुद्द पिसुण कइ-केउ राय । लङ्काहिव-केरा कुढ पाय ॥३॥

कोई घूम रहा था, किसीका शरीर मुड़ रहा था, किसीके हाथसे किवाड़ छूटा जा रहा था। नींद आनेके कारण, कोई घुर्रा रहा था। कोई ऐसे सो रहा था, मानो गर्भके भीतर हो। तब इसी अन्तरालमें किष्किन्धाराजने प्रतिबोधन अस्त्र छोड़ा। तुरन्त सेना जागकर उठ खड़ी हुई। वह चिल्ला उठी, 'कुम्भकर्ण कहाँ है, कुम्भकर्ण कहाँ है?' सेना सामने मुखकर उसकी ओर दौड़ी, मानो समुद्रका जल धरतीपर रेंगता हुआ, चला जा रहा हो ॥१-५॥

[६] जब लंकाराज रावणने देखा कि युद्धमें शत्रुसेना उछल-कूद मचाती हुई चली आ रही है, तो उसने अपनी थरथराती हुई निर्मल चन्द्रहास तलवार निकाल ली, उस समय ऐसा लगा मानो हजारों सूर्योंका उदय हो गया हो। वह शत्रुसेनासे भिड़ता न भिड़ता कि इतनेमें तीन प्रचण्ड वीर, उसके सम्मुख आये। ये थे इन्द्रजीत, मेघवाहन और वज्रकर्ण। वे प्रणामके अनन्तर हाथ जोड़कर खड़े हो गये। उन्होंने निवेदन किया, "हम लोगोंके जीते-जी, क्या आप अपने हाथोंसे आक्रमण करेंगे।" इस प्रकार अपने स्वामीका सम्मान कर, क्रुद्ध होकर वे तीनों योद्धाओंसे भिड़ गये। चन्द्रोदरके पुत्रसे वज्रकर्ण, और भामण्डलसे मेघवाहन। सुग्रीवके सम्मुख इन्द्रजीत इस प्रकार आया, मानो मन्थनके लिए मेरुपर्वत समुद्रके सम्मुख आ गया हो। पुरुषोंकी पुरुषों से, और अश्वोंकी अश्वोंसे भिड़न्त होने लगी। रथोंसे रथवर, और गजोंसे महागजों की ॥१-६॥

[७] संग्राममें विजयलक्ष्मीका शृंगार करनेवाले, दशाननके पुत्र इन्द्रजीतने सुग्रीवको ललकार दी। वह त्रिभुवनकंटक हाथी-पर सवार था, और उसने इन्द्रको दबोचा था। उसने कहा,

जिह रावणु मेल्लेँवि धरिउ रामु । जिह पहरु पहरु तउ लइमि णासु' ॥४॥
तं णिसुणेँवि किक्किन्धेसरेण । विज्जाहर-णर-परमेसरेण ॥५॥
णिब्भच्छिउ इन्दइ 'अरेँ कु-मल्ल । को तुहुँ को रावणु कवणु(?)बोल्ल' ॥६॥
दोच्छन्त परोप्पर मिलिय बे वि । सु-पणामइँ चावइँ करेँ हिँ लेवि ॥७॥
दीहर-णाराएँहिँ उत्थरन्त । णं पलय-जलय णव-जलु मुअन्त ॥८॥

घत्ता

बिहिँ मि जणेँहिँ छाइउ गयणु महासरेँहिँ ।
अब-गाढिएँहिँ पाउस-कालेँ व जलहरेँहिँ ॥९॥

[८]

दुद्दम-दणुवइ-दारण-समत्थु । इन्दइणामेल्लिउ वारुणत्थु ॥१॥
अत्थक्कएँ सुर-धणु पायडन्तु । गज्जन्त-जलउ तडि-तडयडन्तु ॥२॥
अणवरउ णीर-धारउ मुअन्तु । अहिणव-कलाव-केक्कार-देन्तु ॥३॥
तं पेक्खेँवि ताराबइ पलित्तु । धूमद्धउ णं माहएँण छित्तु ॥४॥
वायव-सरु सुग्गीवेण मुक्कु । णं पलय-कालु पर-बलहोँ ढुक्कु ॥५॥
साभोलि धूलि पाहण मुअन्तु । धय-छत्तदण्ड-दण्डुद्धुवन्तु ॥६॥
दुग्घोट्ट-थट्ट लोट्टन्तु सव्व । मोडन्तु महारह अतुल-गव्व ॥७॥
दुव्वाउ आउ जं बल-विणासु । तेण वि आमेल्लिउ णाग-पासु ॥८॥

घत्ता

सुग्गीउ रणेँ वेढिउ पवर-सरेण किह ।
मककम्मन्तएँण णाणावरणेँ जीउ जिह ॥९॥

"खल, नीच, और दुष्ट कपिराज सुग्रीव, तुम सचमुच लंका-नरेशके लिए पाप हो! तुमने जो रावणको छोड़कर रामका पक्ष लिया है, तो लो करो प्रहार, मैं तुम्हारे नाम तककी रेखा नहीं रहने दूँगा।" यह सुनकर, विद्याधरोंके स्वामी सुग्रीवने इन्द्रजीतको फटकारा "अरे कुमल्ल, क्या तुम हो और क्या रावण! इस तरह बोलकर आखिर क्या पाओगे।" इस प्रकार एक दूसरेको डाँट कर वे आपसमें भिड़ गये। उन्होंने अपने प्रसिद्ध धनुष हाथमें ले लिये। अपने लम्बे-लम्बे तीरोंसे, वे ऐसे उछल रहे थे मानो प्रलयके मेघ अपने नवजलकी वर्षा कर रहे हों। उन दोनों योद्धाओंने तीरोंसे आकाशको ढक दिया, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार, नये मेघ वर्षाकालमें ढक देते हैं ॥१-९॥

[८] दुर्दम निशाचरोंका दमन करनेमें समर्थ इन्द्रजीतने अपना मेघबाण छोड़ा। सहसा इन्द्रधनुष प्रगट हो गया, मेघ गरजने लगे, बिजली कड़कने लगी, अनवरत वर्षा हो रही थी, नये मोरोंकी ध्वनि सुनाई दे रही थी।' यह देखकर तारापति सुग्रीव भड़क उठा, उसने अपना वायव बाण छोड़ा, मानो पवनने स्वयं धूमध्वज छोड़ा हो, या मानो प्रलयकाल ही निशाचर सेनाके निकट पहुँच गया हो। हवाका बवण्डर, धूल, पत्थर, उससे बरस रहा था। ध्वज, छत्रदण्ड और दण्ड टूट-फूट रहे थे। गजघटा लोटपोट होने लगी। अतुलनीय गर्ववाले बड़े-बड़े रथ, लोटपोट होने लगे। इसी बीचमें दुर्दान्त आया, और उसने सेनाका नाश करनेवाला नागपाश फेंका। उस बड़े तीरसे सुग्रीव इस प्रकार घिर गया, मानो प्रबल ज्ञानावरण कर्मसे जीव घिर गया हो ॥१-९॥

[९]

किक्किन्ध-णराहिउ धरिउ जाम । घणवाहण-भामण्डलहुँ ताम ॥१॥
अब्भिट्टु परोप्परु जुज्झु घोरु । सरि-सोत्त-सउत्तर-पहर-थोरु ॥२॥
छिज्जन्त-महद्धय-गलिय-गत्तु । णिवडन्त-समुद्धुय-धवल-छत्तु ॥३॥
लोट्टन्त-महारह-हय-रहङ्गु । घुम्मन्त-पडन्त-महातुरङ्गु ॥४॥
फुट्टन्त-कवड तुट्टन्त-खग्गु । णच्चन्त-कबन्धय-असि-करग्गु ॥५॥
आयामेंवि रणें रोसिय-मणेण । अग्गेउ मुक्कु घणवाहणेण ॥६॥
आमेल्लिउ आहउ धगधगन्तु । अङ्गार-वरिसु णाइँ दक्खवन्तु ॥७॥
वारुणु विमुक्कु भामण्डलेण । णं गिरिहेँ वज्जु आखण्डलेण ॥८॥
उल्हाविउ जलणु जलेण जं जें । सरु णाग-पासु पम्मुक्कु तं जें ॥९॥

घत्ता

पुप्फवइ-सुउ दीहर-पवर-महासरेंहिँ ।
परिवेढियउ मलयधरेन्दु व विसहरेंहिँ ॥१०॥

[१०]

जं जिउ ताराबइ पवर-भुउ । अण्णु वि भामण्डलु जणय-सुउ ॥१॥
तं भग्गु असेसु वि राम-बलु । णं पवण-गलत्थिउ उवहि-जलु ॥२॥
एत्तहेँ वि ताम समावडिय । मरुणन्दण-कुम्भयण्ण भिडिय ॥३॥
पहरन्तहुँ बइरि-वियारणइँ । णिट्ठियइँ अणेयइँ पहरणइँ ॥४॥
पुणु बाहाबद्धें लग्ग किह । उद्दण्ड-सोण्ड वेयण्ड जिह ॥५॥
हणुवन्तु लइउ रयणीयरेंण । णं मेरु-महागिरि जिणवरेंण ॥६॥
चरणेहिँ धरेंवि उच्चाइयउ । णं गिरि-सिहरेण पक्कावियउ ॥७॥
पुणु लङ्का-णयरिहिँ उच्चलिउ । तारा-तणएण ताम खलिउ ॥८॥

[९] इस प्रकार किष्किन्धाराज पकड़ लिया गया, परन्तु मेघवाहन और भामण्डलमें तुमुलयुद्ध होने लगा। वे आपसमें भिड़ गये। उनमें युद्ध उत्तरोत्तर उग्र होता चला गया, उसी-प्रकार, जिस प्रकार नदीका प्रवाह धीरे-धीरे तेज होता आता है। महागजोंके भारी शरीर छीजने लगे। उद्धत धवल छत्र गिरने लगे। महारथोंके अश्व और पहिये लोट रहे थे। बड़े बड़े अश्व चकराकर गिर रहे थे। कवच फूट रहे थे, तलवारें टूट रही थीं। धड़ नाच रहे थे। उनके हाथोंमें तलवारें थीं। मेघ-वाहन ने, युद्धमें क्रुद्ध होकर आग्नेय बाण छोड़ा। मुक्त होते ही वह एकदम धकधकाता आया, आकाशमें ऐसा लग रहा था मानो अंगारे बरस रहे हों। तब भामण्डलने वारुण अस्त्र छोड़ा, मानो इन्द्रने पर्वतपर अपना वज्र छोड़ दिया हो, जब पानीसे आग्नेय बाणकी जलन शान्त हो गयी, तो मेघवाहनने अपना नागबाण छोड़ा। उसके लम्बे विशाल तीरोंसे भामण्डल इस प्रकार घिर गया, मानो साँपोंने मलयपर्वतको घेर लिया हो ॥१–१०॥

[१०] एक तो तारापति विशालबाहु सुग्रीव जीता जा चुका था, अब दूसरे जब जनकसुत भामण्डल भी जीत लिया गया, तो रामकी सेनामें खलबली मच गयी, मानो समुद्रका जल पवन से आन्दोलित हो उठा हो। इसी बीचमें हनुमान् और कुम्भकर्णमें भिड़न्त हो गयी। प्रहार करते हुए उनके, शत्रुओंका विदारण करनेवाले अनेक अस्त्र जब नष्ट हो चुके थे तो दोनोंमें बाहुयुद्ध होने लगा। उस समय ऐसा लगा मानो दो प्रचण्ड महागज ही आपसमें लड़ रहे हों। निशाचरने हनुमानको इस प्रकार पकड़ लिया, मानो जिनवरने सुमेरुपर्वतको उठा लिया हो। उसे पैरोंसे दबोचकर ऐसे उछाल दिया, मानो पहाड़-के शिखरपर उसे चढ़ा दिया हो। कुम्भकर्ण उसे लंका नगरीकी

घत्ता

भुअ-तत्तणेण समर-सएहिँ अहङ्गएँण ।
णीसङ्कु जिह रिउ विवरम्मुहु किउ अङ्गएँण ॥९॥

[११]

जं किउ विवरम्मुहु रणें रयणियरु । तं लग्गु पसंसएँ सुर-णियरु ॥१॥
रावण-अन्तेउरु लज्जियउ । थिउ वन्दि-वयणु दिहि-वज्जियउ ॥२॥
सन्धवइ जाम्ब णिय-परिहणउ । मारुइ विमाणु गउ अप्पणउ ॥३॥
तहिँ अवसरें मत्त-मयङ्ग-गमणेंण । जयकारिउ रामु बिहीसणेंण ॥४॥
'मइँ देव णिअन्तउ पेक्खु रणें । जिह जलणु जलन्तउ सुक्क-वणें ॥५॥
जइ महु णमि वयणु ण पर-बलहों । तो पइसमि धूमद्धएँ सवलहों' ॥६॥
गलगज्जेंवि एम णिसायरेंण । किउ करें कोवण्डु अ-कायरेण ॥७॥
सण्णाहु लइउ रहवरें चडिउ । रावण-णन्दणहों गम्पि भिडिउ ॥८॥
हक्कारइ पहरइ णिन्दइ वि । पणवइ घणवाहणु वन्दइ वि ॥९॥
'तुहुँ अम्हहँ वन्दण-जोग्गु किह । तिहिँ सञ्झहिँ परम-जिणिन्दु जिह ॥१०॥

घत्ता

जो जणण-समु तहों किं पावें चिन्तिएँण ।
किर कवणु जसु जुज्झन्तहुँ सहुँ पित्तिएँण' ॥११॥

[१२]

रणु पित्तिएण सहुँ परिहरेंवि । विण्णि वि कुमार गय ओसरेंवि ॥१॥
एत्तहें भामण्डलु धरेंवि णिउ । अण्णेत्तहें तारा-पाणपिउ ॥२॥
कुद्धें कग्गेंवि को वि ण सक्कियउ । अम्बरें अमरेंहिँ कलयलु कियउ ॥३॥

और ले चला। यह देखकर, ताराका पुत्र अंगद भड़क उठा। सैकड़ों युद्धोंमें अजेय अंगदने अपने कौशल से, अनासक्तकी भाँति, शत्रुको वस्त्रहीन कर दिया ॥१-१०॥

[११] जब युद्धमें कुम्भकर्ण नंगा हो गया, तो देवताओंका समूह, उसे देखकर मजाक करने लगा। रावण भी अन्तःपुरमें लाजमें गड़ गया। आँख बचाकर उसने मुख टेढ़ा कर लिया। कुम्भकर्ण अपने वस्त्र ठीक कर ही रहा था कि हनुमान् छूटकर अपने विमानमें पहुँच गया। इस अवसर पर योद्धाको मारनेकी साध रखनेवाले विभीषणने रामकी जय बोली और कहा, "हे देव, मुझे युद्धमें लड़ते हुए आप देखना। मैं उसी प्रकार लड़ूँगा जिस प्रकार सूखे वनमें आग जलती है! यदि मैंने शत्रुसेनाके मुखपर कालिख नहीं पोती, तो मैं आगमें प्रवेश करूंगा!" इस प्रकार घोषणा कर, निशाचरराज वीर विभीषणने धनुष अपने हाथमें ले लिया। सन्नद्ध होकर वह रथमें बैठ गया और जाकर रावणके पुत्रसे भिड़ गया। वह ललकारता, आक्रमण करता, उनकी निन्दा करता। मेघवाहन और इन्द्रजीत उसे प्रणाम कर रहे थे। उन्होंने कहा, "आप हमारे लिए उसी प्रकार प्रणाम करने योग्य हैं, जिस प्रकार तीनों सन्ध्याओंमें परमजिन वन्दना करने योग्य हैं। जो पिताके समान हो, उसके विषयमें अशुभ सोचना पाप है। आप ही बताइए कि चाचाके साथ लड़नेमें कौन-सा यश मिलेगा ॥१-११॥

[१२] इस प्रकार अपने चाचाके साथ उन्होंने युद्ध नहीं किया। दोनों कुमार वहाँ से हटकर चले गये। एक तो भामण्डलको पकड़कर ले गया, और दूसरा ताराके प्राणप्रिय सुग्रीवको! कोई भी उन दोनोंका पीछा नहीं कर सका। आकाशमें देवताओंमें

तहिँ अवसरेँ आसङ्किय-मणेँण । वुच्चइ लक्खणु विहीसणेण ॥४॥
'जइ खिज्जि वि णिय णारयइ पवर । तो ण वि सरेँ ण वि तुरुँ णाहि रहवर ॥५॥
ण वि हय ण वि गय रहवरहिँ सहुँ । जं जाणहि तं चिन्तवहि लहु' ॥६॥
तं णिसुणेँवि वूढ-महाहवेँण । महकोयणु चिन्तिउ राहवेँण ॥७॥
उवसग्ग-हरणेँ विण्णि मि जणाइँ । कुलभूसण-देसविहूसणाइँ ॥८॥

घत्ता

परितुट्ठएँण विज्जउ जिह वर-रोहिणिउ ।
जं(?)दिण्णियउ गरुड-सिंगाहिव-वाहिणिउ ॥९॥

[१३]

सो गरुडु देउ झाइउ मणेँण । थरहरिउ णवर सहुँ आसणेँण ॥१॥
किर अवहि पउञ्जेँवि लक्खियउ । 'कहि सुज्झिउ रामेँ चिन्तियउ' ॥२॥
पुणु चिन्तेँवि देउ समुट्ठियउ । लहु विज्जउ लेप्पिणु पट्ठविउ ॥३॥
हरिवाहणि सत्त-सएँहिँ सहिय । गारुड्ड ताहँ वि ति-सएँहिँ अहिय ॥४॥
वे छत्तइँ ससि-सूर-प्पहइँ । रयणाइँ तिण्णि रणेँ दूसहइँ ॥५॥
गय विज्ज पत्त णारायणहोँ । हल-मुसलइँ सीर-प्पहरणहोँ ॥६॥
चिन्तिय-मेत्तइँ सम्पाइयइँ । मुक्कइँ पर-वलहोँ पधाइयइँ ॥७॥
तहेँ गारुड-विज्जहेँ दंसणेँण । गय णाग-पास णासेँवि खणेँण ॥८॥

घत्ता

भामण्डलेँण सुग्गीवेण वि गम्पि वलु ।
जोक्कारियउ लाएँवि सिरेँ सइँ भुव-जुवलु ॥९॥

कोलाहल होने लगा ! उस अवसरपर, शंकासे भरकर, विभीषण-ने रामसे कहा, "यदि ये दोनों वीर इस प्रकार चले गये, तो न मैं बचूँगा, न आप, और न दूसरे लोग। रथोंके साथ, न अश्व होंगे और न गज। आप जो ठीक समझें पहले उसका विचार करें। यह सुनकर, बड़े-बड़े योद्धाओंका निर्वाह करनेवाले राम ने महलोचन व्यन्तरदेवको याद किया। यह व्यन्तरदेव, कुलभूषण, देशभूषण महाराजका उपसर्ग दूर करते समय रामसे मिला था। सन्तुष्ट होकर, उस व्यन्तरदेव ने इन्हें सुन्दर गृहिणीकी भाँति दो विद्याएँ दीं, एक गरुड़वाहिनी और दूसरी सिंहवाहिनी ॥१-९॥

[१३] रामने उस गरुड़का ध्यान किया। एकदम उसका आसन काँप गया। उसने अवधिज्ञानसे जान लिया कि रामने उसकी याद की है। यह सोचकर वह उठा और शीघ्र ही विद्याओंको लेकर भेज दिया। सिंहवाहिनी विद्याके साथ सातसौ सिंह थे और गारुड़ विद्याके साथ तीनसौ साँप थे। सूर्य और चन्द्रमाकी कान्तिके समान उनके दो छत्र थे। तथा युद्धमें असह्य तीन रत्न भी उनके पास थे। वे दोनों शीघ्र ही रामके पास पहुँच गयीं। हल और मूसलकी भाँति ! ये विद्याएँ उन्हें चिन्तन करते ही प्राप्त हुई थीं और छोड़ते ही शत्रुओंके ऊपर दौड़ पड़ीं। गारुड़ विद्याको देखते ही, नागपाशके एक क्षणमें टुकड़े-टुकड़े हो गये। तब भामण्डल और सुग्रीव अपनी सेनामें वापस आ गये ! लोगोंने हाथ माथेसे लगाकर जय-जय शब्दके साथ, उनका अभिवादन किया ॥१-९॥

●

[६६. छासट्ठिमो संधि]

सुज्झण-मणहँ अरुणुग्गमेँ किय-कलयलहँ ।
अब्भिट्टाइँ पुणु वि राम-रावण-वलहँ ॥

[१]

गयवर-तुरय-जोह-रह-सीह-विमाण-पवाहणाइँ ।
रण-सूरहँ हयाइँ किउ कलयलु भिडियइँ साहणाइं ॥१॥
जाव महाहवु वेहाविद्धहुँ । वलहुँ णिसायर-वाणर-चिन्धहुँ ॥२॥
रणु-विणिवारण-पहरण-हत्थहुँ । अमर-वरङ्गण-गहण-समत्थहुँ ॥३॥
परिओसाविय-सुरवर-...हुँ । वड्ढिय जयसिरि-विक्कम-वन्थहुँ ॥४॥
मलगजन्त-मत्त-मायङ्गहुँ । पवण-गमण-पक्खरिय-तुरङ्गहुँ ॥५॥
दप्पुब्भडहुँ समुण्णय-माणहुँ । घण्टा-घण-टङ्कार-विमाणहुँ ॥६॥
सगुड-सणाहहुँ सण्णद्ध-वीरहुँ । पुव्व-वइर-मच्छर-परिगीढहुँ ॥७॥
उद्धुव-धवल-छत्त-धय-दण्डहुँ । पवर-करप्फालिय-कोवण्डहुँ ॥८॥
मेल्लिय-एक्कमेक्क-सर-जालहुँ । तिक्खुग्गामिय-कर-करवालहुँ ॥९॥

घत्ता

भिडेँ पढमयरेँ रउ वलणाहउ लहुय-छलु ।
णं उत्थियउ सुअण-मुहइँ मइलन्तु खलु ॥१०॥

[२]

खुर-खर-खज्जमाणु णं णासइ महियएँ हयवराहुं ।
णं आहुउ णिसारओ णं हक्कारउ सुरवराहुं ॥१॥

छियासठवीं सन्धि

सूर्योदय होते ही युद्धके लिए आतुर दोनों सेनाओंमें कोलाहल होने लगा। । राम और रावण की सेनाएँ फिरसे भिड़ गयीं।

[१] उत्तम हाथी, अश्व, योद्धा, रथ, सिंह, विमान और दूसरे वाहन चल पड़े। युद्धके नगाड़े बज उठे। कोलाहल होने लगा। सेनाएँ आपसमें भिड़ गयीं। क्रोधसे अभिभूत निशाचर और वानर-सेनाओंमें महायुद्ध प्रारम्भ हो गया। दोनोंके हाथमें निशाचर संहारक अस्त्र थे। दोनों ही सेनाएँ अमरांगनाओंको ग्रहण करनेमें समर्थ थीं। दोनों ही सेनाएँ देवसमूहको सन्तुष्ट कर चुकी थीं। दोनोंने वीरता और जयश्री को पानेका मार्ग प्रशस्त किया था। दोनों ओर मतवाले हाथी गरज रहे थे। और पवनकी चालवाले अश्व कवच पहने हुए थे। दोनों सेनाएँ गर्वसे उद्धत थीं। उनके हौसले ऊँचे थे। विमान घण्टों की ध्वनियोंसे गूँज रहे थे। दोनों सेनाएँ रासयुक्त रथोंकी पीठों पर आसीन थीं। दोनों पूर्व वैर और ईर्ष्यासे भरी हुई थीं। दोनोंके पास ऊँचे सफेद छत्र और ध्वजदण्ड थे। सैनिक अपने विशाल बाहुदण्डोंसे धनुष की टंकार कर एक दूसरे पर तीरोंकी बौछार कर रहे थे। उनके हाथोंमें तीखी और पैनी तलवारें थीं। पहली ही भिड़न्तमें चरणोंसे आहत धूल इस प्रकार उठी, मानो सज्जनका मुख मैला करनेके लिए, कोई खल जन ही उठा हो ॥१-१०॥

[२] खुरोंसे खोदी हुई धूल, मानो महाश्वोंके डरसे नष्ट हो रही थी। वहाँसे हटाये जाने पर, मानो वह देवताओंसे पुकार

णं पाय-पहारहों ओसरेंवि । धाइउ णिय-परिहउ सम्भरेंवि ॥२॥
णं दुज्जणु सीस-वलग्गु किउ णं उत्तमु सव्वहुँ उवरि थिउ ॥३॥
सो ण वि रहु जेत्थु ण पइसरिउ । सो ण वि गउ जो ण वि धूसरिउ ॥४॥
सो ण वि हउ जो ण वि मइलियउ । सो ण वि धउ जो ण वि कवलियउ ॥५॥
जउ रमइ दिट्ठि तउ रय-णियरु । णउ णावइ मणुसु ण रयणियरु ॥६॥
तेत्तहें वि के वि धावन्ति भड । जेत्तहें गलगज्जइ हत्थि-हड ॥७॥
जेत्तहें सन्दण मणु-मीसियइँ । सुव्वन्ति तुरङ्गम-हिंसियइँ ॥८॥
जेत्तहें धणुहर गुण-गहिय-सर । जेत्तहें हुङ्कार मुअन्ति णर ॥९॥

घत्ता

तेहएँ समरें सूराह मि भज्जन्ति मइ ।
गय-गिरिवरेंहिं ताम समुट्ठिय रुहिर-णइ ॥१०॥

[३]

गयवर-गण्ड-सेल-सिहरग्ग-विणिग्गय णइ तुरन्ति ।
उद्धुव-धवल छत्त डिण्डीर-पीड-समुव्वहन्ति ॥१॥

पवरोज्झर-सोणिय-जल-पवाह । करि-मयर-तुरङ्गम-णक्क-गाह ॥२॥
चक्कोहर-सन्दण सुंसुमार । करवाल-मच्छ-परिहच्छ-वार ॥३॥
मत्तेभ-कुम्भ-भीसण-सिलोह । सिय-चमर-वलाया-पन्ति-सोह ॥४॥
सं णइ तरेवि के वि मावरन्ति । वुड्डन्ति के वि के वि उव्वरन्ति ॥५॥
के वि रय-धूसर के वि रुहिर-लित्त । के वि हत्थि-हडएँ चिहुणेवि घित्त ॥६॥
के वि लग्ग पडीवा दन्त-मुसलें । णं धुत्त विलासिणि-सिहिण-जुअलें ॥७

करने जा रही हो! मानो पैरोंसे आहत होकर अपने अपमान-की याद कर दौड़ी जा रही हो, मानो दुर्जनके सिरसे लगने जा रही हो, मानो इतनी उत्तम थी कि सबके ऊपर जाकर स्थित हो गयी। ऐसी एक भी चीज नहीं थी कि जहाँ धूल न फैली हो, ऐसा एक भी हाथी नहीं था जो धूलधूसरित न हुआ हो, ऐसा कोई अश्व नहीं था जो मैला न हुआ हो। ऐसा एक भी ध्वज नहीं था जो धूलभरा न हुआ हो, जहाँ भी दृष्टि जाती वहाँ धूल का ढेर दिखाई देता। कोई भी दिखाई नहीं देता, न मनुष्य और न निशाचर। जहाँ भी हाथी का समूह गरजता वहीं योद्धा दौड़ जाते। जहाँ भी निशाचरोंसे भरे रथ थे, वहीं अश्वोंकी हिनहिनाहट सुनाई दे रही थी। जहाँ डोरी पर तीर चढ़ाये हुए धनुर्धारी थे और जहाँ मनुष्य हुँकार भर रहे थे उस महायुद्धमें अच्छे-अच्छे शूर-वीरोंकी भी मति कुण्ठित हो उठती थी। इतनेमें महागज रूपी पहाड़ोंसे रक्तकी नदी बह निकली ॥१-१०॥

[३] तुरन्त ही महागजोंके गण्ड रूपी शैल-शिखरसे रक्तकी नदी बह निकली जिसमें उड़ते हुए धवलछत्र फेनके समूहके समान जान पड़ते थे। बड़े-बड़े निर्झरोंसे रक्त रूपी जल बह रहा था। उसमें हाथी और मगर रूपी ग्राह थे। चक्रधर रथ शिशुमार थे। उसका जल तलवारकी मछलियोंसे शोभित था। उसमें मतवाले महागजोंकी चट्टानोंका समूह था। सफेद चाँवरों रूपी बगुलोंकी कतार शोभा पा रही थी। कितने ही योद्धा उस नदीको पार कर कुछ हलचल मचाते और कितने ही उसमें डूब कर खबर नहीं पाते। कितने ही धूलधूसरित हो गये और कितने ही खूनसे रंग गये, कितने ही गजघटामें पिस कर गिर पड़े। कोई उलटकर हाथीके दाँतोंसे जा लगा मानो

कें वि णियय-विमाणहों लग्ग देन्ति । णहें णियउँ वि वइरिहिं सिरइँ लेन्ति ८
तहिं तेहएँ रणें सोणिय-जलेण । रउ णासिउ मज्जणु जिह खलेण ॥९॥

घत्ता

रावण बलेंण किउ विवरामुहु राम-बलु ।
पडिपेल्लियउ णं दुव्वाएं उवहि-जलु ॥१०॥

[४]

णिसियर-पवर-पहर-पडिपेल्लिएँ बलें मम्मीस देवि ।
हत्थ-पहत्थ-सत्तु सेणावइ थिय णल-णील बे वि ॥१॥

समावडिय सेण्णे । भय-च्छत्त-वण्णे ॥२॥
जयासा-वसुद्धे । विमाणेहिँ छूढे ॥३॥
चलच्चामरोहे । पढुक्कन्त-जोहे ॥४॥
कसुम्भिमण-सोहे । णहुप्पील-दीहे ॥५॥
महाहत्थि-सण्डे । समुद्दण्ड-सुण्डे ॥६॥
तुरङ्गोह-सोहे । घणे सम्मुणोहे ॥७॥
तहिं जुज्झमाणे । बले अप्पमाणे ॥८॥
कइन्दद्धएहिं । मिलन्तेहिँ तेहिं ॥९॥
दसासस्स सेण्णं । कयं वाण छण्णं ॥१०॥
ण सो छत्त-दण्डो । अछिण्णो अखण्डो ॥११॥
ण तं सत्तु-चिन्धं । रणे जण्ण विद्धं ॥१२॥
ण सो मत्त-हत्थी । वणो जस्स णत्थी ॥१३॥
ण तं हत्थि-गत्तं । खयं जण्ण पत्तं ॥१४॥

घत्ता

सो णत्थि भडु जो ढुक्कइ सवडम्मुहउ ।
सो रहु जें ण वि जो रणें ण किउ परम्मुहउ ॥१५॥

कोई धूर्त विलासिनीके स्तनोंसे जा लगा हो। कोई आकाशमें ही अपने विमानोंसे कूद कर शत्रुओंके सिर काट लेता। इस प्रकार उस भीषण युद्धमें रक्तकी नदीसे धूल शान्त हो गयी। वैसे ही जैसे दुष्ट सज्जन पुरुषसे शान्त हो जायँ। रावणकी सेनाने रामकी सेनाका मुख फेर दिया मानो तूफानी हवाओंने समुद्र जलकी दिशा बदल दी हो॥१-१०॥

[४] निशाचरोंके प्रबल आघातोंसे पीछे हटायी गयी अपनी सेनाको अभय वचन देकर रामपक्षके नल और नील आकर खड़े हो गये। हस्त और प्रहस्त सेनापति, क्रमशः उनके दो प्रतिद्वन्द्वी थे ? इतनेमें वहाँ अगनित सेना आ पहुँची उसके पास तरह-तरहके ध्वज और छत्र थे। जयश्री और अश्वोंसे आलिंगित वे दोनों रथमें बैठे हुए थे। चँवर चल रहे थे और योद्धा पहुँच रहे थे। शेर पंजोंके बल खड़े थे और नखोंसे अपना पृष्ठभाग हिला रहे थे। महागजोंका समूह था, जिसकी सूँड़ें उठी हुई थीं, जो अश्वोंके समूहसे शोभित था और जिसमें बहुत-से रथ थे। वे दोनों अपनी सेनामें पहुँचे। वानर ध्वजधारी वे दोनों लड़ने लगे। उन्होंने रावणकी सेनाको अपने बाणोंसे तितर-बितर कर दिया। उसमें एक भी छत्र ऐसा नहीं था जो कटा न हो या जिसके टुकड़े-टुकड़े न हुए हों। शत्रुका एक भी ऐसा चिह्न नहीं था जो युद्धमें साबित बचा हो, ऐसा एक भी मतवाला हाथी नहीं था कि जिसको घाव न लगा हो। ऐसा एक भी हाथी नहीं था कि जिसके शरीर पर भयंकर आघात न हो। एक भी योद्धा ऐसा नहीं था जो सम्मुख पहुँचनेका साहस करता। एक भी रथ ऐसा नहीं था जो कि युद्धमें पराङ्मुख न किया गया हो॥१-१४॥

[५]

वलेँ मम्भीस देवि रहु वाहिउ ताव दसाणणेणं ।
अहिणव-कज्जल-मसुल-पिण्डत्थण-परिचक्कुण मणेणं ॥१॥
[illegible] व पवरवाहँ सीहो व कुञ्जराहं ।
भिडइ ण भिडइ जाम्व णल-णील-णरवराहं ॥२॥
ताम्व विहीसणेण रहु दिण्णु अन्तराले ।
गलगज्जन्त ढुक्क मेह व्व वरिसयाले ॥३॥
भीसण विसहर व्व सद्दूल-वग्घ-चण्डा ।
ओरालन्त मत्त हत्थि व्व गिल्ल-गण्डा ॥४॥
वर-मइन्द-वीढ सीह व णिवद्ध-रोसा ।
अचल महीहर व्व जलहि व्व गहिर-घोसा ॥५॥
वेण्णि वि पवर-सन्दणा वे वि चाव-हत्था ।
वेण्णि वि रक्खस-भुआ समर-भर-समत्था ॥६॥
वेण्णि वि महिहर व्व ण कयावि चल-सहावा ।
वेण्णि वि सुद्ध-वंस वेण्णि वि महाणुभावा ॥७॥
वेण्णि वि धीर वीर विज्जु व्व वेय-चवला ।
वेण्णि वि बाल-कमल-सोमाल-चलण-जुयला ॥८॥
वेण्णि वि वियड-वच्छ थिर-थोर-बाहु-दण्डा ।
वेण्णि वि चम-जोवियासाहवे पचण्डा ॥९॥

घत्ता

तहिँ एक्कु पर पुज्जिउ दोसु दसाणणहोँ ।
जं जणय-सुअ खणु वि ण फिट्टइ णिय-मणहोँ ॥१०॥

[६]

अमरिस-कुद्धएण अमर-वरङ्गणा-जूरावणेणं ।
णिब्भच्छिउ विहीसणो पउम-भिडन्तेँ रावणेणं ॥१॥

[५] तब, अपनी सेनाको अभय वचन देकर रावणने अपना रथ आगे बढ़ाया। मानो उसका मन कर रहा था कि मैं अभिनव विजयलक्ष्मीके स्तनोंका मर्दन करूँ। वह इस प्रकार आगे बढ़ा जैसे आग पेड़ों पर, या सिंह हाथियों पर झपटता है। वह नरश्रेष्ठ नल और नीलसे भिड़ने ही वाला था कि विभीषणने दोनोंके बीचमें अपना रथ अड़ा दिया। वह इस प्रकार रावणके सम्मुख पहुँचा, जिस प्रकार वर्षाकालमें मेघ। दोनों ही सर्पकी भाँति भयंकर, सिंह और बाघकी भाँति प्रचण्ड थे। गरजते हुए मतवाले हाथीके समान उनके मस्तक आर्द्र थे। लम्बी पूँछके सिंहकी भाँति वे रोषसे भरे हुए थे। महीधर की तरह अडिग, और समुद्रकी भाँति उनकी आवाज गम्भीर थी। दोनोंके पास बड़े-बड़े रथ थे। दोनोंके हाथोंमें धनुष थे। दोनोंकी पताकाओं में राक्षस अंकित थे, दोनों ही युद्धका भार उठानेमें समर्थ थे। दोनों ही महीधरकी भाँति किसी भी तरह चलायमान नहीं थे। दोनों ही कुलीन और महानुभाव थे। दोनों धीर वीर थे और बिजलीकी भाँति वेगशील थे। दोनों ही के चरण कमल नव जलजातकी भाँति कोमल थे। दोनों ही के वक्ष विशाल थे। दोनोंके बाहुदण्ड विशाल और प्रचण्ड थे। दोनों ही जीवनकी आशा छुड़ा देने वाले और युद्धमें प्रचण्ड थे। उन दोनोंमें-से रावणमें केवल यही एक दोष था कि उसके मनसे सीतादेवी एक क्षणके लिए भी दूर नहीं होती थीं ॥१-१०॥

[६] देवांगनाओंको सतानेवाले रावणने क्रोधसे भरकर पहली ही भिड़न्तमें विभीषणको ललकारा, अरे क्षुद्र मूर्ख और

'अरेँ खल छुद्द पिसुण दुट्ठ कुल-फंसण । मइँ छड्डाविउ मुएँवि विहीसण ॥२॥
चक्कउ सामिसालु ओलग्गिउ । मत्त-गइन्दु मराउ पडिक्किउ ॥३॥
उद्धुय-पुच्छ-दण्डु णह-दीहरु । केसरि मुएँवि पसंसिउ मिगवरु ॥४॥
सव्वङ्गिउ चामियर-पसाहणु । मेरु मुएवि पसंसिउ पाहणु ॥५॥
तेय-रासि णहसिरि-आलिङ्गणु । भाणु मुएवि धरिउ ओहङ्गणु ॥६॥
जलयर-अलकल्लोल-भयङ्करु । जलहि मुएवि पसंसिउ सरवरु ॥७॥
णरउ धरेँवि सिव-सासउ वज्जिउ । जिणु परिहरेँवि कु-देवउ अच्चिउ ॥८॥
जासु ण केण वि णावइ णाउँ । सो पइँ गहिउ विहीसण राउँ ॥९॥

घत्ता

वइरिहिँ मिलेँवि जिह उग्गामिउ खग्गु मइँ ।
तिह आहयणेँ परिसर साहउ देहि महु' ॥१०॥

[७]

तं णिसुणेँवि सोण्डीर-वीर(?)-सन्तावणेणं ।
णिब्भच्छिउ दसाणणो कुइय-मणेण विहीसणेणं ॥१॥

'सच्चउ जेँ आसि तुहुँ देव-देव । एवहिँ लइभारउ कु-मुणि जेम ॥२॥
सच्चउ जि आसि तुहुँ णर-मइन्दु । एवहिँ सुण्णाणणु हरिण-विन्दु ॥३॥
सच्चउ जेँ आसि तुहुँ मेरु चण्डु । एवहिँ णिग्गुणु पाहाण-खण्डु ॥४॥
सच्चउ जि आसि रवि तेयवन्तु । एवहिँ ओहङ्गणु जिगिजिगन्तु ॥५॥
सच्चउ जि आसि जलणिहि पहाणु । एवहिँ थक्कहि गोप्पय-समाणु ॥६॥
सच्चउ जि आसि सरु सारविन्दु । एवहिँ पुणु सीय-तुसार-विन्दु ॥७॥

कुलकी फाँस, विभीषण तूने मुझे छोड़कर बहुत अच्छे स्वामीका पसन्द किया है, वह बेचारा भूमि निवासी और अकेला है। तुम एक पैने और लम्बे नखोंके सिंहको, कि जिसकी पूँछ पीछे उठी हुई है, छोड़कर, एक मामूली हिरनकी प्रशंसा कर रहे हो। सचमुच तुम सोनेके सुमेरु पर्वतको छोड़कर पत्थरको मान्यता दे रहे हो। तेजकी राशि और आकाश लक्ष्मीका आलिंगन करनेवाले सूर्यको छोड़ दिया है तुमने और ग्रहण किया है-जुगनूको। जलचरों और तरंगोंसे शोभित भीषण समुद्रकी जगह तुमने सरोवरको पसन्द किया है। तुम नरक स्वीकार कर, स्वयं ही शाश्वत शिवसे वंचित हो गये। तुमने जिन भगवान्‌को छोड़ दिया और खोटे देवकी पूजा की, जिसका कोई नाम तक नहीं जानता, विभीषण, तुम उसकी शरणमें गये। शत्रुसे मिलकर तूने जिस प्रकार, मेरा खम्भा उखाड़ लिया है, उसी प्रकार तू युद्धमें आगे बढ़। मैं भी उसी प्रकार अभी आघात देता हूँ ॥१–१०॥

[७] प्रचण्डतम वीरोंको सतानेवाले विभीषणने गुस्सेमें आकर रावणको जी भर फटकारा। उसने कहा—'सच है कि तुम देवताओंमें भी श्रेष्ठ थे, परन्तु इस समय, खोटे मुनिकी तरह तुच्छ हो। सच है कि तुम कभी एक श्रेष्ठ सिंह थे, परन्तु अब तुम एक दीन,हीन आनतमुख हिरन समूह हो। सच है कि किसी समय तुम एक प्रचण्ड मेरु पर्वत थे, परन्तु इस समय एक गुण हीन पहाड़ खण्ड हो। सच है कि किसी समय तेजस्वी सूर्य थे, परन्तु इस समय तुम एक टिमटिमाते जुगनू से अधिक महत्त्व नहीं रखते। एक समय था जब तुम एक प्रमुख समुद्र थे, परन्तु इस समय तो तुम गोखुरके बराबर हो। सच है किसी समय तुम एक श्रेष्ठ सरोवर थे, परन्तु इस समय

सच्चउ जि आसि तुहुँ गन्ध-हत्थि । एवहिँ तउ सरिसउ खरु वि णत्थि ॥८॥
गिरि-खम्भु खण्डिउ धारिउ जेण । किं कीरइ जीवन्तेण तेण ॥९॥

घत्ता

सच्चउ जँ मइँ तइउ खम्भु उप्पाडियउ ।
लइ एवहिँ मि केसहुँ जाहि अ-पाडियउ ॥१०॥

[८]

तं णिसुणेवि वयणु दहवयणें अमरिस-कुद्धएणं ।
मेल्लिउ भद्दयन्तु समरङ्गणें जय-जस-लुद्धएणं ॥१॥
मुणिवरिन्दो व्व सरु मोक्ख-पय-कङ्खुओ ।
तरु विसेसु व्व अइ-तिक्ख-पय-सञ्जुओ ॥२॥
कव्व-बन्धो व्व बहु-वण्ण-वण्णुज्जुओ ।
कुलवहू-चित्त-मग्गो व्व सुट्ठुज्जुओ ॥३॥
मुच्चमाणेण कह कह वि णउ छिण्णओ ।
तेण तस्स वि धओ णवर उच्छिण्णओ ॥४॥
रावणेण वि खणु समरें दोहाइयं ।
ताम तं इन्द-जुज्झं समोहाइयं ॥५॥
मिलिय मन्दोयरी-तणय-णारायणा ।
कुम्भयण्णाणिली राम-पञ्चाणणा ॥६॥
णील-सीहकडि-कुमुदिल्ल-चियकोअरा ।
केउ-भामण्डला काम-दिढरह वरा ॥७॥
कालि-सम्भुपहरा कुन्द-भिण्णञ्जणा ।
सम्भु-णल विग्घ-चन्दोयराणन्दणा ॥८॥
जम्बुमालिन्द धूमक्ख-कुन्दाहिवा ।
भासुरङ्गा मयङ्गय-महोयर णिवा ॥९॥

तो तुम्हारा अस्तित्व, जलकण या तुषारकणसे अधिक नहीं। सच है एक समय तुम गन्धगज थे, परन्तु इस समय तुम्हारे समान गधा भी नहीं है, जिसने पहाड़के समान अपना चरित्र खण्डित कर लिया, वह जीकर क्या करेगा ? यह सच है कि मैंने तुम्हारा खम्भा उखाड़ा है, लो अब देखता हूँ कि तुम बिना पड़े कहाँ जाते हो ॥१-१०॥

[५] यह सुनकर रावणको रोष आ गया। जय और यश के लोभी उसने अपना अर्धेन्दु तीर छोड़ा। वह तीर मुनिवरकी तरह मोक्षके लिये लालायित था, वृक्षविशेषकी तरह अत्यन्त तीखे पत्रसे युक्त था, काव्य-बन्धकी तरह, तरह-तरहके वर्णोंसे सहित था, कुलवधूके चित्तकी तरह अजेय था, परन्तु उस तीरने किसी तरह विभीषण को आहत भर नहीं किया। विभीषणने भी रावणके ध्वजको खण्डित कर दिया। तब उसने भी विभीषणके धनुषके दो टुकड़े कर दिये। तब उन्होंने एक दूसरेको द्वन्द्व युद्धके लिए सम्बोधित किया। फिर क्या था ? लक्ष्मण मन्दोदरीके पुत्रसे भिड़ गये। कुम्भकर्ण और हनुमान्, राम और मेघवाहन, नील और सिंह तट, दुद्धरिस और विकटोदर, केतु और भामण्डल, काम और दशरथ, कालि और चन्दनगृह, कन्द और भिन्नांजन, शम्भू और नल, विघ्न और चन्द्रोदर पुत्र, जम्बु और मालिन्द, धूम्राक्ष और कुन्दाधिप,

कुमुअ-महकाय सद्दूल-समप्पहया ।
रम्भ-विहि मालि-सुग्गीव अहिमहया ॥१०॥
तार-मारिच्च सारण-सुसेणाहिवा ।
सुअ-पचण्डालि सव्वङ्ग-दहिमुह णिवा ॥११॥

घत्ता

अण्णेक्कहु मि भुअणेक्केक्क-पहाणाहुँ ।
कें सक्कियउ गणण गणेप्पिणु राणाहुँ ॥१२॥

[९]

केण वि को वि वोच्छिओ 'मरु सवडम्मुहु थाहि थाहि' ।
केण वि को वि वुत्तु समरङ्गणें 'रहवरु वाहि वाहि' ॥१॥
केण वि को वि महा-सर-जालें । छाइउ जिह सु-कालु दुकालें ॥२॥
केण वि को वि भिण्णु वच्छ-त्थलें । पडिउ घुलेवि को वि महि-मण्डलें ॥३॥
केण वि कहों वि सरासणु ताडिउ । णं हेट्ठा-मुहु छिप्पउ पाडिउ ॥४॥
केण वि कहों वि कवउ णीवट्टिउ । थलि जिह दस-दिसेहिं आवट्टिउ ॥५॥
केण वि कहों वि महद्धउ पाडिउ । णं मउ माणु मडप्फरु साडिउ ॥६॥
केण वि दन्ति-दन्तु उप्पाडिउ । णावइ जसु अप्पणउ समाडिउ ॥७॥
केण वि झम्प दिण्ण रिउ-रहवरें । गरुडें जिह भुअङ्ग-भुवणन्तरें ॥८॥
केण वि कहों वि सीसु अप्फोडिउ । णं अवराह-रुक्ख-फलु तोडिउ ॥९॥

घत्ता

केण वि समरें दिण्णु णिवक्खहों हियउ थिरु ।
जीविउ अमहों पहरहों उरु सामियहों सिरु ॥१०॥

[१०]

केण वि कहों वि मुक्क पण्णत्ती पत्थर-पुञ्जणिज्जा ।
केण वि गुलगुलन्ति मायङ्गी केण वि सीह विज्जा ॥१॥

भासुर और अंग, मय, अंगद और महोदर, कुमुद, महाकाय, शार्दूल और यमघंट, रम्भ और विधि, मालि और सुग्रीव आपसमें एक दूसरेसे जाकर भिड़ गये। तार, मारीच, सारन और सुसेन सुत और प्रचण्डाली, संध्याक्ष और दधि-मुख भी आपसमें द्वन्द्वयुद्ध करने लगे। और भी दूसरे राजा जो विश्वमें एकसे एक प्रमुख थे, आपसमें भिड़ गये। इन सब राजाओंकी गिनती भला कौन कर सकता है ॥१-१२॥

[९] एकने दूसरेको ललकारा, "मर मर सम्मुख खड़ा हो।" किसीने किसीसे कहा, "युद्धमें अपना रथ हाँक।" किसीने किसीको अपने महान् तीरोंसे इस प्रकार ढक दिया, मानो दुष्कालने सुकालको ढक दिया हो।" किसीने किसीको वक्षस्थलमें आहत कर दिया। कोई आहत होकर धरती-मण्डल पर गिर पड़ा। किसीने किसीका धनुष तोड़ दिया, मानो वह स्वयं अधोमुख होकर गिर पड़ा हो।" किसीने किसीका कवच नष्ट कर दिया, और उसे बलिकी तरह दसों दिशाओंमें बखेर दिया। किसीने किसीका महाध्वज काट डाला मानो उसका मद, मान और अहंकार ही नष्ट कर दिया हो किसीने हाथीके दाँत उखाड़ लिये मानो अपना यश ही घुमा दिया हो। किसीने शत्रुके रथवरमें हलचल मचा दी, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार गरुण नागलोकमें हड़बड़ी मचा देता है। किसीने किसीका सिर इस प्रकार काट दिया, मानो अपराधरूपी वृक्षका फल तोड़ लिया हो किसीने युद्धमें शत्रुके हृदयको ढाढस बँधाते हुए कहा, "जीवन यमको, आघात वक्ष को और सिर स्वामीको अर्पित करूँगा ॥१-१०॥

[१०] किसीने नरवरोंसे पूजनीय प्रज्ञप्तिविद्या छोड़ी। किसीने गर्जन करती हुई मातंगी विद्या और किसीने सिंहविद्या।

केण वि मेल्लिउ अग्गेउ बाणु । केण वि वारुणु गलगज्जमाणु ॥२॥
केण वि वायउ खडखडखडन्तु । केण वि कुल-पव्वउ धुडुक्कन्तु ॥३॥
केण वि भय-भीसणु कुलिस-दण्डु । किउ महिहरत्थु सय-खण्ड-खण्डु ॥४॥
केण वि आसीविसु णाग-पासु । केण वि गारुडु पण्णय-विणासु ॥५॥
तहिँ तेहऍ रणेँ कमलेक्खणासु । इन्दइणाऽमेल्लिउ लक्खणासु ॥६॥
दुद्दरिसणु भीसणु रयणि-अत्थु । सोण्डीर-वीर-मोहण-समत्थु ॥७॥
कङ्काल-करालु तमाल-बहलु । णच्चन्त-पेय-वेयाल-मुहलु ॥८॥
लक्खणेण पमेल्लिउ दिणयरत्थु । णिसि-तिमिर-पडल-णासण-समत्थु ॥९॥

घत्ता

दहमुह-सुऍण णाग-पासु पुणु पेसियउ ।
सो वि लक्खणेण गारुड-विज्जऍ तासियउ ॥१०॥

[११]

विरहु करेवि धरिउ दहमुह-णन्दणु णारायणेण ।
तोयदवाहणो वि बलएवँ विप्फुरियाणणेण ॥१॥
एत्तहेँ वि हणुउ बहु-मच्छरेण । किउ आयामिज्जइ णिसियरेण ॥२॥
ताणन्तरेँ रामें सरहिँ छिण्णु । जिउ कह वि किलेसें कुम्भयण्णु ॥३॥
पेक्खन्तहोँ तहोँ रावण-बलासु । बन्धेँवि अप्पिउ भामण्डलासु ॥४॥
अवरो वि को वि जो भिडिउ जासु । परमप्पउ व्व सो सिद्धु तासु ॥५॥
एत्तहेँ वि राउ भय-भीसणेण । रावण-धणु छिण्णु बिहीसणेण ॥६॥
परिथलिऍ-चावेँ सिय-माणणेण । आमेल्लिउ सूलु दसाणणेण ॥७॥
सरवरेँहिँ तं पि अछिण्णु केम । वलि भुक्खिएहिँ भूएहिँ जेम ॥८॥
रोसिउ दहगीउ वि लइय सत्ति । णावइ दरिसावइ णियय सत्ति ॥९॥

घत्ता

दाहिणऍ करेँ रेहइ कइकसि-णन्दणहोँ ।
सम्पाइय (?) णाइँ मयच्छि जणद्दणहोँ ॥१०॥

किसीने आग्नेय बाण छोड़ा और किसीने गरजता हुआ वारुण बाण। किसीने थरहर करता हुआ वायव्य बाण, किसीने धू-धू करता कुलपर्वत, किसीने भयभीषण वज्रदण्ड फेंका। उसने महीधरके सौ टुकड़े कर दिये। किसीने आशीविष नागपाश फेंका। किसीने साँपोंका नाशक गरुड अस्त्र फेंका। उस भयंकर युद्धमें कमल नयन लक्ष्मण पर, इन्द्रजीतने दुर्दर्शनीय भीषण रजनी-शस्त्र छोड़ा, जो प्रचण्ड वीरोंका सम्मोहन करने में समर्थ, कंकालकी तरह भयंकर, अन्धकारसे परिपूर्ण और नाचते हुए प्रेतोंसे मुखर था। तब लक्ष्मणने रातके अन्धकार पटलको नाश करनेमें समर्थ दिनकर अस्त्र छोड़ दिया। रावणके पुत्रने नागपाश फिरसे फेंका, परन्तु लक्ष्मणने गारुड़ विद्यासे उसे नष्ट कर दिया ॥१-१०॥

[११] लक्ष्मणने रावण पुत्रको रथहीन बनाकर पकड़ लिया। उधर आरक्त मुख रामने मेघवाहनको पकड़ लिया। एक ओर निशाचर ईर्ष्यासे भर कर हनुमान्‌को व्यस्त किये हुए थे। इसी अन्तरालमें कुम्भकर्ण रामके तीरोंसे बुरी तरह छिन्न-भिन्न हो गया, गनीमत यही समझिए कि किसी प्रकार बच गया। उसके देखते-देखते रावणकी सेना बन्दी बनाकर भामण्डलको सौंप दी गयी। और भी दूसरे जो भी लोग जिस-से लड़े, वह उससे उसी प्रकार जीत गया, जिस प्रकार सिद्ध परमपदको जीत लेते हैं। इतनेमें भयभीषण विभीषणने रावण-के धनुषके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। धनुषके गिर जानेपर, श्रीके अभिमानी रावणने अपना शूल अस्त्र चला दिया। परन्तु विभीषणने अपने उत्तम तीरोंसे उसे भी उसी प्रकार बिखेर दिया, जिस प्रकार भूखे भूत बलिके अन्नको। तब क्रुद्ध होकर दशाननने अपने हाथमें शक्ति ले ली, मानो वह अपनी शक्तिका

[१२]

जा गअघड-मत्त-मायङ्ग-कुम्भ-णिद्दलण-लीला ।
दुद्धर-णरवरिन्द-दप्पुद्ध-विन्द-विद्दवण-कीला ॥१॥

जा भड-रिउ-णारि-रोवावणिय । रह-तुरय-थट्ट-लोट्टावणिय ॥२॥
जा विज्जु जेम्व भीसावणिय । जम-कोव-पन्थ-दरिसावणिय ॥३॥
जा दिण्णी सासि-तव-चरणें । धरणेन्दें कइलासुद्धरणें ॥४॥
सा सत्ति सत्तु-सन्तासणहों । किर मुअइ ण मुअइ बिहीसणहों ॥५॥
तावहिं खर-दूसण-मद्दणेण । रहु अन्तरें दिण्णु जणद्दणेण ॥६॥
'अरें खल जीवन्तु ण जाहि महु । अइ सत्ति सत्ति तो मेल्लि लहु' ॥७॥
तं णिसुणेंवि रयणासव-सुएँण । आमेल्लिय गज्जोल्लिय-भुएँण ॥८॥
विप्फुरन्तहुँ मल-णीकम्पहुँ । [illegible] ॥९॥

घत्ता

सो लक्खणहों पडिय उर-त्थलें सत्ति किह ।
दिट्ठि रावणहों रामहों दुक्खुप्पत्ति जिह ॥१०॥

[१३]

जं पाडिउ कुमारु महिमण्डलें तं धीसरिय-णामु ।
जिह कुअरें मइन्दु तिह समरें सरहसु भिडिउ रामु ॥१॥

रामण-राम-जुज्झु अब्भिट्टउ । सरहसु णिब्भर-पुलय-विसट्टउ ॥२॥
अच्छर-जण-मण-णयणाणन्दहुँ । अप्फालिय-सुर-दुन्दुहि-सद्दहुँ ॥३॥
सन्धिय-सर-धविय-सिक्कारहुँ । वारवार-जिण-णामुच्चारहुँ ॥४॥

परिचय देना चाह रहा हो। वह शक्ति कैकशीके पुत्र रावणके दाहिने हाथमें ऐसी शोभा पा रही थी मानो लक्ष्मणका भविष्य ही हो ॥१-९॥

[१२] वह शक्ति, जो गरजते हुए मत्त गजोंके मस्तक फाड़ सकती थी, और जो दुर्द्धर राजाओं, निशाचर राजाओंका दमन कर सकती थी, जो शत्रुओंकी पत्नियोंको रुला सकती थी, जो रथों और गजोंके समूहको लोट-पोट कर सकती थी, जो बिजलीकी तरह भयंकर थी और लोगोंको यमपथ दिखा सकती थी। जो बालिके तपश्चरणके समय कैलासके उठाने पर रावणको मिली थी। वह शक्ति रावण शत्रुसन्तापक विभीषण पर छोड़ने जा ही रहा था कि लक्ष्मणने अपना रथ, उन दोनोंके बीच, लाकर खड़ा कर दिया। उसने कहा, "अरे दुष्ट, तू मुझसे जीते जी नहीं जा सकता, यदि तुझमें ताकत हो, तो अपनी शक्ति मुझ पर मार" यह सुनकर रत्नाश्रवका बेटा रावण गद्‌गद हो गया, और अपने पुलकित बाहुसे शक्ति छोड़ दी। उस शक्तिने नील, नल और दूसरे सभी वानर वंशियोंको आहत कर दिया। वही शक्ति लक्ष्मणके वक्षस्थल पर जा लगी, मानो वह रावणका भाग्य थी, और रामके लिए दुःखकी खान ॥१-१०॥

[१३] जब कुमार इस प्रकार गिर पड़ा, तो उसकी खबर कानों कान पहुँची। जैसे सिंह जंगलमें, गजसे भिड़ता है, उसी प्रकार राम युद्धमें संलग्न हो गये। इस प्रकार राम और रावणका युद्ध होने लगा। अत्यन्त हर्ष और रोमांचसे भरा हुआ। अप्सराओंके नेत्रोंको आनन्द देने वाले देवताओंकी दुन्दुभिकी ध्वनिको भी मात देने वाले उन दोनोंमें द्वन्द्व युद्ध होने लगा। बार-बार दोनों सन्धान और स्वरों (सर) के बन्धानसे अपने-आपको सजा रहे थे। बार-बार जिन भगवान्

बाणासणि-सञ्छाइय-गयणहुँ पहरें पहरें पप्फुल्लिय-वयणहुँ ॥५॥
तो एत्थन्तरें गय-सय-थामें । जिह विउ णिड्डु उ-द्वारउ वाहि ॥६॥
पहिलउ रहवरु रासह-वाहणु । बीयउ सरहसु सरह-पवाहणु ॥७॥
तइयउ तुङ्ग-तुरङ्गम-चञ्चलु । चउथउ घोरोरालिय-मयगलु ॥८॥
पञ्चमु वर-सद्दूल-णिउत्तउ । छट्ठउ केसरि-सय-सञ्जुत्तउ ॥९॥

घत्ता

किङ्किणि-मुहल चल-वाहण धुय-धवल-धय ।
दुप्पुत्त जिह छ वि रहवर णिप्फल गय (?) ॥१०॥

[६४]

रह छह छह धणूणि छ छत्तइँ वि छिण्णइँ हलहरेण ।
तो वि ण दिण्ण पुट्ठि विज्जाहर-पुर-परमेसरेण ॥१॥
बेण्णि वि अवरोप्परु सामरिस । बेण्णि वि पउरुसें साहसें सरिस ॥२॥
बेण्णि वि सुर-समर-सएहिँ थिर । बेण्णि वि जिण-णामें णमिय-सिर ॥३॥
बेण्णि वि पहु कइ-णिसियर-धयहुँ । जिह दिस-गय सेस-महग्गयहुँ ॥४॥
जिणइ ण जिव्वइ एक्को वि जणु । गउ ताम दिवायरु अत्थवणु ॥५॥
विणिवारिउ रावणु राहवेंण । 'अन्धारएँ काइँ महाहवेंण ॥६॥
ण वि तुहुँ महुँ ण वि हउँ तुज्झु अरि । लइ णिय-णिय-णिलयहुँ जाहुँ वरि' ॥७॥
तें वयणें रणु उवसङ्करेंवि । गउ लङ्काहिउ कलयलु करेंवि ॥८॥
सीरायहो वि परियलु तहिँ । सत्तिएँ णिब्भिण्णु कुमारु जहिँ ॥९॥

घत्ता

तं णिएँवि बलु सुरकरि-कर पवरब्भुएँहिँ ॥
णिवडिउ महिहिं सिरु पहणन्तु सएहं भुएँहिँ ॥१०॥

●

का नाम ले रहे थे। तीरोंकी बौछारसे आसमान भर गया। पहर-पहरमें मुखकमल खिले हुए दिखते थे। इसी अन्तरमें अनेक स्थानोंका भ्रमण करने वाले रामने शत्रुको छह बार रथ-हीन बना दिया। पहला रथ था, जिसमें गधा जुता हुआ था, दूसरे रथमें हर्षोन्मद अष्टापद था। तीसरा रथ ऊँचे अश्वसे चंचल दिखाई दे रहा था, चौथा भयंकर गर्जना करने वाले हाथियोंसे युक्त था। पाँचवें रथमें उत्तम सिंह जुते हुए थे, और छठेमें सैकड़ों सिंह थे। नूपुरोंसे मुखर, वाहनोंसे चंचल उस निशाचर सेनामें अडिग सफेद पताकाएँ थीं। परन्तु रामने खोटे पुत्रकी भाँति छहों रथवरोंको व्यर्थ सिद्ध कर दिया॥१-१०॥

[१४] इस प्रकार रामने छः रथ, छः धनुष और छः छत्र मिट्टीमें मिला दिये। परन्तु विद्याधरोंके राजा रावणने तब भी पीठ नहीं दिखायी। दोनों एक-दूसरेके प्रति ईर्ष्यासे भरे थे, दोनों ही पौरुष और साहसमें समान थे। दोनों सैकड़ों युद्धोंमें अडिग रह चुके थे। दोनों ही जिननामको नमस्कार करते थे। दोनों ही वानरों और निशाचरोंकी सेनाके स्वामी थे, और दिग्गजोंकी भाँति दूसरे महागजोंके स्वामी थे। वे न एक दूसरे को जीत पा रहे थे और न स्वयं ही जीते जा रहे थे। इसी बीच सूर्यास्त हो गया। तब रामने रावणको मना किया कि अन्धकारमें महायुद्ध कैसे सम्भव होगा? न तो तुम, न मैं, कोई भी दिखाई नहीं देगा। इसलिए योद्धा अपने-अपने घर-को जाँय। यह सुनकर लंका नरेशने युद्ध बन्द कर दिया और कोलाहलके साथ अपने ठिकाने चला गया। श्रीराम उस स्थान पर पहुँचे जहाँ शक्तिसे आहत लक्ष्मण धराशायी थे। लक्ष्मण-को देखकर, गजशुण्डके समान बड़ी-बड़ी बाहुओंवाले, अपने हाथोंसे वे अपना सिर पीट रहे थे॥१-१०॥

●

[६७. सत्तसट्ठिमो संधि]

लक्खणेँ सत्तिएँ विणिभिण्णएँ लङ्क पइट्ठएँ दहवयणेँ ।
णिय-सेण्णहोँ मुहइँ णियन्तउ कन्दइ स-दुक्खउ रामु रणेँ ॥

[१]

भिण्णु कुमारु दसाणण-सत्तिएँ । पर-बन्धु व गमयत्तण-सत्तिएँ ॥१॥
कुकइ व सुकइ-कब्व-सम्भासिएँ । कुपुरिस-कण्णो इव पर-सत्तिएँ ॥२॥
सुअणो इव खल-वयण-पउत्तिएँ । पर-समउ व्व जिणागम-जुत्तिएँ ॥३॥
जिण-मग्गो इव केवल-भुत्तिएँ । विसयासत्तु मुणि व्व ति-गुत्तिएँ ॥४॥
सद्दो इव सब्भाएँ विहत्तिएँ । छन्दो इव मणहर-गायत्तिएँ ॥५॥
सेलु व वज्जासणिएँ पडन्तिएँ । विञ्झो इव रेवाएँ वहन्तिएँ ॥६॥
मेहो इव विज्जुलएँ फुरन्तिएँ । जलणिहि व्व गङ्गाएँ मिलन्तिएँ ॥७॥
ताम समर-दंसणु अलहन्तिएँ । णाइँ दिवसु ओसारिउ रत्तिएँ ॥८॥

घत्ता

दहमुह-सिरछेउ ण दिट्ठउ रहुवइ-णन्दणेँ विजउ ण वि ।
सोमित्ति-सोय-सन्तत्तउ णं अत्थवणहोँ ढुक्कु रवि ॥९॥

[२]

दिणयरेँ णह-कुसुमेँ व्व गलीणएँ । थिएँ णिसि-वहरिएँ व्व ओतिण्णएँ ॥१॥
सञ्झा रत्तलसि(?)व्व अलीणएँ । तमेँ मसि-सञ्चएँ व्व विक्खिण्णएँ ॥२॥
कत्थुव(?)सयणेँ व सोआउण्णएँ । चक्क-जुवलेँ मिहुणेँ व्व परुण्णएँ ॥३॥
गएँ रावणेँ रण-रहसुक्किण्णएँ । किय-कलयलेँ जय-तूर-पदिण्णएँ ॥४॥

सड़सठवीं सन्धि

लक्ष्मणके शक्तिसे आहत होनेपर, रावणने लंकामें प्रवेश किया। इधर राम अपने भाईका मुख देखकर, फूट-फूट कर रोने लगे। रावणकी शक्तिसे लक्ष्मण उसी प्रकार आहत हो गया, जिस प्रकार अध्ययनकी क्षमता द्वारा, दूसरेके द्वारा रचित ग्रन्थ समझमें आ जाता है, जैसे दुष्टकी वचनोक्तियोंसे सज्जन आहत हो उठता है, जैसे जिनशास्त्रकी उक्तियोंसे दूसरे-के सिद्धान्त ग्रन्थ खण्डित हो जाते हैं, जिस प्रकार तीन गुप्तियोंसे विषयासक्त मुनि वशमें कर लिये जाते हैं, जैसे सभी विभक्तियाँ शब्दको अपने प्रभावमें ले लेती हैं, जैसे सुन्दर गायत्री छन्द छन्दोंको अपने प्रभावमें रखता है, जैसे वज्रके गिरनेसे पहाड़ टूट जाता है, जैसे बहती हुई रेवा विन्ध्याचल-को लाँघ जाती है, जैसे बिजली मेघोंमें चमक उठती है और जैसे गंगा नदी समुद्रमें जा मिलती है उसी प्रकार मानो युद्ध-दर्शनसे वंचित दिनको रातने हटा दिया। न उसने रावणका कटा हुआ सिर देखा, और न रघुनन्दनकी विजय ही। लक्ष्मणके वियोगसे दुःखी सूर्य धीरे-धीरे अस्त होने लगा ॥१-६॥

[२] जब आकाशके कुसुमके समान सूर्यका अस्त हो गया और जब रातरूपी दुष्टाने बेचारे दिनका अतिक्रमण कर दिया, तो सन्ध्यारूपी निशाचरी, सब ओर फैल गयी। अन्धकार स्याहीके समूहके साथ बिखर गया। कंचुकी और स्वजन शोकाकुल हो उठे। चक्रवाक पक्षियोंका जोड़ा रो रहा था। युद्धोत्साहसे रोमांचित रावणके चले जाने पर कोलाहल होने

णिसियर-जणवएँ दिट्ठि-सम्पण्णएँ । घरेँ घरेँ पुणु सोहलएँ रवण्णएँ ॥५॥
लक्खणेँ सत्तिएँ हएँ पडिवण्णएँ । थिएँ णिच्चेयणेँ धरणि-पवण्णएँ ॥६॥
अक्खिउल-कज्जल-कुवलय-वण्णएँ । सुह-लक्खणेँ गुण-गण-सम्पण्णएँ ॥७॥
कइधय-साहणेँ चिन्तावण्णएँ । हरिण-उले व्व सुट्ठु आदण्णएँ ॥८॥

घत्ता

सोमित्ति-सोय-परिणामेँण रहुवइ-णन्दणु मुच्छियउ ।
जल-चन्दण-चमरुक्खेवें हिँ दुक्खु दुक्खु उम्मुच्छियउ ॥९॥

[२]

‘हा लक्खण कुमार एक्कोअर । हा अद्दिय उविन्द दामोअर ॥१॥
हा माहव महुमह महुसूअण । हा हरि कण्ह विण्हु णारायण ॥२॥
हा केसव अणन्त लच्छीहर । हा गोविन्द जणद्दण महिहर ॥३॥
हा गम्भीर-महाणइ-रुम्भण । हा सीहोयर-दप्प-णिसुम्भण ॥४॥
हा हा वज्जयण्ण-अब्भीसण । हा कल्लाणमाल-आसासण ॥५॥
हा हा रुद्दभुत्ति-विणिवारण । हा हा वालिखिल्ल-साहारण ॥६॥
हा हा कविल-मरट्ट-विमद्दण । हा वणमाला-णयणाणन्दण ॥७॥
हा अरिदमण-मडप्फर-भञ्जण । हा जियपोम-सोम-मणरञ्जण ॥८॥
हा महरिसि-उवसग्ग-विणासण । हा आरण्ण-हत्थि-सन्तावण ॥९॥
हा करवाल-रयण-उद्दालण । सम्बुकुमार विणास-णिहालण ॥१०॥

लगा। विजयके नगाड़े बज उठे। निशाचरोंकी बस्तियाँ भाग्यसे परिपूर्ण थीं। घर-घरमें सोहर गीत गाये जाने लगे। परन्तु लक्ष्मणके शक्तिसे आहत होनेसे वह धरतीपर अचेत होकर गिर पड़ा। वानर-सेना एकदम व्याकुल हो उठी। शुभ लक्षणों-से युक्त वह अपने गुणगणोंसे परिपूर्ण थी। भ्रमर कज्जल और कुवलयके अनुरूप थी। वह हिरन कुलकी तरह अत्यन्त दुःखी थी। लक्ष्मणके शोककी मात्रासे राम मूर्छित हो गये। जल, चन्दन और चमरकी हवासे किसी प्रकार, कठिनाईसे उनकी मूर्छा दूर हुई ॥१-२॥

[३] बलभद्र राम विलाप कर रहे थे, "हे लक्ष्मण कुमार और भाई, हे मधु, उपेन्द्र, दामोदर, हे माधव कृष्ण मधुसूदन, हरि कृष्ण विष्णु नारायण, केशव अनन्त लक्ष्मीधर, हे गोविन्द जनार्दन महीधर, हे गम्भीर नदीको रोकनेवाले, हे सिंहोदर-के घमण्डको चूर-चूर करनेवाले, हे लक्ष्मण, तुम कहाँ हो? तुमने वज्रकर्णको अभय वचन दिया था। तुम कल्याणमालाके आश्वासन हो, तुमने रुद्रभुक्तिका निवारण किया था। तुमने बालिखिल्यको सहारा दिया था। तुमने कपिलका मानमर्दन किया था। तुम वनमालाके नेत्रोंके लिये आनन्ददायक हो। तुमने अरिदमनके मानको भग्न किया था। तुम जितपद्मा और शोभाके लिए आनन्ददायक थे। अरे तुमने महाऋषिके उपसर्ग-का विनाश किया था, और जंगली हाथीको सतानेवाले हो, अपने तलवार रूपी रत्न का तुम्हींने उद्धार किया था। शम्बु-कुमारके विनाशको तुमने अपनी आँखोंसे देखा है। अरे तुमने खरदूषणके घमड़ेको खूब रगड़ा है। तुमने सुग्रीवके मनोरथको पूरा किया है। अरे तुमने कोटिशिला उठायी थी। और तुमने समुद्रावर्त धनुष अपने हाथसे चढ़ा दिया था। विलाप करते

हा खर-दूसण-चमु-मुसुमूरण । हा सुग्गीव-मणोहर-पूरण ॥११॥
हा हा कोडिसिला-सञ्चालण । हा मयरहरावत्तप्फालण ॥१२॥

घत्ता

कहिँ तुहुँ कहिँ हउँ कहिँ पियपम कहिँ जणेरि कहिँ जणणु गउ ।
हय-विहि विच्छोउ करेप्पिणु कवण मणोरह पुण्ण तउ' ॥१३॥

[४]

हरि-गुण सम्भरन्तु पिहाणउ । रुवइ स-दुक्खउ राहव-राणउ ॥१॥
'वरि पहरिउ पर-णरवर-चक्कएँ । वरि खय-कालु ढुक्कु अत्थक्कएँ ॥२॥
वरि तं कालकूडु विसु भक्खिउ । वरि जम-सासणु णयणकडक्खिउ ॥३॥
वरि असि-पञ्जरेँ थिउ थोवन्तरु । वरि सेविउ कयन्त-दन्तन्तरु ॥४॥
झम्प दिण्ण वरि जलणेँ जलन्तएँ । वरि वडवामुहेँ भमिउ भमन्तएँ ॥५॥
वरि वज्जासणि सिरेँण पडिच्छिय । वरि ढुक्कन्ति भवित्ति समिच्छिय ॥६॥
वरि विसहिउ जम-महिस-खुरुक्खिउ । भीसण-कालदिट्ठि-अहि-डङ्किउ ॥७॥
वरि विसहिउ केसरि-णह-पञ्जरु । वरि जोइउ कलि-कालु सणिच्छरु ॥८॥

घत्ता

वरि दन्ति-दन्त-मुसलग्गेँहिँ भिण्णिभिन्दाविउ अप्पणउ ।
वरि णरय-दुक्खु आयामिउ णउ विओउ भाइहेँ तणउ' ॥९॥

[५]

पकन्दन्तेँ राहवचन्देँ । मुक्क धाह सुग्गीव-णरिन्देँ ॥१॥
मुक्क धाह भामण्डल-राएँ । मुक्क धाह पवणञ्जय-जाएँ ॥२॥
मुक्क धाह मन्दोयरि-पुत्तेँ । अण्णु विहीसणेण दुक्खत्तेँ ॥३॥
मुक्क धाह अङ्गङ्गय-वीरेँहिँ । तार-सुसेणहिँ रणउहेँ धीरेँहिँ ॥४॥
मुक्क धाह गय-गवय-गवक्खेँहिँ । णन्दण-दुरियविग्घ-वेलक्खेँहिँ ॥५॥

हुए राम कहने लगे, "प्रिय यमले, तुम्हारा और हमारा क्या कुछ नहीं किया। कहाँ तो माता गयी और नहीं मालूम पिता जी कहाँ गये। हे हतभाग्य विधाता, तुम्हीं बताओ इस प्रकार हम भाइयोंका विछोह कराकर, तुम्हें क्या मिला? तुम्हारी कौन-सी कामना पूरी हो गयी" ॥१-१२॥

[४] खिन्न राजा राम लक्ष्मणके गुणोंकी याद कर रोने लगे। वह कह रहे थे, "शत्रुराजाके चक्रसे आहत हो जाना अच्छा? अच्छा हो शीघ्र ही क्षयकाल आ जाय! अच्छा हो मैं कालकूट विषका पान कर लूँ, अच्छा है कि मैं यमके शासनको अपनी आँखोंसे देख लूँ। अच्छा है थोड़ी देरके लिए मैं अस्थिपञ्जरमें सो लूँ। अच्छा है यमकी दाढ़के भीतर सो जाऊँ, अच्छा है, कोई जलती हुई आगमें धक्का दे दे। अच्छा है घूमते हुए बड़वानलमें पड़ जाऊँ! अच्छा है मेरे सिर पर वज्र गिर पड़े, अच्छा है मन चाही होनहार मेरा काम तमाम कर दे, अच्छा है यममहिषके असह्य चपेटमें आ जाऊँ, अच्छा है भीषण दृष्टिवाला महाकाल रूपी साँप मुझे डस ले। अच्छा है सिंह अपने नखोंसे मुझे आहत कर दे, अच्छा है कलिकालरूपी शनीचरकी नजर मुझ पर पड़ जाय! अच्छा हो मैं खुदको हाथी दाँतोंकी नोंकोंसे टुकड़े-टुकड़े कर डालूँ। अच्छा हो मुझे नरकके दुःख देखने पड़ें, परन्तु भाईका वियोग न हो" ॥१-९॥

[५] राघवचन्द्रके इस प्रकार विलाप करने पर राजा सुग्रीव भी फूट-फूट कर रो उठा। राजा भामण्डल भी मुक्त-कण्ठसे रोया और हनुमान् भी। चन्द्रोदरपुत्र भी मुक्त स्वरसे रोया और व्याकुल विभीषण भी रोया। अंग और अंगद भी मुक्त कण्ठसे रोये, और युद्धमें धीर तार सुसेन भी रोये। गय, गवय और गवाक्ष भी मुक्त कण्ठसे रोये 'और नन्दन, दुर्विव-

मुक्क धाह णल-णील-णरिन्देँहिँ । जम्बव-रम्भ-कुमुय-कुन्देन्देँहिँ ॥६॥
मुक्क धाह माहिन्द-महिन्देँहिँ । दहिमुह-दढरह-सेव-समुद्देँहिँ ॥७॥
भिउमइ-महसायर-मइकन्तेँहिँ । मुक्क धाह सव्वेँहिँ सामन्तेँहिँ ॥८॥

घत्ता

रणेँ रामेँ कलुणु रुअन्तऍण सन्दीविउ सव्वाव-हवि ।
सो णत्थि कइद्धय-साहणेँ जेण ण मुक्की धाह णवि ॥९॥

[६]

दुक्खाउर ताम्व हलेइहुँ । सुन्दर-[illegible]-[illegible]हुँ ॥१॥
दाणेँ महाहवणेँहिँ परिछेइहुँ । केण वि कहिउ ताम्व वइदेहिहेँ ॥२॥
उर-णियम्ब-गरुअहेँ किस-देहिहेँ । रामचन्द-मुह-दंसण-पेहिहेँ ॥३॥
'सीऍ सीऍ लइ अच्छहु काइं । सीऍ सीऍ लइ आहरणाइं ॥४॥
सीऍ सीऍ अञ्जहि णयणाइं । सीऍ सीऍ चउ पिय-वयणाइं ॥५॥
सीऍ सीऍ करेँ वक्खाणउ । वलु लोहाविउ सुग्गीवाणउ ॥६॥
कइ दप्पणु जोवहि अप्पाणउ । मुहु परिचुम्बहि दहवयणाणउ ॥७॥

घत्ता

रावण-सत्तिऍ विणिभिण्णउ वुक्कइ जिअइ कुमारु रणेँ ।
परिहव-अहिमाण विहूणउ कइ रामु वि मुअउ जेँ गणेँ' ॥८॥

[७]

तं णिसुणेँवि वइदेहि पमुच्छिय । हरियन्दणेँण सित्त उम्मुच्छिय ॥१॥
चेयण लहेँवि रुवन्ति समुट्ठिय । 'हा खल खुद्द पिसुण विहि दुट्ठिय ॥२॥
लक्खणु मरइ दसाणणु छुट्टइ । हियउ केम सउ खण्डु ण फुट्टइ ॥३॥
छिण्ण-सीस हा दइव दुहावह । कवण तुज्झ किर पुण्ण मणोरह ॥४॥
हा कयन्त तउ कवण सुहच्छी । जं रणउत्तणु पाविय लच्छी ॥५॥

विघ्न एवं वैलाश भी रोये। नल और नील राजा मुक्त कण्ठ रोये, एवं जम्बु, रम्भ, कुमुद, कुन्द और इन्दु भी रोये। माहेन्द्र और महेन्द्र भी रोये और दधिमुख, दृढरथ, सेतु और समुद्र भी रोये। पृथुमति, मतिसागर और मतिकान्त आदि सामन्त भी मुक्त कण्ठसे रोये। युद्धमें रामके रोदनसे सन्तापकी ज्वाला भड़क उठी। वानरकी सेनामें एक भी ऐसा सैनिक नहीं था कि जो मुक्त कण्ठसे न रोया हो ॥१-५॥

[६] दुर्दम दानवों की सेनाका संहार करनेवाले रामकी इस अवस्थाका समाचार, किसीने मानसम्मानसे शून्य अभागिनी सीता देवीको बता दिया। उनके नितम्ब और उर भारी थे, परन्तु शरीर दुबला-पतला था। रामको देखनेकी तीव्र उत्कण्ठा उनके मनमें थी। एकने कहा, "सीतादेवी लो बैठी क्या हो, सीता, लो ये गहने। सीता सीता आँज लो अपनी आँखें। सीता सीता बोलो मीठे वचन। सीता सीता हर्षबधावा करो। सुग्रीवकी सेना हार कर वापस हो गयी। लो यह दर्पण और देखो इसमें अपना चेहरा। और फिर दशवदनका मुख चूम लो। रावणकी शक्तिसे आहत होकर कुमार लक्ष्मण, शायद ही अब जीवित रह सकें। और सम्भवतः पराभवके अपमानसे दुःखी होकर राम भी प्राणोंको तिलाञ्जलि दे दें ॥१-८॥

[७] यह सुनकर, सीता देवी मूर्छित होकर गिर पड़ी। हरिचन्दनके छिड़कनेपर उनकी मूर्छा दूर हुई। चेतना आते ही, वह रोती हुई उठीं—हे दुष्ट खल और अभागे भाग्य, लक्ष्मणका अन्त हो गया और रावण जीवित है, तुम्हारा हृदय क्यों नहीं टूट-फूट जाता? अभाग्यशील छिन्नमस्तक दैव, इसमें तुम्हारा कौन-सा मनोरथ पूरा होगा? हे कृतान्त तुम्हारी इसमें कौन-सी शोभा है कि एक लक्ष्मी वैधव्यको प्राप्त करेगी।

हा लक्खण पेसणहों णिउत्ती । कहों उब्भिय जय-सिरि कुल-उत्ति ॥६॥
हा लक्खण पइँ विणु महि सुण्णी । धाह मुएवि सरासइ रुण्णी ॥७॥
हा लक्खण कलुएँ पवराहउ । कहों एक्कल्लउ मेल्लिउ राहउ ॥८॥

घत्ता

णिय-बन्धव-सयण-विहूणिय दुह-भायण परिचत्त-सिय ।
महँ जेही दुक्खहँ भायण तिहुअणेँ का वि म होज्ज तिय' ॥९॥

[८]

तहिँ अवसरेँ सुर-मिग-सन्तावणु । णिय-सामन्त गवेसइ रावणु ॥१॥
को मुउ को जीवइ को पडियउ । को सङ्गामेँ कासु अब्भिडियउ ॥२॥
को मायङ्ग-दन्त-णिभिण्णउ । को करवाल-पहर-परिछिण्णउ ॥३॥
को णाराय-घाय-जज्जरियउ । को कणिणय-सुरुप्प-कप्परियउ ॥४॥
केण वि वुत्तु 'भडारा रावण । पवण-कुबेर-वरुण-जूरावण ॥५॥
अज्ज वि कुम्भयण्णु णाउ आवइ । तोयदवाहणु सो वि चिरावइ ॥६॥
वत्त ण सुम्मइ इन्दइ-रायहों । सीहणियम्बहों णउ महकायहों ॥७॥
जम्बुमालि जमघण्टु ण दीसइ । एक्कु वि णाहिँ सेण्णेँ किं सीसइ ॥८॥

घत्ता

कइ जेहिँ-जेहिँ वग्गन्तउ ते ते विणिवाइय समरेँ ।
थिउ एवहिँ सुहिय-वक्खउ जं जाणहि तं देव करेँ' ॥९॥

[९]

तं णिसुणेवि दसाणणु हल्लिउ । णं वच्छ-त्थलेँ सूलेँ सल्लिउ ॥१॥
थिउ हेट्ठामुहु रावण-राणउ । हिम-हउ सयवत्तु व विद्दाणउ ॥२॥
रुवइ स-दुक्खउ गग्गर-वयणउ । वाह-झरन्त-णिरन्तर-णयणउ ॥३॥

हे लक्ष्मण, तुम कृतान्तके यहाँ नियुक्त हो गये। कुलपुत्री जय-श्री को तुमने कैसे छोड़ दिया। हे लक्ष्मण, तुम्हारे बिना यह धरती सूनी है। सीता दहाड़ मार कर रोने लगी। हे लक्ष्मण, कल जो एक महान् राजा थे, उन राघवको आज कैसे अकेला छोड़ दिया ? अपने भाई और स्वजनोंसे दूर, दुःखोंकी पात्र सब प्रकारकी शोभा-श्रीसे शून्य मुझ-जैसी दुःखोंकी भाजन इस संसारमें कोई भी स्त्री न हो। ॥१-९॥

[८] ठीक इसी अवसर पर देवताओंको सतानेवाला रावण अपने सामन्तोंकी खोज कर रहा था कि देखूँ कौन मरा है और कौन जीवित है ? संग्राममें किसकी भिड़न्त किससे हुई। मतवाले हाथियोंके दाँतोंसे कौन विदीर्ण हुआ और कौन तलवारके प्रहारसे आहत हुआ ? कौन तीरोंके आघातसे जर्जर हुआ और कौन कर्णिका और खुरपेसे काटा गया ? इतने में किसी एकने कहा, "आदरणीय रावण, सचमुच आप पवन, कुबेर और वरुणको सतानेवाले हैं ? कुम्भकर्ण आज तक वापस नहीं आया है, और मेघवाहन भी आनेमें देर कर रहा है। इन्द्रजीतके बारेमें भी कोई बात सुनाई नहीं दे रही है ? और न ही महाकाय सिंहनितम्बके बारेमें ? जम्बूमाली और यमघण्ट भी नहीं दिखाई देते। क्या बतायें सेनामें एक भी आदमी दिखाई नहीं देता। जो-जो युद्धमें भिड़ने गये थे वे सब काम आ चुके हैं, अब हमारा पक्ष नष्टप्राय है। आप जैसा ठीक समझें कृपया वैसा करें ॥१-९॥

[९] यह सुनकर रावण इस प्रकार काँप उठा मानो उसके वक्षमें शूल लग गया हो। राजा रावण अपना मुख नीचा करके रह गया। मानो हिमाहत शतदल हो ? गद्गद स्वरमें व्याकुल होकर वह रोने लगा, उसकी आँखोंसे आँसुओंकी

'हा हा कुम्भयण्ण एक्कोअर । हा हा मय मारिच सहोयर ॥४॥
हा इन्दइ हा तोयदवाहण । हा जमहण्ट अणिट्ठिय-साहण ॥५॥
हा केसरिणियम्ब दणु-दारण । जम्बुमालि हा सुअ हा सारण' ॥६॥
दुक्खु दुक्खु पुणु मणु णिवारिउ । सोय-समुद्दहों अप्पउ तारिउ ॥७॥
'तिक्खण-णहहों छुडु-पइट्ठहों । किर केत्तिय सहाय वणें सीहहों ॥८॥

घत्ता

अच्छउ अण्णउ जो अब्भहिउ तो वि ण अप्पमि जणय-सुअ ।
किह मुक्कमि हउँ एक्कलउ जासु सहेज्जा वीस भुअ ॥९॥

[१०]

जो तहिँ सारु कइद्धय-साहणें । सो महुँ सत्तिएँ भिण्णु रणङ्गणें ॥१॥
एत्तहिँ एक्कु वहेवउ राहउ । कल्लएँ तहों वि महु वि पवराहउ ॥२॥
कल्लएँ तहों वि महु वि आणिज्जइ । एक्कमेक्क-णारायहिँ भिज्जइ ॥३॥
कल्लएँ तहों वि महु वि एक्कन्तरु । जिम्व तहों जिम्व महु मच्चु भयङ्करु ॥४॥
कल्लएँ वद्धावणउ तहोँकहोँ । जिम्व उज्झा-णयरिहेँ जिम्व लङ्कहेँ ॥५॥
कल्लएँ जिम्व मन्दोअरि रोवइ । जिम्व जाणइ अप्पाणउ सोवइ ॥६॥
कल्लएँ णच्चउ गहिय-पसाहणु । जिम्व महु जिम्व तहों केरउ साहणु ॥७॥
कल्लएँ हुअवह-धगधगमाणहों । जिम्व सो जिम्व हउँ ढुक्कु मसाणहों ॥८॥

घत्ता

जिम महुँ जिम्व तेण णिहालिउ खर-दूसण-सम्बुक्क-पहु ।
जिम महुँ जिम्व तेण किक्किन्धिय कल्लएँ रणेँ जयलच्छि-वहु ॥९॥

[११]

सो एत्थन्तरेँ राहव-वीरेँ । धीरिउ अप्पउ चरम-सरीरें ॥१॥
धीरिउ किक्किन्धाहिव-राणउ । धीरिउ जम्बवन्तु बहु-जाणउ ॥२॥

अनवरत धारा बह रही थी, वह कह रहा था, "हे सहोदर कुम्भकर्ण, हे मय मारीच महोदर, हे इन्द्रजीत मेघवाहन, हे अनिर्दिष्ट साधन यमघंट, और हे दानवोंके संहारक सिंहनितम्ब जम्बुमाली, हे सुत और सारण! आखिरकार बड़े कष्टसे रावणने अपना दुःख दूर किया। बड़ी कठिनाईसे वह शोक-समुद्रसे अपने-आपको तार सका। उसने अपने मनमें सोचा, "तीखे नखों और लम्बी पूँछ वाले सिंहका जंगलमें कौन सहायक होता है। रहे रहे, जो बाकी बचा है। तब भी मैं उन्हें सीता नहीं दूँगा। क्यों कहते हो कि मैं अकेला हूँ। नहीं, मैं अकेला नहीं हूँ, मेरी सहायता करनेवाली मेरी बीस भुजाएँ हैं ॥१-९॥

[१०] और फिर, वानरसेनामें जो इने-गिने योद्धा थे, उन्हें मैंने युद्ध-भूमिमें शक्तिसे आहत कर दिया है। अब अकेला राघव होगा, कल मैं उसे मजा चखा दूँगा। कल मैं उसे और वह मुझे जान लेगा। तीरोंकी बौछारसे एक-दूसरेके शरीर भेद दिये जायेंगे। कल उसके और मेरे बीच एक ही अन्तर होगा, कल या तो उसका अहंकार चूर-चूर होगा, या मेरा। कल या तो उसकी अयोध्यानगरीमें हर्षबधावा होगा या फिर मेरी लंका नगरीमें। कल या तो मन्दोदरी रोयेगी, या फिर सीता शोक-सागरमें डूब जायेगी। कल या तो उसकी साजसज्जित सेना हर्षसे नाचेगी, या मेरी। कल मरघटकी धकधकाती आगमें या तो वह जलेगा या मैं। या तो वह, या फिर मैं, खरदूषण और शम्बुकका पथ देखूँगा। अथवा मैं या वह, कल युद्धके आँगनमें विजय-लक्ष्मीरूपी वधूका आलिंगन करूँगा ॥१-९॥

[११] इसी अवधिमें चरमशरीर रामने अपने-आपको धीरज बँधाया। उन्होंने किष्किन्धाराजको समझाया। बहुज्ञानी

धीरिउ रावण-उववण-मद्दणु । सुहडु पहञ्जण-अञ्जण-णन्दणु ॥३॥
धीरिउ णलु णीलु वि भामण्डलु । दिढरहु कुमुउ कुन्दु ससिमण्डलु ॥४॥
धीरिउ रयणकेसि रइवद्धणु । अङ्गउ अङ्गु तरङ्गु विहीसणु ॥५॥
धीरिउ चन्दरासि भामण्डलु । हंसु वसन्तु सेउ वेलन्धरु ॥६॥
धीरिउ दहिमुहु कलुण-रसाहिउ । गवउ गवक्खु सुसेणु विराहिउ ॥७॥
धीरिउ तरलु तारु तारामुहु । कुन्दु महिन्दु इन्दु इन्दाउहु ॥८॥

घत्ता

अण्णु वि जो कोइ रुवन्तउ सो साहारें वि सक्कियउ ।
पर एक्कु दसासहाँ उप्परि रोसु ण धीरें वि सक्कियउ ॥९॥

[१२]

विरहाणल-जालोलि-पलित्तें । अण्णु वि कोव पहञ्जण-छित्तें ॥१॥
किय पइज्ज रणें राहवचन्दें । 'रिउ रक्खिज्जइ जइ वि सुरिन्दें ॥२॥
जइ वि जणद्दणेण महि-माणें । जइ वि तिलोयणेण चउद्दाणें ॥३॥
जइ वि अणङ्ग कियन्तें धणएं । खन्दें जइ वि सियक्खहों तणएं ॥४॥
जइ वि पहञ्जणेण जइ वरुणें । जइ वि मियङ्कें अक्कें अरुणें ॥५॥
पइसइ जइ वि सरणु कलि-कालहों । लिक्कइ णहें जलें थलें पायालहों ॥६॥
पइसइ जइ वि विवरें गिरि-कन्दरें । सप्प-कियन्त-मित्त-दन्तन्तरें ॥७॥
पेसमि सत्तु तो इ सइँ हत्थें । तहों मायासुग्गीवहों पन्थें ॥८॥

घत्ता

कइद्धएँ कुमारें अत्थन्तएँ णिविसु वि रावणु जिअइ जइ ।
तो अप्पउ डहमि चलन्तएँ हुअवहें किक्किन्धाहिवइ' ॥९॥

जाम्बवन्तको समझाया। रावणके उपवनको उजाड़नेवाले पवन और अंजनाके पुत्र सुभट हनुमानको धीरज बँधाया, नल-नील और भामण्डलको धीरज बँधाया। दृढ़रथ, कुमुद, कन्द और शशिमण्डलको धीरज बँधाया। रत्नकेशी और रतिवर्धनको समझाया, अंगद, अंग, तरंग और विभीषणको धीरज बँधाया। चन्द्रराशी और भामण्डलको धीर बँधाया, हंस, वसन्त, सेतु और वेलन्धरको धीरज बँधाया। करुण, रसाधिप, दधिमुख, गवय, गवाक्ष, सुसेन और विराधितको धीरज बँधाया, तरल, तार, तारामुख, कुन्द, महेन्द्र, इन्द्र और इन्द्रायुधको धीरज बँधाया, और भी जो उस समय रो रहा था, राम उन सबको धीरज दे सके। परन्तु एक रावण था कि जिस पर वह अपना क्रोध कम नहीं कर सके ॥१-९॥

[१२] एक तो विरहकी ज्वालासे उत्तेजित होकर और दूसरे कोपानिलसे क्षुब्ध होकर रामने प्रतिज्ञा की कि मैं अपने हाथसे शत्रुको मायासुग्रीवके पथ पर भेज कर रहूँगा। चाहे इन्द्र उसकी रक्षा करे, विश्वपूज्य विष्णु, शिव और ब्रह्मा उसे बचायें। चाहे यम, धनद और कृतान्त उसकी रक्षा करें। चाहे शिवका पुत्र स्कन्ध उसे बचाना चाहे। चाहे पवन या वरुण उसे बचायें, चाहे चन्द्र, सूर्य और अरुण, चाहे वह कलिकाल-की शरणमें चला जाय, अथवा नभ, थल या पातालमें छिप जाय। चाहे वह पहाड़की गुफामें प्रवेश कर ले अथवा सर्प-राज कृतान्तके मुखमें प्रवेश करे। कल कुमारके अन्त होते तक एक पलके लिए भी यदि दशानन जीवित रह गया तो मैं हे किष्किन्धा नरेश! अपने-आपको जलती ज्वालामें होम दूँगा ॥१-९॥

[१३]

पइजारूढें रामें कुरु-दीवें । विरइउ वलय-वूहु सुग्गीवें ॥१॥
माया-वलु वि विउव्विउ रक्खसें । थिउ परिरक्ख करेविणु लक्खणें ॥२॥
हय-गय-रह-पाइक्क-भयङ्करु । णं जमकरणु सुदुट्ठु भइ-दुक्करु ॥३॥
तप्परि पवर-विमाणेंहिं छण्णउ । अब्भन्तरें मणि-रयण-रवण्णउ ॥४॥
सत्त पवर-पायाराहिट्ठिउ । णं अहिणव-समसरणु परिट्ठिउ ॥५॥
सट्ठि सहास मत्त-मायङ्गहुँ । गयवरें गयवरें पवर-रहङ्गहुँ ॥६॥
रहवरें रहवरें तुङ्ग-तुरङ्गहुँ । तुरएँ तुरएँ णरवरहुँ असङ्खहुँ ॥७॥
विरइउ एम वूहु णिच्छिद्दउ । णं सु-कइन्द-कव्वु घण-सद्दउ ॥८॥

घत्ता

भयगारउ दुप्पइसारउ दुण्णिरिक्खु सव्वहुँ जणहुँ ।
णं हियवउ सीयहें केरउ अचलु अभेउ दसाणणहों ॥९॥

[१४]

पुव्व-दिसाएँ विजउ जस-लुद्धउ । पहिलएँ वारें सण्णहु स-रहद्धउ ॥१॥
बीयएँ मारुइ तइयएँ कुम्मुहु । कुन्दु चउत्थएँ पञ्चमें दहिमुहु ॥२॥
छट्टएँ सन्दहत्थु सत्तमें गउ । उत्तर-वारें पहिलएँ अङ्गउ ॥३॥
बीयएँ अङ्गदु तइयएँ णन्दणु । चउत्थें (?) कुमुउ पञ्चमें रइवद्धणु ॥४॥
छट्ठएँ चन्दसेणु कुसियाणणु । सत्तमें चन्दरासि दणु-दारणु ॥५॥
पच्छिम-वारें पहिलएँ ससिमुहु । बीयएँ सुहडु परिट्ठिउ दिढरहु ॥६॥
तइयएँ गवउ गवक्खु चउत्थएँ । पञ्चमें तारु विराहिउ छट्ठएँ ॥७॥

घत्ता

जो सव्वहुँ कुढिएँ थक्कउ जासु भयङ्करु रिच्छु धएँ ।
सो जम्बउ सरवर-पहरणु वारें परिट्ठिउ सत्तमएँ ॥८॥

[१३] कुलदीपक रामने जब यह प्रतिज्ञा की तो सुग्रीवने भी व्यूह-रचना प्रारम्भ कर दी। उसने फौरन मायावी सेना रच दी। वह लक्ष्मणकी रक्षा करनेके लिए स्थित हो गयी। अश्व, गज, रथ और पैदल सैनिकोंसे वह अत्यन्त भयंकर लग रही थी, मानो अति दुर्धर भयंकर जमकरण हो। ऊपर विशाल विमान थे। जो भीतर मणियों और रत्नोंसे सुन्दर थे। उसमें सात विशाल प्राकार (परकोटे) थे, जो ऐसे लगते थे मानो नया समवसरण ही हो। साठ हजार मतवाले हाथी थे। प्रत्येक गज पर एक चक्र था। प्रत्येक रथ पर अश्व थे और अश्व पर श्रेष्ठ योद्धा। सुग्रीवने अपना व्यूह ऐसा बनाया कि उसमें सुराख न मिल सके, मानो वह सघन शब्दोंका किसी सुकवि का काव्य हो। वह व्यूह सबके लिए अत्यन्त भयानक, दुष्प्रवेश्य और ऐसा दुर्दर्शनीय था मानो सीता देवीका हृदय हो जो रावणके लिए अडिग अभेद्य था ॥१-९॥

[१४] पूर्व दिशामें यशका लोभी विजय था जो पहले द्वार पर रथ और चक्र सहित स्थित था। दूसरे पर हनुमान्, तीसरे पर दुर्मुख, चौथे पर कुन्द और पाँचवें पर दधिमुख, छठे पर मन्दहस्त, सातवें पर गज। पहले उत्तर द्वार पर अंग था। दूसरे पर अंगद, तीसरे पर नन्दन, चौथे पर कुमुद, पाँचवें पर रतिवर्धन, छठे पर चन्द्रसेन (जिसका चेहरा तमतमा रहा था), सातवें पर दानव संहारक चन्द्रराशि। पहले पश्चिम द्वार पर शशिमुख, दूसरे पर सुभट दृढ़रथ था। तीसरे पर गवय, चौथे पर गवाक्ष, पाँचवें पर तार, और छठे पर विराधित था। परन्तु जो बुद्धिमें सबसे बड़ा था और जिसकी पताकामें भयंकर रीछ अंकित था, पेड़ोंके अस्त्र लिये जम्बु सातवें दरवाजे पर स्थित हो गया ॥१-८॥

[१५]

दाहिण-दिसएँ परिट्ठिउ दुद्धरु । वारेँ पच्छिमएँ णीलु धणुद्धरु ॥१॥
बीयएँ णलु णर-लउडि-भयङ्करु । कुलिस-विहत्थउ णाइँ पुरन्दरु ॥२॥
तइअएँ वारेँ विहीसणु थक्कउ । सूल-पाणि परिवज्जिय-सङ्कउ ॥३॥
चउथएँ वारेँ कुमुउ जसु जेहउ । सोणा-सुअलावोलिय-देहउ ॥४॥
पञ्चमेँ वारेँ सुसेणु समत्थउ । विप्फुरियाहरु कोन्त-विहत्थउ ॥५॥
छट्ठएँ गिरि-किक्किन्ध-पुरेसरु । भीसण-भिण्डिमाल-पहरण-करु ॥६॥
सत्तमेँ भामण्डलु असि लिन्तउ । णावइ पलय-दवग्गि पलित्तउ ॥७॥
एम कियइँ रणेँ दुप्पइसारइँ । वूहहोँ अट्ठावीस इ वारइँ ॥८॥

घत्ता

तहिँ तेहएँ कालेँ पडीवउ रुवइ स-दुक्खउ दासरहि ।
पवरेँहिँ सइं भुव-दण्डेँहिँ पुणु पुणु अप्फालन्तु महि ॥९॥

[१५] दक्षिण दिशामें पहले द्वारपर दुर्धर धनुर्धारी नील स्थित था। दूसरे द्वारपर था—अपनी उत्तम लाठीसे भयंकर नल और हाथमें वज्र लिये हुए इन्द्र। तीसरे द्वारपर निःशंक विभीषण, उसके हाथमें शूल था। चौथे द्वारपर यमके समान कुमुद, उसका शरीर कसे हुए दोनों तूणीरोंसे पीड़ित हो रहा था। पाँचवें द्वारपर समर्थ सुषेण था; उसके अधर काँप रहे थे और उसके हाथमें भाला था। छठे द्वारपर किष्किंधा नरेश था। उसके हाथमें भीषण भिण्डिमाल अस्त्र था। सातवें द्वारपर हाथमें तलवार लिये हुए भामण्डल था, मानो प्रलयकी आग ही भड़क उठी हो। इस प्रकार सुग्रीवने युद्धमें दुष्प्रवेश्य अट्ठाईस द्वार बना लिये। उस भयंकर विकट समयमें राम बार-बार रो रहे थे। बार-बार वह अपनी विशाल भुजाओंसे धरतीको पीट रहे थे ॥१–२॥

●

[६८. अट्ठसट्ठिमो संधि]

भाइ-विओएं कलुण-सरु जं राहवु रोवइ जावँहिं ।
णं कइलासु जणद्दणहों पडिचन्दु पराइउ तावँहिं ॥

[१]

आवीलिय-दिढ-तोणा-जुअलु । बद्ध रणझणन्त-किङ्किणि-मुहलु ॥१॥
अप्फालिय-चण्ड-कोवण्ड-करु । पाणहर-पईहर-गहिय-सरु ॥२॥
परियड्ढिय-रण-भर-पवर-धुरु । सर-वइरि-पहर-कप्परिय-उरु ॥३॥
वेयण्ड-सोण्ड-भुयदण्ड-थिरु । मोरङ्ग-छत्त-अणुसरिस-सिरु ॥४॥
गउ तेत्तहें जेत्तहें जणय-सुउ । थिउ वूहु-वारें कयवाय-भुउ ॥५॥
'अहों अहों भामण्डल मण्ड-तिलय । सम्माण-दाण-गुण-गण-णिलय ॥६॥
विज्जा-परमेसर भणमि पइँ । तिहुँ मासहुँ अवसरु लद्धु मइँ ॥७॥
जइ दरिसावहि रहु-णन्दणहों । सो जीविउ देमि जणद्दणहों' ॥८॥
तं वयणु सुणेवि अलहन्तएँण । णिउ रामहों पासु तुरन्तएँण ॥९॥

घत्ता

जोइहिं वुच्चइ ससिमुहिहिँ वरहिण-कलाव-धम्मेल्लहें ।
जीवइ लक्खणु दासरहि पर ण्हवण-जलेण विसल्लहें ॥१०॥

[२]

सुणु देव देवसङ्गीय-पुरें । बहु-रिद्धि-विद्धि-जण-धण-पउरें ॥१॥
ससिमण्डलु अत्थि णराहिवइ । सुप्पह-महएवि मराल-गइ ॥२॥

अड़सठवीं सन्धि

राम अपने भाईके वियोगमें करुण स्वरमें रो रहे थे। इतनेमें राजा प्रतिचन्द्र उनके पास आया मानो वह कुमार लक्ष्मणके लिए उच्छ्वास हो।

[१] कसे हुए दोनों तूणीरोंसे उसका शरीर पीड़ित हो रहा था। बहुत-सी बजती हुई घण्टियोंसे वह मुखर हो रहा था। खिंचा हुआ धनुष उसके कन्धोंपर था। प्राण लेनेवाले लम्बे-लम्बे तीर उसके पास थे। वह बड़ेसे बड़े युद्धका भार उठा सकता था। उसने बड़े-बड़े शत्रुओंके वक्ष विदीर्ण कर दिये थे। उसकी भुजाएँ गजशुण्डकी तरह भारी थीं। उसका सिर मोर-छत्रके समान था। वह वहाँ गया जहाँ जनकसुत भामण्डल था। हाथमें करवाल लिये हुए वह व्यूह द्वारपर जाकर खड़ा हो गया। उसने निवेदन किया, "योद्धाओंमें श्रेष्ठ हे भामण्डल, तुम सम्मान, दान और गुण-समूहके घर हो। हे विद्याओंके पर-मेश्वर, मैं तीन माहमें यह अवसर पा सका हूँ। यदि तुम राम-के दर्शन करा दो, तो मैं लक्ष्मणको जीवित कर दूँगा।" यह वचन सुनते ही, भामण्डल अपने-आपको एक क्षणके लिए भी नहीं रोक सका। वह तुरन्त उसे रामके पास ले गया। उसने भी वहाँ जाकर निवेदन किया, "ज्योतिषियोंने कहा है, कि चन्द्रमुखी मोरपंखोंके समूहके समान चोटी रखनेवाली विशल्या के स्नान-जलसे ही लक्ष्मण दुबारा जीवित हो सकेंगे" ॥१–१०॥

[२] सुनिए, मैं बताता हूँ। ऋद्धियों, वृद्धियों और जन-धन-से परिपूर्ण देवसंगीत नामका नगर है। उसमें शशिमण्डल

पडिचन्दहो तासु उप्पण्णु सुउ । सो हउँ रामक्खुक्खिमण्ण-सुउ ॥३॥
स-कलत्तउ केण वि कारणेंण । किर लीलऍं जामि णहङ्गणेंण ॥४॥
मेहुणियहेँ तणउ वइरु सरेंवि । तो सहसविजउ थिउ उत्थरेंवि ॥५॥
स-कसाय वे वि णहेँ अब्भिडिय । णं दिस-दुग्घोट्ट समावडिय ॥६॥
तें आयामेंप्पिणु अमरिस-भरु । महु सत्ति विसज्जिय चण्ड-रव ॥७॥
विणिभिन्देंवि पाडिउ ताएँ रणेँ । उज्झहेँ बाहिरेँ उज्जाण-वणेँ ॥८॥
णिवडन्तउ भरहें लक्खियउ । गन्धोवएण अब्भोक्खियउ ॥९॥

घत्ता

तें अब्भोक्खण-पाणिएँण वलमाणु अप्पाइउ मेरउ ।
जाउ विसल्लु पुणण्णवउ णं णेहु विलासिणि-केरउ ॥१०॥

[२]

पुणु पुच्छिउ भरह-णरिन्दु मइँ । "एँउ गन्ध-सलिलु कहिँ लद्धु पइँ ॥१॥
तेण वि महु गुज्झु ण रक्खियउ । सत्तुहण-वरिट्ठें अक्खियउ ॥२॥
"स-विसयहोँ अउज्झा-पट्टणहोँ । उप्पण्ण वाहि सव्वहोँ जणहोँ ॥३॥
उर-घाउ अरोचउ दाहु जरु । कल-सणिवाउ गहु छड्डि-करु ॥४॥
सिरेँ सूलु कवाल-रोउ पवरु । सप्फुडिसउ (?) खासु सासु अवरु ॥५॥
तेहऍ कालें तहिँ एक्कु जणु । स-कलत्तु स-पुत्तु स-बन्धुजणु ॥६॥
स-धउ स-बलु स-णयरु स-परियणु । परिजियइ सहत्तउ दोणघणु ॥७॥
थिउ सुरवइ सव्व-वाहि-रहिउ । सिरि-सम्पय-रिद्धि-विद्धि सहिउ ॥८॥

घत्ता

तेण विसल्लहेँ तणउ जलु आणेप्पिणु उप्परि घित्तउ ।
पट्टणु पच्चुज्जीवियउ स-णयरु णं अमिऍ सित्तउ" ॥९॥

नामक राजा है। उसकी पत्नी महादेवी सुप्रभा है। उसकी चाल हंसके समान है। उसके पुत्रका नाम प्रतिचन्द्र है। मैं वही हूँ। मेरी भुजाएँ पुलकित हो रही हैं। एक बार मैं सपत्नीक विहार करता हुआ आकाशमार्गसे जा रहा था। परन्तु अपने सालेके बैरको याद कर, सहस्रवज्र एकदम उछल पड़ा। क्रोधमें आकर हम दोनों आकाशमें ऐसे लड़ने लगे, मानो दो दिग्गज ही लड़ पड़े हों। हे राम, उसने प्रयास कर, मेरे ऊपर चण्डरव शक्ति छोड़ी। उस शक्तिसे आहत होकर मैं अयोध्याके बाहर एक उद्यानमें जा पड़ा। वहाँ गिरते हुए मुझे भरतने देख लिया। उन्होंने गन्धोदकसे मुझे सींच दिया। उस जलसे मुझे सहसा चेतना आ गयी। मैं दुबारा वेदनाशून्य नये-जैसा हो गया, विलासिनीके प्रेम की भाँति ॥१-१०॥

[२] मैंने राजा भरतसे पूछा, "आपने यह गन्धजल कहाँसे प्राप्त किया ? उन्होंने यह रहस्य मुझसे छिपाया नहीं। उन्होंने बताया एक बार पूरे प्रदेशके साथ अयोध्या नगरीमें सब लोगोंको व्याधि हो गयी, सबके हृदयमें चोट-सी अनुभव होती, अरोचकता बढ़ गयी। भयंकर जलन हो रही थी। जैसे सन्निपात हो या सर्वनाशी ग्रह हो। सिरमें दर्द था और कपालमें भारी रोग था, साँस और खाँसी उखड़ी जा रही थी। उस अवसरपर एक आदमी, अपनी पत्नी, पुत्र और सगे-सम्बन्धियोंके साथ आया। ध्वजा, सेना, परिजन और नगरके साथ अकेला वह राजा द्रोणघन स्वस्थ था। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार इन्द्र व्याधिसे रहित, और ऋद्धि, वृद्धि एवं श्री सम्पदासे सहित होता है। उसने विशल्याका जल सबपर छिड़क दिया, सारा नगर इस प्रकार फिरसे जीवित हो गया, मानो उसे किसीने अमृतसे सींच दिया हो" ॥१-९॥

[४]

जं पच्चुज्जीविउ सयलु जणु । तं भरहें पुच्छिउ दोणघणु ॥१॥
"अहों माम एउ कहिँ लद्धु जलु । णाणाविह-गन्ध-रिद्धि-बहुलु ॥२॥
पर-कज्जु जेम जं सीयलउ । जिण-सुक्क-झाणु जिह णिम्मलउ ॥३॥
जिण-वयणु जेम जं वाहि-हरु । सुहि-दंसणु जिह आणन्द-यरु" ॥४॥
तं णिसुणेंवि दोणु णराहिवइ । पप्फुल्लिय-वयण-कमलु चवइ ॥५॥
"मम दुहियहेँ अमर-मणोहरिहेँ । इउ ण्हवणु विसल्ला-सुन्दरिहेँ ॥६॥
विणु मन्तिएँ अमियहों अणुहरइ । जसु लग्गइ तासु वाहि हरइ" ॥७॥
तं णिसुणेंवि भरहें पुज्जियउ । णिय-णयरहों दोणु विसज्जियउ ॥८॥

घत्ता

अप्पुणु गउ तं जिण-भवणु जं सासय-सोक्ख-णिहाणु ।
णावइ सग्गहों उच्छलेंवि महि-मण्डलें पडिउ विमाणु ॥९॥

[५]

तहिँ सिद्ध-कूडेँ सुर-साराहों । किय थुइ अरहन्त-भडाराहों ॥१॥
तइलोक्क-चक्क-परमेसरहों । अ-कसायहों णिद्दहाहरहों ॥२॥
सु-परिट्ठिय-थिर-सीहासणहों । आयम्बुर-चामर-वासणहों ॥३॥
धुव्वन्त-धवल-छत्त-त्तयहों । किय-चउविह-कम्म-कुल-क्खयहों ॥४॥
भामण्डल-मण्डिय-पच्छलहों । पहरण-रहियहों जय-वच्छलहों ॥५॥
तइलोक्क-लच्छि-लच्छिय-उरहों । परिपालिय-अजरामर-पुरहों ॥६॥
मोहन्धासुर-णिण्णिभिन्दणहों । उप्पत्ति-वेल्लि-परिछिन्दणहों ॥७॥
संसार-महद्दुम-पाडणहों । कन्दप्प-मडप्फर-साडणहों ॥८॥
इन्दिय-दद्दहण-णिबन्धणहों । णिद्दड्ढ-दुकिय-कम्मेन्धणहों ॥९॥

[४] सब लोगोंके इस प्रकार जो जानेपर, भरतने द्रोणघनसे पूछा, "हे आदरणीय, यह जल आपको कहाँसे मिला ? यह तरह-तरहकी गन्धों और ऋद्धियोंसे परिपूर्ण है। यह जल वैसे ही ठण्डा है जैसे हम दूसरोंके कामोंमें ठण्डे होते हैं। यह जिन-भगवान्के शुक्ल ध्यानकी भाँति निर्मल है। जिनके शब्दोंकी तरह व्याधिको दूर कर देता है। पण्डितोंके दर्शनकी भाँति आनन्दकारी है।" यह सुनकर राजा द्रोणघनने कहा (उसका मुख कमल खिला हुआ था), "यह देवांगनाकी भाँति सुन्दर, मेरी लड़की, विशल्याके स्नानका जल है। निःसन्देह, यह अमृत तुल्य है, जिसको लग जाता है उसकी व्याधि दूर कर देता है।" यह सुनकर भरतने राजाका सम्मान किया, और उन्हें अपने घरसे विदा किया। वह स्वयं जिन-मन्दिरमें गया, जो शाश्वत मोक्षका स्थान है और जो ऐसा लगता था, मानो स्वर्गसे कोई विमान ही आ पड़ा हो ॥१-९॥

[५] उस सिद्धकूट जिन-मन्दिरमें उसने देवताओंमें श्रेष्ठ अरहन्त भगवान्की स्तुति प्रारम्भ की। उन अरहन्त भगवान् की जो त्रिलोक चक्रके स्वामी हैं, जो कषायोंसे रहित हैं, जो तृष्णा और निद्रासे दूर हैं, जो सिंहासनपर प्रतिष्ठित हैं, जिन-पर सुन्दर चामर ढुलते रहते हैं। जिनपर सफेद छत्र हैं। जो चार घातिया कर्मोंका विनाश कर चुके हैं। जिनके पीछे भामण्डल स्थित है। अहंकारसे जो हीन हैं, विश्वके प्रति जो करुणाशील हैं। जिनके हृदयमें तीनों लोकोंकी लक्ष्मी स्थित है। जिन्होंने देवताओंके लोकका पालन किया है। मोहरूपी अन्धे असुरको जिन्होंने नष्ट कर दिया है। जन्मरूपी लताको जो जड़से उखाड़ चुके हैं, संसाररूपी महावृक्षको जो नष्ट कर चुके हैं, जिन्होंने कामदेवके घमण्डको चूर-चूर कर दिया है। इन्द्रियोंको

घत्ता

तहिँ सुरवर-परमेसरहों किय वन्दण भरह-णरिन्दें ।
गिरि-कइलासें समोसरणें णं पढम-जिणिन्दहों इन्दें ॥१०॥

[६]

जिणु वन्देंवि वन्दिउ परम-रिसि । जें दरिसिय-दसविह-धम्म-दिसि ॥१॥
जो दूसह-परिसह-भर-सहणु । जो पञ्च-महव्वय-णिव्वहणु ॥२॥
जो तव-गुण-सञ्जम-णियम-धरु । तिहिँ गुत्तिहिँ गुत्तउ खन्ति-धरु ॥३॥
जो तिहिँ सल्लेंहिँ ण सल्लियउ । जो [illegible] ॥४॥
जो संसारोवहि-णिम्महणु । जो रुक्ख-मूलें पाउस-सहणु ॥५॥
जो किडिकिडि-जन्त-पुडिय-णयणु । जो सिसिर-कालें बाहिरें-सयणु ॥६॥
जो उण्हालएँ अत्तावणिउ । जो चन्दायणिउ अतोरणिउ ॥७॥
जो थमइ मसाणेंहिँ मासणेहिँ । वीरासण-उक्कुडुआसणेंहिँ ॥८॥
जो मेरु-गिरिं व धीरत्तणेंण । जो जलहि व गम्भीरत्तणेंण ॥९॥

घत्ता

सो मुणिवरु चउ-णाण-धरु पणवेप्पिणु भरहें वुच्चइ ।
"काइँ विसल्लएँ तउ कियउ जें माणुसु वाहिएँ मुच्चइ" ॥१०॥

[७]

तं वयणु सुणेप्पिणु भणइ रिसि । णिय सयहों जेण अण्णाण-णिसि ॥१॥
"सुणु पुव्व-विदेहें रिद्धि-पवरु । णामेण पुण्डरिकिणि-णयरु ॥२॥
तिहुअण-आणन्दु तित्थु णिवइ । लीला-परमेसरु चक्कवइ ॥३॥
तहों सुय णामेणाणङ्गसर । धम्मिल्ल-पओहर कण्ण वर ॥४॥

प्रवृत्तियोंपर जिन्होंने प्रतिबन्ध लगा दिया है। दुष्कर्मोंके ईंधन-को जिन्होंने जलाकर खाक कर दिया है। राजा भरतने देव-ताओंके स्वामीकी इस प्रकार वन्दना की, मानो इन्द्रने कैलास पर्वतपर प्रथम जिनकी वन्दना की हो ॥६-१०॥

[६] जिनभगवान्‌की वन्दनाके बाद, उसने महामुनिकी वन्दना की। उन महामुनिकी, जो दस प्रकारके धर्मकी दिशाएँ बताते हैं। जो दुस्सह परिषहोंका भार सहते हैं। जो पाँच महा-व्रतोंका भार सहन करते हैं। तप गुण संयम और नियमोंका जो पालन करते हैं। जो तीन गुप्तियोंको धारण करते हैं और शान्तिशील हैं। जिन्हें तीन शल्यें नहीं सतातीं। जो समस्त कषायोंसे दूर हैं। जो संसारके समुद्रमें नहीं डूबते। जो वृक्षके नीचे पावस काट लेते हैं। जो कड़कड़ाती, आँखें बन्द करने-वाली ठण्डमें बाहर सोते हैं, जो गर्मीमें आतापनी शिलापर तप करते हैं, और लूमें चान्द्रायण तप साध लेते हैं। जो भयंकर मरघटोंमें भी वीरासन और उत्कुट आसनोंमें ध्यानमग्न रहते हैं। जो धीरतामें सुमेरु पर्वत और गम्भीरतामें समुद्र हैं। चार ज्ञानोंके धारी मुनिवरको प्रणाम करके भरतने पूछा, "विशल्या-ने ऐसा कौन-सा तप किया जिससे यह मनुष्यकी व्याधि दूर कर देती है" ॥१-१०॥

[७] यह सुनकर महामुनिने बताना शुरू करदिया, उन मुनि-ने, जो अज्ञानकी रातका अन्त कर चुके हैं, कहा, "सुनो, पूर्व विदेहमें ऋद्धिसे भरपूर पुंडरीकिणी नगर है। उसमें त्रिभुवन-आनन्द नामक राजा था। वह लीला पुरुषोत्तम चक्रवर्ती था। उसकी अनंगसरा नामकी उन्नतपयोधरा सुन्दर कन्या थी।

सोहग्ग-रासि लायण्ण-णिहि । णं सरहस छल-जण-मयण-दिट्ठि ॥५॥
णं कुसुमिय [illegible] ॥ णं [illegible] काम-कह ॥६॥
णं मणहर चन्दण-रुक्ख-छाय । गब्भेसरि रूवहों पारु गय ॥७॥
णिरुवम-तणु अइसएण सहइ । वम्मह-धाणुक्खिय-लील वहइ ॥८॥

घत्ता

भउह-चाव-लोयण-गुणेंहिं जसु दिट्ठि-सरासणि लायइ ।
तं माणुसु घुम्मावियउ दुक्खु पिय-जीविउ पावइ ॥९॥

[८]

तहिं अवसरें महियलें पसरिय-जसु । विज्जाहरु णामें पुणव्वसु ॥१॥
मणि-विमाणें भुवणु-धयग्गएँ । तहिं आरूढें गि आउ णहग्गएँ ॥२॥
णिवडिय दिट्ठि तासु तहों तेत्तहें । वसइ अणङ्गसाण सा जेत्तहें ॥३॥
सुहयन्द-सुह सुन्दर थाली । अहिणव-रम्भ-गब्भ-सोमाली ॥४॥
सहइ परिट्ठिय मन्दिरें मणहरें । लच्छि व कमल-वणहों अब्भन्तरें ॥५॥
मालइ-माला-मउय-कराणएँ । णयणहिं विद्धु अणङ्गसराणएँ ॥६॥
विणु चावें विणु विरइय-थाणें । विणु गुणेंहिं विणु सर-सन्धाणें ॥७॥
विणु पहरणेंहिं तो वि जज्जरियउ । ण गणइ किं पि पुणव्वसु अरियउ ॥८॥

घत्ता

लोयण-सर-पहराहएँण करवालु भयङ्करु दावेंवि ।
पेक्खन्तहों सव्वहों जणहों णिय कण्ण विमाणें चडावेंवि ॥९॥

[९]

जं अहिणव कोमल-कमल-करा । अक्किमणएँ लेवि अणङ्गसरा ॥१॥
स-विमाणु पवण-मण-गमण-गउ । वेयहुँ दाणवहु मि रणें अजउ ॥२॥

वह सौभाग्यकी राशि और सौन्दर्यकी निधि थी। मानो वह उत्सवके जनमनकी आनन्दभरी दृष्टि हो। मानो शरद्-चन्द्रकी सुन्दर प्रभा हो, मानो विभ्रम उत्पन्न करनेवाली काम-कथा हो, मानो सुन्दर चन्दनवृक्षकी लता हो। वह गर्वेश्वरी रूपकी सीमाओंको पार कर चुकी थी। उसका अनुपमेय शरीर अतिशय रूपसे शोभित था। वह कामदेवके धनुषकी लीलाका भार वहन कर रही थी। भौंहें चाप और लोचन-गुणको जब वह अपने दृष्टि-धनुषपर लाती तो उससे मनुष्य घूमने लगता और बड़ी कठिनाईसे अपने प्राण बचा पाता ॥१-७॥

[८] एक दिन पुर्नवसु नामका विद्याधर जिसका कि यश धरतीमें दूर-दूर तक फैला हुआ था, अपने मणिमय विमानमें बैठकर विहार कर रहा था। उस विमानकी पताका हवामें फहरा रही थी। घूमते-घूमते वह वहाँ आया जहाँ अनंगबाणके समान वह सुन्दरी थी। वह बाला पूनोंके चन्द्रके समान सुन्दर थी और अभिनव केलेके गाभकी भाँति कोमल। सुन्दर महलमें बैठी हुई ऐसी सोह रही थी मानो लक्ष्मी कमलवनके भीतर बैठी हो। मालती-मालाके समान सुन्दर हाथोंवाली अनंगसराकी आँखोंसे वह विद्याधर आहत हो गया। धनुषके बिना, स्थानके बिना, डोरी और शरसन्धानके बिना, अस्त्रके बिना ही वह इतना आहत हो गया कि जर्जर हो उठा। दग्ध होकर पुनर्वसु कुछ भी नहीं गिन रहा था। आँखोंके तीरसे आहत वह अपनी भयंकर तलवारसे डराकर, सब लोगोंके देखते-देखते उस कन्याको अपने विमानमें चढ़ाकर ले गया ॥१-९॥

[९] अभिनव सुन्दर कोमल हाथों वाली अनंगसराको वह विद्याधर जबर्दस्ती ले गया। पवन और मनके समान गतिवाले

तं सङ्गाहिवइ-लद्ध-पसरा । विज्जाहर पहरण-गहिय-करा ॥३॥
कोवग्गि-पलित्त-फुरिय-वयणा । दट्ठाहर भू-भङ्गुर-णयणा ॥४॥
गज्जन्त पधाइय तक्खणेण । णं स-जल जलय गयणङ्गणेण ॥५॥
"लइ लुइ पाव दक्खवहि मुहु । कहिँ कण्ण लएँविणु जाइ तुहुँ" ॥६॥
तं णिसुणेँवि कोवाणल-जलिउ । णं सीहु गइन्दहुँ थट्टेँ वलिउ ॥७॥
तें पउम-विक्कमेँ भग्गु बलु । णावइ अवसरेँ कम्म-फलु ॥८॥

घत्ता

कह वि परोप्परु संथवेँवि स-धयग्गु स-छेह स-वाहणु ।
गिरिवरेँ जलहर-विन्दु जिह उत्थरिउ पडीवउ साहणु ॥९॥

[१०]

कड्ढिय-धणुहर-मेल्लिय-सरेँहिँ । तिहुअणआणन्दहोँ किङ्करेँहिँ ॥१॥
सव्वेँहिँ णिप्फलु णिरत्थु किउ । पाडिउ विमाणु परिछिण्णु धउ ॥२॥
णासन्तिउ जं अरिवर-णिवहु । तं विज्ज सरेप्पिणु पण्णलहु ॥३॥
घत्तिय घरणियलेँ अणङ्गसरा । णं सरय-मियङ्कहों जोण्ह-करा ॥४॥
सु पणट्ठु पुणव्वसु गीढ-मउ । णं हरिणु सरासणि-तासु गउ ॥५॥
अवलोयन्त वत्त कण्णहेँ तणिय । किङ्कर वि पत्त पुरि अप्पणिय ॥६॥
अन्तेउरु लज्जिउ विमण-मणु । णं तुहिण-छित्तु सयवत्त-वणु ॥७॥
अत्थाणु वि सोह ण देइ किह । जोव्वणु विणु काम-कहाएँ जिह ॥८॥

घत्ता

कहिउ णरिन्दहों किङ्करेँहिँ "जलेँ थलेँ णयणयलेँ गविट्ठी ।
सिद्धि जेम णाणेण विणु तिह अम्हहिं कण्ण ण दिट्ठी" ॥९॥

विमानमें बैठा हुआ वह देवताओं और दानवोंके लिए अजेय था। चक्रवर्तीके आदेशसे विद्याधर हाथमें अस्त्र लेकर दौड़े। उनके मुख क्रोधकी ज्वालासे चमक रहे थे, उनके अधर चल रहे थे, उनकी भौंहें और नेत्र टेढ़े थे। उसी क्षण वे गरजते हुए दौड़े, मानो आकाशमें जलसे भरे मेघ हों। उन्होंने चिल्लाकर कहा "हे दुष्ट पाप क्षुद्र, अपना मुख दिखा। कन्याको लेकर कहाँ जाता है!" यह सुनकर वह विद्याधर क्रोधसे भड़क उठा, मानो सिंह गजघटापर टूट पड़ा हो। उसने पहली ही भिड़न्तमें सेना तितर-बितर कर दी, वैसे ही जैसे अपशब्दसे काव्यदल नष्ट हो जाता है। किसी प्रकार, एक दूसरेको सान्त्वना देकर, ध्वजाग्र, अस्त्र और वाहनोंके साथ सेना इस प्रकार फिरसे उठी, मानो पहाड़पर पानीकी बूँद हो ॥१-९॥

[१०] त्रिभुवनआनन्दके अनुचरोंने धनुष निकालकर उन-पर तीर चढ़ा लिये। सबने मिलकर उसे रोककर निरस्त्र कर दिया। उसका विमान गिरा दिया, और पताका फाड़ डाली। जब शत्रुसमूहका वह नाश न कर सका, तो उसने पर्णलघु विद्याका सहारा लेकर, अनंगसराको धरतीपर फेंक दिया, मानो शरच्चन्द्रने अपनी ज्योत्स्नाको फेंक दिया हो। पुनर्वसु भी, भारी भयसे भागा, मानो धनुषसे भीत हरिन हो। अनङ्गसराको न पाकर, अनुचर भी अपने नगरके लिए लौट गये। सारा अन्तःपुर इस तरह उन्मन था, मानो हिमसे आहत कमलोंका वन हो। अनंगसराके बिना दरबार वैसे ही शोभा नहीं दे रहा था, जैसे यौवन कामकथाके बिना। अनुचरोंने जाकर राजासे कहा, 'जल और थल दोनोंमें हमने उसे देख लिया है, परन्तु हमें कन्या उसी प्रकार दिखाई नहीं दी, जिस-प्रकार ज्ञानके बिना सिद्धि नहीं दीख पड़ती ॥१-९॥

[११]

एत्थन्तरें छण-मियङ्क-मुहिय । तिहुअणआणन्द-राय-दुहिय ॥१॥
पण्णलहुअ-विज्जएँ चित्त तहिँ । सुण्णासणु भीसणु रण्णु जहिँ ॥२॥
जहिँ दारिय-करि-कुम्भ-त्थलइँ । उच्छलिय-धवल-मुत्ताहलइँ ॥३॥
दुप्पेक्ख-तिक्ख-णक्खङ्कियइँ । दीसन्ति सीह-परिसङ्कियइँ ॥४॥
जहिँ दन्ति-दन्त-मुसलाहयइँ । दीसन्ति भग्ग पायव-सयइँ ॥५॥
जहिँ विसम-तरुइँ महियलेँ गयइँ । वणमहिस-सिङ्ग-समुम्मूलियइँ ॥६॥
मुच्चन्ति जेत्थु कइ-वुक्कियइँ । घुक्कुक्क-कोल-आरडियइँ ॥७॥
वणवसह-जूह-मुह-डेक्कियइँ । वायस-रडियइँ सिव-फेक्कियइँ ॥८॥

घत्ता

तहिँ तेहएँ वणेँ कामसर जल-वाहिणि विउल विहावइ ।
भङ्ग-वलय-विब्भम-गुणेँहिं सरि पोढ-विलासिणी णावइ ॥९॥

[१२]

तहिँ जलवाहिणी-तडेँ वइसरेवि । धाहाविउ कुलहरु सम्भरेँवि ॥१॥
"हा ताय ताय महुँ सन्थवहि । हा माएँ माएँ सिरेँ करु थवहि ॥२॥
हा भाइ भाइ भब्भीस करेँ । गय वग्घ सिङ्घ ढुक्कन्त धरेँ ॥३॥
हा विहि हा काइँ कियन्त किउ । पउ वसणु काइँ महु दक्खविउ ॥४॥
हा काइँ कियइँ मइँ दुक्कियइँ । जं णिहि दावेँवि णयणइँ हियइँ ॥५॥
एवहिँ आहउ एत्तहेँ मरणु । तो वरि मुअएँ जिणवरु सरणु ॥६॥
जेँ भव-संसारहोँ उत्तरमि । अजरामर-पुरवरु पइसरमि" ॥७॥
सा एम भणेँवि सण्णासेँ थिय । हत्थ-सयहोँ उवरि णिवित्ति किय ॥८॥

घत्ता

वरिसहुँ सट्ठि सहास थिय तव-चरणेँ परिट्ठिय जावेँहिं ।
णव-मयलञ्छण-लेह जिह सउदासेँ दीसइ तावेँहिं ॥९॥

[११] इसी बीच पूनोंके चाँद-जैसे मुखवाली, राजा त्रिभुवनआनन्दकी पुत्रीको पर्णलघुविद्यासे ऐसे स्थानपर फेंका जहाँ सूना भयंकर वन था। जिसमें हाथियोंके फटे हुए कुम्भ-स्थल पड़े हुए थे, उनमें सफेद मोती बिखरे हुए पड़े थे। दुर्दर्शनीय तीखे नखोंसे अंकित सिंह जिसमें आते-जाते दिखाई दे रहे थे। जिसमें मूसलके समान हाथी दाँतोंसे भग्न सैकड़ों वृक्ष थे। जिसमें विषमतटवाली सैकड़ों नदियाँ थीं। जंगली भैंसे, जिनमें सींगोंसे वप्रक्रीड़ा कर रहे थे। जहाँ केवल बन्दरोंकी आवाज सुनाई पड़ती थी। केवल कोलोंका पुकारना सुन पड़ता था। वनके बैल जोर-जोरसे रँभा रहे थे। कौए रो रहे थे और सियार अपनी आवाज कर रहे थे। उस भीषण वनमें कामसरा नामकी एक विशाल नदी थी, जो अपने टेढ़ेपन, गुलाई और विभ्रमके कारण विलासिनी स्त्रीके समान दिखाई देती थी ॥१-९॥

[१२] उस नदीके किनारे बैठकर, अनंगसरा अपने कुलघर की यादकर रोने लगी, "हे तात, तुम आकर मुझे सान्त्वना दो। हे माँ, हे माँ, तू मेरे सिरपर हाथ रख। हे भाई, हे भाई, तुम मुझे अभय वचन दो। बाघ और सिंह आ रहे हैं, मुझे बचाओ। हे विधाता, हे कृतान्त, मैंने क्या किया था, यह दुःख तुमने मुझे क्यों दिखाया ? अब जब मुझे यहाँ मरना ही है तो अच्छा है कि मैं मुखसे जिनवरका नाम लूँ, जिससे संसार समुद्रसे तर सकूँ और अजर-अमर लोकमें पहुँच सकूँ।" यह कहकर वह समाधि लेकर बैठ गयी। साठ हजार वर्ष तक वह इसी प्रकार तप करती रही। एक दिन सौदास विद्याधरने उसे देखा, उसे लगा जैसे वह नव चन्द्रलेखा हो ॥१-९॥

[१२]

छुडु छुडु तहिँ पवर-भुअङ्गमेँण । दंदट्ठु गिलिउ उर-जङ्गमेँण ॥१॥
मोल्लिज्जइ तो विज्जाहरेँण । "किं हम्मउ अजगरु असिवरेँण" ॥२॥
परमेसरि पभणइ सव्व-सह । "किं तवसिहिँ जुत्ती पाण-वह ॥३॥
अणवेक्खहिँ तावसहोँ धम्म-विहि । सुह दुहियएँ रक्खिय सील-णिहि ॥४॥
तव-चरणु णिरोसहु वज्जियउ । अजयरहोँ सरीरु समल्लियउ" ॥५॥
सउदासेँ जं तहिँ लक्खियउ । तं सयलु णरिन्दहोँ अक्खियउ ॥६॥
तिहुअणआणन्दु पधाइयउ । कल्लाणइ (?) कन्दन्तु पराइयउ ॥७॥
सयणहुँ उप्पाइउ दाहु पर । जिणु जय भणन्ति सुअणङ्गसर ॥८॥
णिय जेण सो वि तउ करेँवि मुउ । दसरहहोँ पुत्तु सोमित्ति हुउ ॥९॥

घत्ता

एह वि मरेँवि अणङ्गसर उप्पण्ण विसल्ला-सुन्दरि ।
एक्क तहेँ तणेँण जलेँण पर सइँ सुअ भुणन्तु उट्ठइ हरि' ॥१०॥

●

[१२] इतनेमें एक विशाल अजगरने उसका आधा शरीर निगल लिया। सौदास विद्याधरने उससे कहा, "क्या तलवारसे अजगरके दो टुकड़े कर दूँ।" सब कुछ सहन करनेवाली उस परमेश्वरीने कहा, "क्या तपस्वियोंको प्राणिवध उचित है।" पिताजीसे यह कह देना कि तुम्हारी पुत्रीने शीलनिधिकी रक्षा कर ली है। निराहार तपश्चरण कर अजगरको उसने अपना शरीर अर्पित कर दिया है।" सौदास विद्याधरने जो कुछ देखा था, वह सब राजा त्रिभुवनआनन्दको बता दिया। राजा करुण विलाप करता हुआ वहाँ पहुँचा। स्वजनोंको वह सब देखकर बहुत दुःख हुआ। जिन-भगवान्‌की जय बोलकर, अनंगसराने अपने प्राण त्याग दिये। जो विद्याधर उसे उड़ाकर ले गया था, वह भी तपकर, दशरथका पुत्र लक्ष्मण हुआ। यह अनंगसरा भी मरकर विशल्या सुन्दरीके नामसे उत्पन्न हुई। हे राम, उसके शरीरके स्नानजलसे, लक्ष्मण अपनी भुजाएँ ठोकते हुए उठ पड़ेंगे" ॥१-१०॥

●

[६९. एक्कुणसत्तरिमो संधि]

[१]

विज्जाहर-वयण-रसायणेंण   आसासिउ बलहद्दु किह ।
णहें पडिवा-यन्दें दिट्ठएँण   कहि मि ण माइउ उवहि जिह ॥

सरहसेंण परज्जिय-आहवेण ।   सामन्त पजोइय राहवेण ॥१॥
'किं कहों वि अत्थि मणु सहुय अङ्गें । जो एइ अणुट्ठन्तएँ पयङ्गें ॥२॥
जो जणइ मणोरह मज्झु मणासु ।   जो जीविउ देइ जणद्दणासु' ॥३॥
तं वयणु सुणेंवि भड-णन्दणेण ।   वुच्चइ रावण-वण-मद्दणेण ॥४॥
'महु अत्थि देव मणु सहुय-अङ्गें ।   हउँ एमि अणुट्ठन्तएँ पयङ्गें ॥५॥
हउँ जणमि मणोहर तुह मणासु ।   हउँ जीविउ देमि जणद्दणासु' ॥६॥
तारा-णन्दणेण वि वुत्तु एम ।   'हउँ हणुवहों होमि सहाउ देव' ॥७॥
भामण्डलु पभणइ 'सुणु सुसामि । हउँ बिहि उत्तर-दक्खिणउ जामि' ॥८॥

घत्ता

ते जणय-पवण-सुग्गीव-सुय   रामहों चलणेंहिं पडिय किह ।
कल्लाण-कालें तित्थङ्करहों   तिण्णि वि तिहुवण-इन्द जिह ॥९॥

[२]

मारुइ विमाणेंहिं सुन्दरेंहिं ।   अमरेहि व सव्व-सुहङ्करेहिं ॥१॥
सुवण्णेंहिं व णाणाविह-सरेहिं ।   सिव-पयहिं व मुत्तावलि-धरेहिं ॥२॥
कामिणि-मुहेंहिं व वण्णुज्जलेहिं ।   छिण्णङ्ग-सिरेहिं व चञ्चलेहिं ॥३॥
महकइ-कव्वेहिं व सुघडिएहिं ।   सुपुरिस-चरिएहिं व पयडिएहिं ॥४॥

उनहत्तरवीं सन्धि

[१] विद्याधरके वचनरूपी रसायनसे राम इतने अधिक आश्वस्त हुए कि मानो आकाशमें प्रतिपदाका चाँद देखकर समुद्र ही उद्वेलित हो उठा हो। युद्धविजेता रामने हर्षपूर्वक सामन्तोंको काममें नियुक्त कर दिया। उन्होंने कहा, "बताओ किसका मन है, जो अपने शरीरके बलपर सूर्योदयके पहले-पहले आ जाय, जो मेरा मनोरथ पूरा कर सके, और लक्ष्मणको जीवन-दान दे सके।" यह वचन सुनते ही रावणके वनको उजाड़नेवाले हनुमान्‌ने कहा, "हे देव, मेरे शरीरमें मेरा मन है! मैं कहता हूँ कि मैं सूर्योदयके पहले आ जाऊँगा, मैं तुम्हारे मनकी अभिलाषा पूरी करूँगा, और मैं लक्ष्मणको जीवन दान भी दूँगा।" तारापुत्र अंगदने भी यही बात कही कि मैं हनुमान्‌का सहायक बनूँगा। भामण्डल बोला, "हे स्वामी, सुनिए मैं दैवयोग-से उत्तरसाक्षी होकर जाऊँगा।" जनक, पवन और सुग्रीवके बेटे रामके पैरोंपर इस प्रकार गिरे मानो कल्याणके समय तीनों इन्द्र जिन-भगवान्‌के चरणोंमें नत हो रहे हों॥१-९॥

[२] सुन्दर विमानोंमें बैठकर उन्होंने कूच किया। देवताओंकी भाँति वे विमान सबके लिए कल्याणकारी थे। सुन्दरोंकी भाँति उनमें तरह-तरहकी ध्वनियाँ सुनाई दे रही थीं, शिवपदकी भाँति, उनमें मोतियोंकी कई पंक्तियाँ थीं। सुन्दरियोंके मुखकी भाँति उनका रंग एकदम उज्ज्वल था, वेश्याओंके चित्तकी तरह वे चंचल थे, महाकवियोंके काव्यके समान सुगठित थे, सज्जन पुरुषोंकी भाँति स्पष्ट और साफ थे,

सेयामरेहिँ व अलि-मुहलिएहिँ । मइ-चारित्तेहिँ व अखलिएहिँ ॥५॥
णव-जोव्वणेँहिँ व णड्-गोयरेहिँ । जिण-सिरेँहिँ व भामण्डल-धरेहिँ ॥६॥
वयणेहिँ व हणुअ-पसङ्गएहिँ । पाहुणेँहिँ व गमण-मणङ्गएहिँ ॥७॥
थिय तेहिँ विमाणेँहिँ मणिमएहिँ । णं वर-कुल-न्धुय पङ्कएहिँ ॥८॥

घत्ता

मण-गमणेँहिँ गयणेँ पयट्टएहिँ लक्खिउ लवण-समुद्दु किह ।
महि-मडयहोँ णहयल-रक्खसेण फाडिउ जठर-पएसु जिह ॥९॥

[३]

दीसइ रयणायरु रयण-वाहु । विञ्झु व स-वारि कन्दु व स-गाहु ॥१॥
अरथाहु सुहिँ व हत्थि व करालु । मण्डारिउ व्व बहु-रयण-पालु ॥२॥
सुहव-पुरिसो व्व सलोण-सीलु । सुग्गीउ व पयडिय-कुन्दणीलु ॥३॥
जिण-सुव-चक्कवइ व किय-वसेलु । मज्जणु व उप्परेँ चडिय-वेलु ॥४॥
तवसि व परिपालिय-सवय-सारु । दुज्जण-पुरिसो व्व सखार-वारु ॥५॥
णिद्धण-आलावु व अप्पमाणु । जोइसु व मीण-कक्कडय-थाणु ॥६॥
मह-कव्व-णिबन्धु व सद्द-गहिरु । चामीयर-चसय व पीय-महुरु ॥७॥
तं जलणिहि उल्लङ्घन्तएहिँ । बोहित्थइँ दिट्ठइँ जन्तएहिँ ॥८॥
णीसीहियकइँ लक्खिय-हलाइँ । महरिसि-चित्ताइँ व अविचलाइँ ॥९॥

घत्ता

अण्णु वि थोवन्तरु जन्तएँहिँ तिहि मि णिहालिउ गिरि मलउ ।
जो लवलि-वलहोँ चन्दण-सरहोँ दाहिण-पवणहोँ थामलउ ॥१०॥

ब्रह्माके आसनकी भाँति भ्रमरोंसे मुखरित थे, सतियोंके चरित-की भाँति अडिग थे, विद्याधरोंकी भाँति नये यौवनसे युक्त थे, जिन भगवान्‌की श्रीकी भाँति जो भामण्डलसे सहित थे, मुखोंकी तरह भारी-भारी दुड्डीसे युक्त थे, अतिथियोंकी भाँति जानेकी इच्छा रखते थे। वे ऐसे मणिमय विमानोंमें बैठ गये, मानो भ्रमर कमलोंमें जा बैठे हों। मनके समान गति-वाले उन विमानोंके चलनेपर लवण समुद्र इस प्रकार दिखाई दिया मानो आकाशरूपी राक्षसने धरतीके शवको बीचमें-से फाड़ दिया हो ॥१-९॥

[२] उन्हें रत्नाकर दिखाई दिया, रत्न उसकी बाँहें थीं। वह समुद्र विन्ध्याचलकी भाँति सवारि (हाथी पकड़नेके गड्ढों सहित, और सजल), छन्दके समान सगाह (गाथा छन्दसे युक्त, जलचरोंसे युक्त), सज्जनके समान अथाह, जहाजके समान भयंकर, भण्डारीके समान बहुत-से रत्नोंका संरक्षक, सुभग पुरुषकी भाँति सलोण और सुशोल (श्रीसे युक्त), सुग्रीवकी भाँति इन्द्रनीलको प्रकट कर देता है, जिनपुत्र भरत चक्रवर्तीकी भाँति जो वसेलु (संयम धारण करनेवाला और धन धारण करनेवाला) है। मध्याह्नकी भाँति वेला (तट और समय) जिसके ऊपर है। तपस्वीकी भाँति, जो समय (सिद्धान्त और मर्यादा) का पालन करता है। दुर्जन पुरुषकी भाँति जो स्वभावसे खारा है, जो गरीबकी पुकारकी भाँति अप्रमेय है, ज्योतिषकी भाँति, जो मीन और कर्क राशियोंका स्थान है, महाकाव्यकी रचनाकी भाँति जो शब्दोंसे गम्भीर है, सोनेके प्यालेकी भाँति जो पीतमदिर है (समुद्र मन्थनके समय निकली हुई सुरा, जिससे पी ली गयी है)। उस समुद्रको पार कर जाते हुए जहाज, उन्होंने देखे, जिनमें बिना पालके लम्बे मस्तूल थे।

[४]

जहिँ जुवइ-पउल-परज्जियाइँ । रत्तुप्पल-कयलि-वणाइँ थियाइँ ॥१॥
कामिणि-गइ-छाया-भंसियाइँ । जहिँ हंस-उलइँ आवासियाइँ ॥२॥
कर-कमयल-ओहामिय-मणाइँ । जहिँ माउइ कङ्केल्लि-वणाइँ ॥३॥
जहिँ णयण-णयण-पह-धल्लियाइँ । कमलिन्दीवरइँ समल्लियाइँ ॥४॥
जहिँ महुर-वाणि अवहत्थियाइँ । कोइल-कुलाइँ कसणाइँ थियाइँ ॥५॥
भउहावलि-छाया वङ्कियाइँ । जहिँ णिम्ब-दलइँ कडुयइँ कियाइँ ॥६॥
जहिँ चिहुर-भार-ओहामियाइँ । बरहिण-कुलाइँ रोवावियाइँ ॥७॥
तं मलउ मुएँवि विहरन्ति जाव । दाहिण-महुरएँ आसण्ण ताव ॥८॥

घत्ता

किक्किन्ध-महागिरि लक्खियउ तुङ्ग-सिहरु कोङ्कावणउ ।
णं रमियहेँ जुवइ-विलासिणिहेँ उर-पएसु सोहावणउ ॥९॥

[५]

जहिँ इन्दणील-कर-भिज्जमाणु । ससि थाइ जुण्ण-दप्पण-समाणु ॥१॥
जहिँ पउमराय-कर-तेय-पिण्डु । रत्तुप्पल-सण्णिहु होइ चण्डु ॥२॥
जहिँ मरगय-खाणि वि विप्फुरन्ति । ससि-बिम्बु भिसिणि-पत्तु व करन्ति ॥३॥
तं मेल्लेंवि रहसुच्छलिय-गत्त । णिविसद्धें सरि कावेरि पत्त ॥४॥
जा कइय विहङ्गेंवि णरवरेहिँ । महकव्व-कहा इव कइवरेहिँ ॥५॥
सामिय-आणा इव किङ्करेहिँ । तित्थङ्कर-वाणि व गणहरेहिँ ॥६॥

जो महामुनिके चित्तकी भाँति एकदम अडिग थे। थोड़ा और जानेपर, उन्होंने मलय पर्वत देखा। वह मलय पर्वत जो लवली लताओं, चन्दन वृक्षों और दक्षिण पवनका घर है ॥१-१०॥

[४] जिस पर्वतपर, युवतीजनोंके पैरों और जाँघोंको जीतनेवाले रक्तकमल और कदली वृक्ष हैं। सुन्दरियोंकी चाल-का आभास देनेवाले हंसकुल बसे हुए हैं। जिसमें कर और करतलोंका मन नीचा कर देनेवाले मालती और कंकेलीके वृक्ष हैं, जिसमें मुख और नेत्रोंकी आभाको पराजित कर देनेवाले कमल और इन्दीवर एक साथ खिले हुए हैं। जिसमें मीठी बोली-की अवहेलना करनेवाले काले कोयलकुल हैं। जिसमें भौंहोंकी छायासे भी कुटिल और कड़वे नीमके दल हैं। जिसमें बालोंकी शोभाको क्षीण कर देनेवाले मयूरोंके कुल सुन्दर नृत्य कर रहे हैं। उस सुन्दर मलय पर्वतको छोड़कर विहार करते हुए वे लोग दायें मुड़े वहाँ उन्हें किष्किन्धा पर्वतराज दिखाई दिया। कुतूहल उत्पन्न करनेवाले उसके शिखर ऊँचे थे। वह ऐसा लग रहा था मानो रमणशील धरतीरूपी विलासिनीका सुहावना उर-प्रदेश हो ॥१-९॥

[५] जिसमें इन्द्रनील मणिकी किरणोंसे धूमिल चन्द्रमा एक पुराने दर्पणकी भाँति लगता था। और फिर वही चन्द्र पद्मराग मणियोंकी किरणोंसे इतना दीप्त हो उठता था कि रक्त-कमलोंके समान प्रचण्ड दिखाई देने लगता। जहाँ चमकती हुई पन्नोंकी खदान चन्द्रबिम्बको कमलनीका पत्ता बना देती। हर्षसे पुलकित, वे लोग मलयपर्वतको छोड़कर, आधे ही पलमें कावेरी नदीपर पहुँच गये। उन्होंने उस नदीको विभक्तकर, उसी प्रकार पार कर लिया, जिस प्रकार कविवर महाकाव्यकी कथाके दो भाग कर लेते हैं, या जिस प्रकार अनुचर अपने

मिग-सासय-पन्ति व [illegible]डएहिँ । [illegible]-सन्[illegible] उ [illegible]आउएहिँ ॥७॥
पुणु दिट्ठ महाणइ सुक्कमइ । करि-मयर-मच्छ-ओहर-रउद्द ॥८॥

घत्ता

असहन्तें वणदव-पवण-झड दूसह-किरण-दिवायरहों ।
णं सज्झें सुदद्धु विसाहरेंण जीह पसारिय सायरहों ॥९॥

[६]

पुणु दिट्ठ पवाहिणि किण्हवण्ण । किविणत्थ-पउत्ति व मसि-णिसण्ण ॥१॥
पुणु इन्दणील-कण्ठिय-धरेण । दक्खविय समुद्दहों आयरेण ॥२॥
पुणु सरि भीमरहि जलोह-फार । णं सेउण-देसहों अमिय-धार ॥३॥
पुणु गोला-णइ मन्थर-पवाह । सज्झेण पसारिय णाइँ बाह ॥४॥
पुणु वेण्णि-पउण्हिउ वाहिणीउ । णं कुडिल-सहावउ कामिणीउ ॥५॥
पुणु तावि महाणइ सुप्पवाह । सज्जण मेत्ति व अलद्ध-थाह ॥६॥
थोवन्तराइँ पुणु विञ्झु थाइ । सीमन्तउ पिहिमिहेँ तणउ णाइ ॥७॥
पुणु रेवा-णइ हणुवन्तएहिँ । सा णिन्दिय रोस-वसङ्गएहिँ ॥८॥
'किं विञ्झहों पासिउ उवहि खारु । जो स-विसु किविणु अवमन्त-खारु ॥९॥
तं णिसुणेंवि सीय-सहोयरेण । णिब्भच्छिय णहयल-गोयरेण ॥१०॥

घत्ता

जं विञ्झु मुएँवि गय सायरहों मा रूसहों रेवा-णइहेँ ।
णिल्लोणु मुअइ सलोणु सरइ णिय-सहाउ एँउ तियमइहेँ ॥११॥

स्वामीकी आज्ञाको, जिस प्रकार गणधर जिनवरकी वाणीको, जिस प्रकार तार्किक शिव शाश्वतरूपी मोतीको, जिस प्रकार वैयाकरण उत्तमशब्दोंकी उत्पत्तिको तोड़ लेते हैं। फिर उन्हें तुंगभद्रा नामक महानदी मिली, जो हाथियों, मगर-मच्छ और ओहरोंसे अत्यन्त भयानक थी। वह ऐसी लगती थी, मानो संध्या असह्य किरण सूर्यकी सीमान्ती हवाओंको सहन नहीं कर सकी और प्यासके कारण उसने सागरकी ओर अपनी जीभ फैला दी हो ॥१-९॥

[६] धरतीपर बहती हुई काले रंगकी वह नदी ऐसी लगी मानो किसी कंजूसकी उक्ति हो। मानो इन्द्रनीलपर्वतने आदरपूर्वक उसे समुद्रका रास्ता दिखाया हो। अपने जलसमूहके विस्तारके साथ वह नदी घूम रही थी, यह नदी जो सेउण देशके लिए अमृतकी धारा थी। फिर उन्हें गोदावरी नदी दिखाई दी, जो ऐसी लगती थी मानो सन्ध्याने अपनी बाँह फैला दी हो। सेनाओंने उन नदियोंको जब पार कर लिया तो ऐसा लगा मानो किसी आदमीने कुटिल स्वभावकी स्त्रीको अपने वशमें कर लिया हो। उसके बाद वे महानदीके पास पहुँचे, सज्जनके समान जिसकी थाह नहीं ली जा सकती। उससे थोड़ी दूरपर विन्ध्याचल पहाड़ था, मानो धरतीका सीमान्त हो। सहसा क्रुद्ध होकर हनुमान्‌ने रेवा नदीकी निन्दा की और कहा, "विन्ध्याचलकी तुलनामें समुद्र सुन्दर है, वह समुद्र जो विषसहित (जलसहित) है, जो कृपण है और अत्यन्त खारा है।" यह सुनकर आकाशवासी विद्याधर भामण्डल ने कहा, "विन्ध्याचलको छोड़कर, रेवा नदी जो समुद्रके पास आ रही है, इसके लिए उसपर क्रोध करना बेकार है, क्योंकि यह तो स्त्रियोंका स्वभाव होता है कि वे असुन्दरको छोड़कर सुन्दरके पास जाती हैं ॥१-११॥

[७]

सा णम्मय दूरन्तरेण पत्त । पुणु उज्जयणि णिविसेण पत्त ॥१॥
जहिँ जणवउ स-धणु महा-धणो व्व । रामोवरि वच्छलु लक्खणो व्व ॥२॥
गुणवन्तउ धणुहर-सङ्कहो व्व । अमुणिय-कर-सिर-तणु वम्महो व्व ॥३॥
स वि दुम्मलिक्क य उज्जेणि मुक्क । पुणु पारियत्तु मालवउ ढुक्क ॥४॥
जो धण्णालङ्किउ णरवइ व्व । उप्फुल्लउ कुसुमसरु रइवइ व्व ॥५॥
तं मेल्लेँवि जउणा-णइ पवण्ण । जा अलय-अलय-गवलालि-वण्ण ॥६॥
जा कसिण भुअङ्गि व विसहोँ भरिय । कज्जल-रेह व णं धरएँ धरिय ॥७॥
पोमन्तरेँ जल-णिम्मल-तरङ्ग । ससि-सङ्ख-समप्पह दिट्ठ गङ्ग ॥८॥

घत्ता

अम्हहुँ विहिँ गरुयउ कवणु जएँ सुज्जहोँ वि आएं मच्छरेँण ।
हिमवन्तहोँ णं अवहरेँवि णिय धय-वडाय रयणायरेँण ॥९॥

[८]

थोवन्तरेँ तेहिँ वि अउज्झ दिट्ठ । पुणु सिद्धिपुरिहिँ सिद्धि व पइट्ठ ॥१॥
जहिँ मिहुणइँ आरम्भिय-रयाइँ । पङ्खिय इव उच्चाइय-पयाइँ ॥२॥
पाहुण इव अवलम्बण-मणाइँ । गिरिवर-णाला इव रुक्खगाइँ ॥३॥
अविमल-रज्जा इव सु-करणाइँ । रिसिवक्क इव भाव-परायणाइँ ॥४॥

[७] उस नर्मदा नदीको भी, उन्होंने दूरसे छोड़ दिया। वहाँसे वे पलभरमें उज्जैन पहुँच गये। वहाँ जनपद महामेघकी भाँति सघन (धन और धनुष) था जो रामपर लक्ष्मणकी ही भाँति स्नेह रखता था, जो धनुर्धारीके संग्रहके समान गुणोंसे युक्त था, जो कामदेवकी तरह पर (अंग और [illegible]) सिर (अंग और श्री), तनु (शरीर) को कुछ भी नहीं गिनता था। उन्होंने खोटी महिलाकी भाँति, उज्जैन नगरीको भी छोड़ दिया। फिर वे, पारियात्र और मालव जनपद पहुँचे। वह मालव जनपद, राजाकी भाँति,—घन्य (जन और पुण्य) से युक्त था। ईख ही उसका धन था। कामदेवकी भाँति वह कुसुममाला धारण करता था। उसे पार कर, वे यमुनाके किनारे जा पहुँचे, जो आर्द्र मेघोंके समान श्यामरंगकी थी। जो नागिनकी भाँति काली थी, और विष (जल-जहर) से भरी हुई थी, जो ऐसी जान पड़ती थी, मानो धरतीपर खींची गयी काजलकी लकीर हो। उसके थोड़ी ही देर बाद, गंगा नदी उन्हें दीख पड़ी, उसकी तरंगें जलसे एकदम स्वच्छ थीं, चन्द्रमा और शंखके समान जो शुभ्र थी। मानो वह कह रही थी, दोनोंमें, जयसे कौन गौरवान्वित होती है, आओ इसी ईर्ष्यासे लड़ लें। या वह ऐसी लगती थी मानो समुद्र हठपूर्वक हिमालयकी ध्वजा ले जा रहा हो ॥१-९॥

[८] थोड़ी ही देर बाद, उन्हें अयोध्या नगरी दिखाई दी, उन्होंने उस नगरीमें इस प्रकार प्रवेश किया, मानो सिद्धिनगरमें सिद्धिने प्रवेश किया हो। वहाँ जोड़े आपसमें रतिक्रीड़ा कर रहे थे, पथिकोंकी भाँति, उनके पैर ऊँचे थे, अविधिकी भाँति, जो आलिंगन चाह रहा था, गिरिवरके शरीरकी भाँति, जिसमें सब कुछ था, अविचल राज्यकी भाँति, जिसके पास सभी

धणुहर इव गुण-मेल्लिय-सराइँ । अहरत्ता इव पहराउराइँ ॥५॥
पुणु णरवइ मंदिरें गय तुरन्त । मुणि-सुव्वय-जिण-मङ्गलइँ गन्त ॥६॥
सग्गावयारें जम्माभिसेएँ । णिक्खवणें णाणें णिव्वाणच्छएँ ॥७॥
तित्थयर-परम-देवाहँ जाइँ । पञ्च वि कल्लाणइँ होन्ति ताइँ ॥८॥

घत्ता

'महि मन्दरु सायरु जाव णहु जाव दिसउ महणइ-जलइँ ।
तउ होन्तु ताव जिण-केराइँ पुण्ण-पवित्तइँ मङ्गलइँ' ॥९॥

[९]

तं मङ्गल-सद्दें पहु विउद्धु । णं छण-मयलञ्छणु अद्ध-अद्धु ॥१॥
णं उअय-महीहरें तरुण-मित्तु । णं माणस-सरु रवि-किरण-छित्तु ॥२॥
णं वाल-लीलु केसरि-किसोरु । णं सुरवइ सुर-वहु-चित्त-चोरु ॥३॥
उट्ठन्तें बहु-मणि-रयण-चियाइँ । लक्खियइँ विमाणइँ सञ्चियाइँ ॥४॥
णं णहयल-कमलइँ विहसियाइँ । सज्जण-वयणाइँ व पहसियाइँ ॥५॥
णिक्कारणें जाइँ पफुल्लियाइँ । सु-कलत्तइँ णाइँ समल्लियाइँ ॥६॥
णिद्दिट्ठ विमाणें हिँ तेहिँ वीर । सव्वाहरणालङ्किय-सरीर ॥७॥
परिपुच्छिय 'तुम्हइँ पवर केत्थु । किं मायापुरिस पढुक्क एत्थु ॥८॥

घत्ता

हेमन्त-गिम्ह-पाउस-समय किं अवयवें हिँ अलङ्किय ।
किं तिण्णि वि हरि-हर-चउवयण आएँ वेसें अवयरिय' ॥९॥

साधन थे, मुनिकुलकी भाँति जो अंगोंकी ऊँची भूमिकापर पहुँच चुका था। धनुर्धरकी भाँति जो गुण मेल्लितसर, (डोरीसे तीर छोड़ रहा है; जिसके स्वरमें गुण हैं) जो अर्ध-रात्रिकी भाँति, प्रहरों (पहरेदार, अस्त्र) से पूरित है। फिर राजा शीघ्र ही मुनिसुव्रत भगवान्के मंगलोंका गान करते हुए, मन्दिरमें गया। उसने कहा स्वर्गावतारमें, जन्माभिषेकमें, दीक्षाके समय, ज्ञान प्राप्तिमें और निर्वाणकी सिद्धिमें, तीर्थंकरों-के जो पाँच कल्याण होते हैं वे होते रहें। जबतक यह धरती, मन्दराचल, सागर, आकाश, दिशाएँ और महानदियोंका जल है तबतक जिन भगवान्के परमपवित्र पंचकल्याणक होते रहें ॥१-९॥

[१] मंगल शब्दसे राजा सहसा इस प्रकार प्रबुद्ध हो उठा, मानो पूनोका चाँद हो, मानो उदयाचलपर तरुण सूर्य हो, मानो सूर्यकी किरणोंसे विकसित मानस सरोवर हो, मानो किशोरसिंह बाललीला कर रहा हो, मानो सुरबालाओंके चित्त को चुरानेवाला इन्द्र हो। उठते-उठते उसने देखा तरह-तरहके मणिसमूहसे जड़ित विमान आकाशतलमें खचाखच भर गये। वे ऐसे लगते थे, मानो आकाशतलमें कमल खिले हों, वे विमान सज्जनोंके मुखकी भाँति हँसते-से दिखाई देते थे। वे निष्कारण खिले हुए थे, अच्छी स्त्रीकी भाँति, एक-दूसरेसे मिले हुए थे। उन विमानोंमें वीर दिखाई दिये, उनके शरीर सभी तरहके अलंकारोंसे अलंकृत थे। उसने पूछा, "तुम कहाँसे आये, क्या यहाँपर कोई मायापुरुष आ पहुँचा है। हेमन्त, ग्रीष्म और पावस ऋतुओंने अपना एक-एक अंग सजा लिया। लगता था, जैसे विष्णु, शिव और ब्रह्माने इसी रूपमें अवतार लिया हो ॥१-९॥

[१०]

वयणेण तेण भरहहोँ तणेण । बोल्लिज्जइ जणयहोँ णन्दणेण ॥१॥
'हउँ मामण्डलु हणुवन्तु एहु । उहु अङ्गउ रहसुच्छलिय-देहु ॥२॥
तिण्णि वि आइय कज्जेण जेण । सुणु अक्खमि किं बहु-वित्थरेण ॥३॥
सीयहेँ कारणेँ रोसिय-मणाहँ । रणु वट्टइ राहव-रावणाहँ ॥४॥
लक्खणु सत्तिएँ विणिभिण्णु तेत्थु । दुक्करु जीवइ तें आय एत्थु' ॥५॥
तं वयणु सुणेँवि परिपीलियङ्गु । णं कुलिस-समाहउ पडिउ सेलु ॥६॥
णं चवण-कालेँ सग्गहोँ सुरिन्दु । उम्मुच्छिउ कह वि कह वि णरिन्दु ॥७॥
दुक्खाउरु धाहावणहिँ लग्गु । पुण्ण-क्खएँ हरि व मुअन्तु सग्गु ॥८॥

घत्ता

'हा पइँ सोमित्ति मरन्तएँण मरइ णिरुत्तउ दासरहि ।
भत्तार-विहूणिय णारि जिह अज्जु अणाहीहूय महि ॥९॥

[११]

हा भायर एक्कसि देहि वाय । हा पइँ विणु जय-सिरि विहव जाय ॥१॥
हा भायर मइँ सिरेँ पडिउ गयणु । हा हियउ फुट्टु दक्खवहि वयणु ॥२॥
हा भायर वरहिण-महुर-वाणि । मइँ णिवडिओऽसि दाहिणउ पाणि ॥३॥
हा किं समुद्दें जल-णियरु खुट्टु । हा किह दिट्ठु कुम्भ-कडाहु फुट्टु ॥४॥
हा किह सुरवइ लच्छिएँ विमुक्कु । हा किह जमरायहोँ मरणु ढुक्कु ॥५॥
हा किह दिणयरु कर-णियर-चत्तु । हा किह अणङ्गु दोहग्गु पत्तु ॥६॥
हा चञ्चलिहूअउ केम मेरु । हा केम जाउ णिद्धणु कुबेरु ॥७॥

घत्ता

हा णिव्विसु किह धरणिन्दु थिउ णिप्पहु ससि सिहि सीयलउ ।
टलटलिहूईं केम महि केम समीरणु णिच्चलउ ॥८॥

[१०] भरतके ये शब्द सुनकर जनकपुत्र भामण्डलने निवेदन किया, "मैं भामण्डल हूँ। यह हनुमान है, वह रहा अंगद, जिसका शरीर हर्षातिरेकमें उछल रहा है, हम तीनों जिसलिए आपके पास आये हैं उसे आप सुन लीजिए, उसे फैलाकर कहने में क्या लाभ ? सीताके कारण एक-दूसरेपर क्रुद्ध राम और रावण में भयंकर संघर्ष चल रहा है। वहाँ लक्ष्मण शक्तिसे आहत होकर पड़े हैं, और अब उनकी जिन्दगीका बचना कठिन हो गया है।" यह सुनकर वह पीड़ित हो गये, मानो वज्रसे चोट खाकर पर्वत ही टूट पड़ा हो। मानो च्युत होनेके समय स्वर्गसे इन्द्र गिरा हो। बड़ी कठिनाईसे राजा भरतकी मूर्छा दूर हुई। भरत विलाप करने लगे, "हे लक्ष्मण, तुम्हारी मृत्युसे निश्चय ही राम जीवित नहीं रह सकते, और यह धरती भी तुम्हारे बिना वैसे ही अनाथ हो जायगी जैसे बिना पतिके स्त्री ॥१-९॥

[११] "हे भाई, तुम एक बार तो बात करो, तुम्हारे अभावमें विजयश्री विधवा हो गयी। हे भाई, मेरे ऊपर आसमान ही टूट पड़ा है। मेरा हृदय फूटा जा रहा है, तुम अपना मुखड़ा दिखाओ। हे मोर-सी मीठी वाणीवाले मेरे भाई, मेरा तो दायाँ हाथ टूट गया है। अरे आज समुद्रका पानी समाप्त हो गया या कछुएकी मजबूत पीठ ही फूट गयी है। इन्द्र लक्ष्मीसे कैसे वंचित हो गया है, यमराजका अन्त कैसे आ पहुँचा है, सूर्यने अपना किरणजाल कैसे छोड़ दिया है, कामदेव कैसे दुर्भाग्यग्रस्त हो उठा है! अरे, सुमेरु पर्वत कैसे हिल उठा, और कुबेर निर्धन कैसे हो गया! अरे सर्पराज विषविहीन कैसे हो गये। चन्द्रमा कान्तिरहित है और आग ठण्डी है। धरती कैसे डगमगा गयी, हवा कैसे अचल हो गयी ॥१-८॥

[१२]

लब्भइ रयणायरें रयण-खाणि । लब्भइ कोइलु-कुलें महुर-वाणि ॥१॥
लब्भइ चन्दणु गिरि-मलय-सिङ्गें । लब्भइ सुहवत्तणु जुवइ-अङ्गें ॥२॥
लब्भइ धणु धणएँ धरा-पवण्णु । लब्भइ कञ्चण-पव्वएँ सुवण्णु ॥३॥
लब्भइ पेसणें सामिय-पसाउ । लब्भइ किएँ विणएँ जणाणुराउ ॥४॥
लब्भइ सज्जणें गुण-दाण-कित्ति । सिय असिवरें गुरु-कुलें परम तित्ति ॥५॥
लब्भइ ससियरें कलस-रयणु । महकव्व सुहासिउ सुकइ-वयणु ॥६॥
लब्भइ उवयार-मइएँ सु-मित्तु । महएविहिँ विलासिणि-चारु-चित्तु ॥७॥
लब्भइ पर-तीरें महग्घु भण्डु । वर-वेलु-मूलें वेडुज्ज-खण्डु ॥८॥

घत्ता

गएँ मोत्तिउ सिप्पउल दीवें मणि   मइगलहों मज्जु पउरु ।
आयइँ सव्वइँ लब्भन्ति जएँ   णवर ण लब्भइ माइ-वरु' ॥९॥

[१३]

रोवन्तें दसरह-णन्दणेण । आहाविउ सव्वें परियणेण ॥१॥
दुक्खाउरु रोवइ सयलु लोउ । णं चप्पें वि चप्पेंवि भरिउ सोउ ॥२॥
रोवइ भिच्चयणु समुद्द-हत्थु । णं कमल-सण्डु हिम-पवण-घत्थु ॥३॥
रोवइ अन्तेउरु सोय-पुण्णु । णं छिज्जमाणु सउण-उलु रुण्णु ॥४॥
रोवइ अवराइय राम-जणणि । केक्कय दाइय-तरु-मूल-खणणि ॥५॥
रोवइ सुप्पह विच्छाय जाय । रोवइ सुमित्त सोमित्ति-माय ॥६॥
'हा पुत्त पुत्त केत्तहि गओऽसि । किह सत्तिएँ वच्छ-त्थलें हओऽसि ॥७॥
हा पुत्त मरन्तु ण जाइओऽसि । दइवेण केण विच्छोइओऽसि ॥८॥

[१२] रत्नाकरमें रत्नोंकी खान पायी जाती है। कोयल कुल में मीठी बोली मिलती है। मलय पर्वतमें चन्दन मिलता है, युवतियोंके अंगमें सुख मिलता है, कुबेरसे भरतीभर सोना मिलता है, सोनेकी आगसे सुवर्णकी प्राप्ति होती है, सेवासे ही स्वामीका प्रसाद मिलता है, विनय करनेपर ही जनताका प्रेम मिलता है, सज्जन होनेपर ही गुण, दान और यशकी उपलब्धि होती है, असिवरमें श्री, और गुरुकुलमें परम तृप्ति मिलती है। वशीकरणसे स्त्रीरत्न मिलता है, महाकाव्यमें सुभाषित और सुकविवचन मिलते हैं। उपकार करनेकी भावनामें अच्छा मित्र मिलता है, कोमलतासे ही विलासिनीके सुन्दर चित्तको पाया जा सकता है, शत्रुके निकट, महामूल्य संघर्ष मिल सकता है, उत्तम वैदूर्य पर्वतके मूलमें वैदूर्यमणिका खण्ड मिल सकता है। हाथीमें मोती, सिंहलद्वीपमें मणि, वज्रपर्वतसे विशाल वज्र मिल सकता है, विजय मिलनेपर ये सब चीजें प्राप्त की जा सकती हैं, परन्तु अपना सबसे अच्छा भाई नहीं मिल सकता ॥१-९॥

[१३] दशरथ पुत्र भरतके रोनेपर, उसके सब परिजन फूट-फूटकर रोने लगे। दुःखसे भरकर सारे लोग रोने लगे। कण-कण शोकसे भर उठा। समुद्रहृत्त और भृत्यसमूह रोने लगे, मानो हिमपवनसे आहत कमलसमूह हो। शोकसे भरकर समूचा अन्तःपुर रो पड़ा, मानो नष्ट होता हुआ दुःखी शंख-समूह हो। रामकी माता अपराजिता रोने लगी, पतिके वंश वृक्षकी जड़ खोदनेवाली कैकेयी भी रो उठी। कान्तिहीन होकर सुप्रभा रो पड़ी। सौमित्र (लक्ष्मण) की माँ सुमित्रा रो रही थी, "हे बेटे, तुम कहाँ चले गये। शक्तिसे तुम्हारा वक्षस्थल कैसे आहत हो गया है, हे बेटे, मरते समय तुम्हें न देख पायी, हा,

घत्ता

रोवन्तिएँ लक्खण-मायरिएँ सयलु लोउ रोवावियउ।
कारुण्णएँ कव्व-कहाएँ जिह को व ण अंसु मुआवियउ ॥९॥

[१४]

परिहरेँवि सोउ भरहेसरेण। करवालु लइउ दाहिण-करेण ॥१॥
रण-भेरि समाहय दिण्ण सङ्खु। साहणु सण्णद्धु अलद्ध-सङ्खु ॥२॥
रह जोत्तिय किय करि सारि-सज्ज। पक्खरिय तुरङ्गम जय-जसज्ज ॥३॥
सरहसु सण्णज्झइ भरहु जाव। भामण्डलेण विण्णत्तु ताँव ॥४॥
'पइँ गएँण वि सिज्झइ णाहिँ कज्जु। तं करि हरि जीवइ जेण अज्जु ॥५॥
जइ दिण्णु विसल्लहेँ तणउ ण्हवणु। तो अवसहिँ पेसणु ण किउ कवणु' ॥६॥
तं वयणु सुणेप्पिणु भणइ राउ। 'किं सलिलें सइँ जें विसल्ल जाउ' ॥७॥
पट्ठविय महल्ला गय तुरन्त। कउतिकमङ्गलु णिविसेण पत्त ॥८॥

घत्ता

विण्णविउ णवेप्पिणु दोणघणु 'जीविउ देव देहि हरिहेँ।
णीसरउ ससि वच्छत्थलहोँ उग्गेंण विसल्लासुन्दरिहेँ' ॥९॥

[१५]

एत्तडिय वोल्ल पडिवण्ण जाव। केकइ सम्पाइय तहिँ जि ताव ॥१॥
पणवेप्पिणु मायरु वुत्तु तीएँ। 'करेँ गमणु विसल्ला-सुन्दरिएँ ॥२॥
जीवउ लक्खणु दुम्मउ दसासु। पूरन्तु मणोरह राहवासु ॥३॥
आणन्दु पवड्ढउ जाणईहेँ। तणु तारउ दुक्ख-महाणईहेँ ॥४॥
अण्णु वि विसल्ल तहोँ पुव्व-दिण्ण। लग्गउ करयलेँ कहभाव भिण्ण' ॥५॥

किस विधाताने तुमसे बिछोह करा दिया। लक्ष्मणकी माँके रोनेपर समूचा लोक रो पड़ा। भला, करुण काव्यकथा सुनकर किसकी आँखोंसे आँसू नहीं गिरते ॥१-९॥

[१४] भरतने अपना सब दुःख दूर कर दिया। उन्होंने दायें हाथमें तलवार ले ली। रणभेरी बजवा दी, और शंख भी बज उठे। असंख्य सेना तैयार होने लगी। रथ जोत दिये गये, हाथियोंपर पालकी रखी जाने लगी, जय और यशसे युक्त अश्वोंके कवच पहनाये जा रहे थे। इस प्रकार हर्षसे भरकर भरत तैयार हो ही रहे थे कि भामण्डलने उनसे निवेदन किया, "आपके जानेसे भी कोई काम नहीं बनेगा, आप तो ऐसा कीजिए जिससे लक्ष्मण आज ही जीवित हो उठें। यदि आपने विशल्याका स्नानजल दे दिया, तो बताइए कौन-सी सेवा आपने नहीं की"। यह वचन सुनकर भरतने कहा, "स्नान जल तो क्या, स्वयं विशल्या वहाँ जायेगी। उसने मन्त्रियोंको भेज दिया, वे भी तुरन्त वहाँसे चल दिये, और कौतुकमंगलसे पलभरमें पहुँच गये। मन्त्रियोंने प्रणामपूर्वक राजा द्रोणघनसे निवेदन किया, "लक्ष्मणको जीवनदान दें। विशल्याके स्नान-जलसे कुमार लक्ष्मणके वक्षसे शक्ति निकाल दीजिए" ॥१-९॥

[१५] यह बातें हो ही रही थीं कि कैकेयी वहाँ आ पहुँची। प्रणाम करके उसने अपने भाईसे कहा, "विशल्या सुन्दरीको फौरन भेज दो। लक्ष्मणको जीवित कर दो, जिससे वह रावण का वध कर रामके मनोरथ पूरा करनेमें समर्थ हो। जानकीका आनन्द बढ़ सके और वह दुःखकी नदी पार सके। और फिर विशल्या तो उसे पहले ही दी जा चुकी है, सद्भावोंसे भरपूर उसे उसके हाथमें दे दो।" यह वचन सुनकर राजा द्रोणघन

तं वयणु सुणेंवि परितुट्ठु दोणु । 'उट्ठउ णारायणु अजय-भोणु' ॥६॥
पट्ठविय विसल्ल-खणन्तरेण । सहुँ कण्ण-सहासें उत्तरेण ॥७॥
गय जयकारेप्पिणु दोणमेहु । कंकइय पराइय णियय-गेहु ॥८॥

घत्ता

हणुवङ्गय-भामण्डल-भरह दिट्ठ विसल्ला-सुन्दरिएँ ।
णं मज्झ-पएसें पइट्ठियएँ चउ सायरहर वसुन्धरिएँ ॥९॥

[१६]

स वि णयणकडक्खिय सुअणएहिँ । सिय णावइ चउहु मि दिस-गएहिँ ॥१॥
णं पुलइय णव-णीलुप्पलच्छि । ववसाउ करन्तहों कहों ण लच्छि ॥२॥
पुणु पेसाइउ लक्खणु कुमारु । 'संसारहों कइ एक्कउ सारु ॥३॥
जइ जीविउ केम वि कह वि पत्तु । तो भण्णइ 'जसु एहउ कलत्तु' ॥४॥
भामण्डलेण कोक्कावियाउ । लहु णियय-विमाणेँ चडावियाउ ॥५॥
तिण्णि वि संचल्ल णहङ्गणेण । गय कडउ पराइय लक्खणेण ॥६॥
जिह जिह कण्णाउ ढुक्कन्ति ताउ । तिह तिह विमलीहूयउ दिसाउ ॥७॥
रामेण वुत्त 'अच्छउ विहाणु । लहु अप्पउ दरिसमि हरि समाणु' ॥८॥

घत्ता

चीरिउ राहवु रिच्छद्धएँण 'जाणिय विसल्लएँ विमल दिसि ।
किं करमि भडारा दासरहि तिहिँ पहरेंहिँ सम्मवइ णिसि ॥९॥

[१७]

ण विहाणु ण भाणु मणोहरीहेँ । उहु तेउ विसल्ला-सुन्दरीहेँ' ॥१॥
बल-लक्खण वे वि चवन्ति जाव । णीसरिय सरीरहों सत्ति ताव ॥२॥
पुण्णालि णाइँ पर-णरवराउ । णं णवमय विज्जु-महीहराउ ॥३॥

बहुत सन्तुष्ट हुए। उन्होंने कहा, "हे अक्षय तूणीर लक्ष्मण, तुम उठो"। एक ही क्षणमें उसने विशल्या सुन्दरीको भेज दिया, उसके साथ एक हजार कन्याएँ और थीं। राजा द्रोणमेघकी जय बोलकर, कैकेयी अपने घर चली आयी। हनुमान् भरत और भामण्डलको विशल्या सुन्दरीने इस प्रकार देखा, मानो बीचमें स्थित धरतीने चारों समुद्रको देखा हो ॥१-९॥

[१६] अजेय उन लोगोंने विशल्याको देखा, मानो चारों दिग्गजोंने लक्ष्मीको देखा हो। नीलोत्पलके समान आँखोंवाली उसे रोमांच हो आया। उद्यम करनेपर, लक्ष्मी किसे नहीं मिलती। उन्होंने लक्ष्मणकी प्रशंसा की और कहा, "संसारका सार बस यही है, यदि किसी प्रकार लक्ष्मण जीवित हो जायें, तो वह धन्य है, क्योंकि उसकी यह पत्नी है।" तब भामण्डलने उसे पुकारा और शीघ्र ही अपने विमानपर चढ़ा लिया। वे तीनों आकाशमार्गसे चल पड़े। शीघ्र ही वे लंका नगरी पहुँच गये। जैसे-जैसे वह कन्या निकट पहुँच रही थी, वैसे वैसे, दिशाएँ पवित्र होने लगीं। तब रामने कहा, "हे जामवन्त अब सवेरा होना चाहता है, मैं भी लक्ष्मणके समान अपने-आपको जला दूँगा।" तब सुग्रीवने रामको ढाढ़स बँधाते हुए कहा कि ये दिशाएँ तो विशल्याके प्रभावसे निर्मल हुई हैं, "हे आदरणीय राम, अभी यह क्या कह रहे हैं, अभी तो तीन पहर रात बाकी है" ॥१-८॥

[१७] उसने कहा, "न सवेरा है और न सूरज, वह तो सुन्दरी विशल्याका तेज है। राम और जाम्बवानमें जब ये बातें हो ही रही थीं कि इतनेमें लक्ष्मणके शरीरसे शक्ति ऐसे निकली, मानो परमपुरुषके पाससे वेश्या निकली हो, मानो विन्ध्याचल-

णं सइ-माल वर कइवराउ । णं दिव्व वाणि तित्थङ्कराउ ॥४॥
एत्थन्तरें अन्तरें धगधगन्ति । पवणञ्जय-तणएं धरिय जन्ति ॥५॥
णं वेस विसइहुँ णरवरेण । णं पवर महाणइ सायरेण ॥६॥
पचविय वेवन्ति अमोह-सत्ति । 'मं धरें मं धरें मुएँ मुएँ दवत्ति ॥७॥
णउ दुट्ठ-सवत्तिहेँ समुहु थामि । एँहु अच्छउ हउँ णिय-णिलउ जामि ॥८॥

घत्ता

असहन्तिहेँ हियय-विणिग्गयहेँ कवणु एत्थु अवसुन्दरणु ।
सव्वहँ भत्तारें चत्तियहेँ कुल-बहुअहेँ कुलहरु सरणु ॥९॥

[१६]

किं ण सुणिय पइँ महु तणिय सत्ति । हउँ सा णामेणामोह-सत्ति ॥१॥
कइलासुद्धरणेँ भयावणासु । धरणिन्दें दिण्णी रावणासु ॥२॥
सङ्गाम-कालें लक्खणहों मुक्क । हरि-आणएँ विज्जु व गिरिहेँ ढुक्क ॥३॥
असहन्ति विसल्लहें तणउ तेउ । णासमि लग्गी किं करहि खेउ ॥४॥
भायएँ अवरुम्बें वि परम-धीर । अण्णहिँ जम्मन्तरें घोर-वीर ॥५॥
तव-चरणु णिरीसहु चिण्णु तावँ । गय वरिसहुँ सट्ठि सहास जावँ' ॥६॥
हणुवन्तें वुत्तु 'जइ सत्थु देहि । तो मुयमि पडीवी जाइ ण एहि' ॥७॥
विज्जएँ पभणिउ 'लइ दिण्णु दिण्णु । णउ भिण्णमि जिह एवहिँ विभिण्णु' ॥८॥
तं णिसुणेंवि पवण-सुयण मुक्क । विहडप्फड गय णिय-णिलउ ढुक्क ॥९॥
एत्तहें वि ताव सरहस पइट्ठ । स-वलेण वलेण विसल्ल दिट्ठ ॥१०॥

घत्ता

सिउ सन्ति करन्ति हरन्ति दुहु सीयहेँ रामहों लक्खणहों ।
लच्छिएँ ढुक्क भवित्ति जिह लङ्कहें रज्जहों रावणहों ॥११॥

से नर्मदा निकली हो, मानो श्रेष्ठ कविसे शब्दमाला निकली हो, मानो तीर्थंकरसे दिव्य वाणी निकली हो। वह शक्ति, आकाशमें धकधकाती जा ही रही थी कि हनुमान्‌ने उसे ऐसे पकड़ लिया मानो श्रेष्ठ नरने वेश्याको पकड़ लिया हो, मानो समुद्रने विशाल नदीको पकड़ लिया हो। काँपती हुई वह अमोघ शक्ति बोली, "मत पकड़ो, शीघ्र ही नष्ट हो जाओगे। मैं दुष्ट सौतके सम्मुख नहीं रुक सकती, यह रहे, मैं अपने घर जाती हूँ। हृदयसे निकली हुई, मैं यह सब सहन नहीं कर सकती, मुझे पकड़नेसे क्या होगा, पति द्वारा मुक्त सभी कुलवधुओंको अपने कुल घरमें शरण मिलती है ॥१-९॥

[१८]क्या तुम मेरी शक्ति नहीं जानते, मेरा नाम अमोघशक्ति है। कैलास पर्वतके उद्धारके अवसरपर धरणेन्द्रने मुझे भयानक रावणको सौंप दिया था। संग्राम कालमें, मैं लक्ष्मणपर छोड़ी गयी थी। मैं उसके मुखपर उसी प्रकार पहुँची, जिस प्रकार बिजली पहाड़पर पहुँचती है। लेकिन विशल्याका तेज मैं सहन नहीं कर सकी, और नष्ट हो रही हूँ, तुम खेद क्यों करते हो। इसके सहारे, इस और दूसरे जन्मोंमें परमघोर घोर वीरने निराहार साठ हजार वर्षों तक तपश्चरण किया।" तब हनुमान्‌ने कहा, "तुम यह वचन दो, कि वापस नहीं आऊँगी, तो मैं तुम्हें छोड़ता हूँ।" इसपर विद्याने कहा, "लो दिया दिया, अब तक जैसा आहत करती रही हूँ वैसा अब नहीं करूँगी।" यह सुनकर हनुमान्‌ने उसे मुक्त कर दिया। वह भी घबराकर, अपने घर पहुँच गयी। इधर रामने सेना सहित, सहर्ष विशल्याके दर्शन किये। कल्याण और शान्ति करती हुई विशल्यादेवीने राम, लक्ष्मण और सीतादेवीका दुःख दूर कर दिया। वह रावण लंका और उसके राज्यके लिए होनहारके रूपमें वहाँ पहुँची॥१-११॥

[१९]

सव्वङ्गिउ हरि परमेसरीएँ । परिमट्ठु विसल्ला-सुन्दरीएँ ॥१॥
समलहु सुअन्धेँ चन्दणेण । रामहोँ वि समप्पिउ लक्खणेण ॥२॥
तेण वि पट्ठविउ कइद्धयाहँ । जम्बव-सुग्गीवङ्गङ्गयाहँ ॥३॥
भामण्डल-हणुव-विराहियाहँ । णल-णीलहँ हरिस-पसाहियाहँ ॥४॥
गय-गवय-गवक्खाणुद्धराहँ । कुन्देन्दु-मइन्द-वसुन्धराहँ ॥५॥
अवरह मि चिन्ध-उवलक्खियाहँ । सामन्तहँ रावण-पक्खियाहँ ॥६॥
केसरिणियम्ब-सुय-सारणाहँ । रविकण्णेन्दइ-घणवाहणाहँ ॥७॥
जमघण्ट-जमाण[ण]-जममुहाहँ । धूमक्ख-दुराणण-दुम्मुहाहँ ॥८॥

घत्ता

अवरह मि असेसहुँ णरवइहुँ दिण्णु विहज्जेँवि गन्ध-जलु ।
अप्पाणऍ जाउ सुवण्णमउ सयलु वि रामहोँ तणउ बलु ॥९॥

[२०]

जं राम-सेण्णु णिम्मल-जलेण । संजीविउ संजीवणि-बलेण ॥१॥
तं वीरेँहिँ घोर-पसाहिएहिँ । वग्गन्तेँहिँ पुलय-पसाहिएहिँ ॥२॥
वज्जन्तेँहिँ पडहेँहिँ मद्दलेहिँ । णिच्चन्तेँहिँ धवलेँहिँ मङ्गलेहिँ ॥३॥
णच्चन्तेँहिँ सुणय-भामणेहिँ । जसु-रियउ पढन्तेँहिँ बम्भणेहिँ ॥४॥
गायन्तेँहिँ अहिणव-गायणेहिँ । वायन्तेँहिँ वीणा-वायणेहिँ ॥५॥
सव्वेँहिँ उण्णाविउ भणन्तु । उट्ठिउ 'केत्तहेँ रावणु' भणन्तु ॥६॥
विहसेप्पिणु उच्चइ हलहरेण । 'किं खलेँण गविट्ठेँ णिसियरेण ॥७॥
ता दुद्दम-दणु-णिद्दलण-दप्प । उव घयणु विसल्लहेँ तणउ बप्प ॥८॥
जमसुहहोँ जाएँ णीसारिओऽसि । लद्धहेँ विणासु पइसारिओऽसि' ॥९॥

घत्ता

तं णिसुणेँवि जोइय लक्खणेँण लक्खण-मयणाअल्लियउ ।
णं पढमऍ ससिऍ परिहरिउ । पुणु अण्णेक्कऍ सल्लियउ ॥१०॥

[१९] परमेश्वरी विशल्या सुन्दरीके सुगन्धित चन्दनसे लक्ष्मणकी पूरी देहको मल दिया गया, और उसी समय वह चन्दन रामको भी दिया गया। रामने उसे कपिध्वजियोंके पास भेज दिया। जाम्बवान्, सुग्रीव, अंग, अंगद, भामण्डल, हनुमान्, विराधित, नल, नील, हरीश, प्रसाधित, गय, गवय, गवाक्ष, अनुद्धर, कुन्द, इन्दु, मृगेन्दु, वसुन्धरा और भी दूसरे-दूसरे निशानवाले रावण पक्षके सामन्तों, जैसे केशरी, नितम्ब, सुत, सारण, रवि, कर्ण, इन्द्रजीत, मेघवाहन, यमघण्ट, यमानन, यममुख, धूम्राक्ष, दुरानन और दुर्मुख आदिको भी वह चन्दन दिया गया। और भी दूसरे राजाओंको वह गन्धजल बाँटकर दिया गया। इस प्रकार शीघ्र ही, रामकी समस्त सेना फिरसे नयी हो गयी ॥१–६॥

[२०] रामकी सेना, संजीवनीके बल और उस पवित्र जल-से जब जीवित हो उठी तो उसमें नयी हलचल मच गयी। वीररससे अधिष्ठित, वीर योद्धा पुलकित होकर उछल रहे थे, पटह, मृदंग बज रहे थे। धवल और मंगल-गीत गाये जा रहे थे। कुब्जक और बौने नाच रहे थे। ब्राह्मण यजुर्वेद पढ़ रहे थे। अभिनव गायन हो रहा था, वीणावादक वीणा बजा रहे थे, सबकी एक साथ आँख खुल गयी, वे एक स्वरसे चिल्ला उठे, "रावण कहाँ है"। तब रामने हँसकर कहा, "दुष्ट गर्वीले निशाचर से क्या?" इसी बीच, दुर्दम राक्षसोंका विनाश करने में समर्थ, विशल्याका प्रिय लक्ष्मण यमके मुखसे निकाल लिया गया, और लंकाके विनाशका द्वार खुल गया। यह सुनते ही लक्ष्मणने उसकी ओर देखा। वह शीघ्र कामसे आहत हो उठा। मानो वह एक शक्तिसे मुक्त हुआ था, और अब अनेक शक्तियोंने उसे घेर लिया हो ॥१–१०॥

[२१]

तं कण्ण णिएँवि हरिसिय-मणासु । उप्पण्ण भन्ति णारायणासु ॥१॥
'किं चलण-सरोरुहइँ कोमलाइँ । णं णं अहिणव-रत्तुप्पलाइँ ॥२॥
किं ऊरु परोप्परु भिण्ण-तेय । णं णं णव-रम्भा-खम्भ एय ॥३॥
किं कणय-दोरु घोलइ विसालु । णं णं अहि रयण-णिहाण-पालु ॥४॥
किं तिवलिउ अङ्गेँ पभावियाउ । णं णं कामउरिहेँ खाइयाउ ॥५॥
किं रोमावलि घण कसण एह । णं णं मयणाणल-धूम-रेह ॥६॥
किं णव-थण णं णं कणय-कलस । किं कर णं णं पारोह-सरिस ॥७॥
किं आयम्बिर कर-यल चलन्ति । णं णं असोय-पल्लव ललन्ति ॥८॥
किं आणणु णं णं चन्द-बिम्बु । किं अहरउ णं णं पक्क-बिम्बु ॥९॥
किं दसणावलिउ स-सुत्तियाउ । णं णं मोत्तिय-कन्तियउ हुमाउ ॥१०॥
किं गण्डवास णं दन्ति-दाण । किं लोयण णं णं काम-बाण ॥११॥
किं भउह दूमाउ परिट्ठियाउ । णं णं वम्मह-धणुलट्ठियाउ ॥१२॥
किं कण्ण कुण्डलाहरण एय । णं णं रवि-ससि विप्फुरिय-तेय ॥१३॥
किं भालउ णं णं ससहरद्धु । किं सिरु णं णं अलि-उल-णिबद्धु' ॥१४॥

घत्ता

जाणेविणु सव्वेंहिं राणएँहिं रूवासत्तउ महुमहणु ।
विण्णत्तु किय अञ्जलि-हत्थएँहिं 'करें कुमार पाणि-ग्गहणु' ॥१५॥

[२२]

ता अम्बयन्तेँ पभणिउ कुमारु । 'फग्गुण-पञ्चमि तहिं सुक्क-वारु ॥१॥
उत्तर-आसाढउ सिद्धि-जोगु । अण्णु वि वट्टइ थिरु कुम्भ-लग्गु ॥२॥
एयारसमउ गह-चक्कु अज्जु । स-मणोहरु सयलु विवाह-कज्जु ॥३॥

[२१] उस कन्याको देखकर प्रसन्न लक्ष्मणको भ्रान्ति होने लगी। उन्हें लगा, क्या ये उसके कोमल चरणतल हैं, नहीं-नहीं, नये-नये लाल कमल हैं, क्या एक-दूसरेको दीप्त करनेवाली उसकी जाँघें हैं, नहीं-नहीं ये तो कदली वृक्षके नये खम्भे हैं, क्या यह सोनेकी डोर झूल रही है, नहीं-नहीं यह तो रत्नोंके खजानेको रखनेवाला साँप है, क्या ये पेटपर तीन रेखाएँ हैं, नहीं-नहीं ये तो कामदेवकी नगरीकी खाइयाँ हैं, क्या यह सघन और काली रोमावली है, नहीं-नहीं कामदेवकी आगकी धूम्ररेखा है। क्या ये नये स्तन हैं, नहीं-नहीं ये सोनेके कलश हैं, क्या ये हाथ हैं, नहीं-नहीं ये तो नये अंकुर हैं, क्या ये लाल-लाल हथेलियाँ चल रही हैं, नहीं-नहीं, ये तो अशोक दल चल रहे हैं, क्या यह मुख है, नहीं-नहीं यह चन्द्रबिम्ब है, क्या ये अधर हैं, नहीं-नहीं ये तो पके हुए बिम्बफल हैं, क्या ये मोतियों सहित दशनावलि है, नहीं-नहीं ये तो मालतीकी नयी कलियाँ हैं, क्या ये कपोलकी सुवास है, नहीं-नहीं, यह हाथीका मदजल है। क्या ये नेत्र हैं, नहीं-नहीं, ये काम बाण हैं, क्यों ये भौंहें प्रतिष्ठित हैं, नहीं-नहीं, यह तो कामदेव का धनुष है, क्या ये कानमें कुण्डल गहने हैं, नहीं-नहीं, चमकते हुए सूर्य-चन्द्र हैं, क्या यह भाल है, नहीं-नहीं यह आधा चाँद है। क्या यह सिर है, नहीं-नहीं, यह तो भौंरोंका कुल बाँध दिया गया है। उपस्थित सब राजा जान गये कि लक्ष्मण इस समय रूपमें आसक्त हैं। उन्होंने हाथ जोड़कर प्रार्थना की, हे कुमार, पाणिग्रहण कर लीजिए ॥१-१५॥

[२२] इस अवसरपर जाम्बवन्तने कुमारसे कहा, "फागुन पंचमी शुक्रवारका दिन है। उत्तराषाढ़ है, सिद्धिका योग है, और भी यह कुम्भ लग्न है। ग्यारहवाँ ग्रहचक्र है, आज

आरोग्गिउ सम्पय रिद्धि विद्धि । अइरेण होइ सङ्गाम-सिद्धि ॥४॥
आएसें अवसरें परिपेसि देव । सिज्झहु सुरवर-मिहुणइँ जेव ॥५॥
तं सुणेंवि सुमित्तिहेँ णन्दणेण । किउ पाणि-ग्गहणु जणद्दणेण ॥६॥
दहि-अक्खय-कलसहिँ दप्पणेहिँ । छवि-मण्डव-वेइय-अक्खणेहिँ ॥७॥
रङ्गावलि-हरियन्दण-छडेहिँ । कल्यइ स-चिरण-चन्दिण-ण्डेहिँ ॥८॥

घत्ता

उच्छाहेँहिँ धवलेंहिँ मङ्गलेंहिँ सङ्खेहिँ तूरेंहिँ अइहवेँहिँ ।
सहुँ भूसेंवि साहुक्कारियउ णरवइ-सएहिँ(?) किय-उच्छवेँहिँ ॥९॥

विवाहका काम सुन्दर और अच्छा है। इससे स्वास्थ्य, ऋद्धि, वृद्धि और शीघ्र ही संग्राममें सफलता मिलेगी। इस अवसर-पर, हे देव, आप पाणिग्रहण कर लीजिए, और देव-मिथुनोंकी भाँति प्रेमक्रीड़ा कीजिए।' यह सुनकर कुमार लक्ष्मणने विशल्याका पाणिग्रहण कर लिया। दही, अक्षतके कलश, दर्पण, हविमण्डप, यज्ञवेदी, राँगोली, लालचन्दनका छिड़काव और विप्र, बन्दीजनोंके जयवचनों और नटोंके मनोरंजनके साथ विवाह सम्पन्न हो गया। उत्साह, धवल मंगलगीतों, अत्याहत तूर्यों और शंखों, और उत्सवोंके साथ राजाओंने स्वयं इस अवसरपर अपना-अपना साधुवाद दिया॥१-९॥

[७०. सत्तरिमो संधि]

उज्जीवियएँ कुमारेँ किएँ पाणि-ग्गहणेँ सयाणए ।
तूरहँ सद्दु सुणेवि सूलेण व भिण्णु दसाणणु ॥

[१]

॥ दुवई ॥ चन्द-विहङ्गमे समुड्डावियए (गय-) अन्धार-महुयरे ।
तारा कुसुम-णियरेँ परिगलिएँ मोडिए रयणि-तरुवरे ॥१॥

परिभमन्तेँ पच्चूस-मइगलेँ । तरुण-दिवायर-मेण्ठ-वलग्गएँ ॥२॥
ताव पराजिय-सुर-सङ्घायहोँ । केण वि कहिउ दसाणण-रायहोँ ॥३॥
'अहोँ अहोँ देव देव जग-केसरि । आइय का वि विसल्ला-सुन्दरि ॥४॥
ताएँ जणद्दणु पच्चुज्जीविउ । णं विस-धारहिँ सिहि संदीविउ' ॥५॥
तं णिसुणेवि कल-कोइल-वाणी । चिन्ताविय मन्दोयरि राणी ॥६॥
'अज्ज वि बुद्धि ण थाइ अयाणहोँ । केवलि-भासिउ ढुक्कु पमाणहोँ' ॥७॥
एम विसण्णेँ अमराहावणु । पुणु सब्भावेँ पभणिउ रावणु ॥८॥
'जे मुआ वि जीवन्ति खणे खणेँ । दुज्जय हरि-बल होन्ति रणङ्गणेँ ॥९॥

घत्ता

देहि दसाणण सीय अज्ज वि लङ्काउरि णिज्जउ ।
तोयदवाहण-वंसु मं राम-दवग्गिएँ डज्झउ ॥१०॥

[२]

॥ दुवई ॥ इन्दइ भाणुकण्णु घणवाहणु बन्धाविय अकज्जेँण ।
सयण-विहूणएण किं किज्जइ एवहिँ राय रज्जेँण ॥१॥

सत्तरवीं सन्धि

कुमारके जीवित होने, पाणिग्रहण और तूर्योंका भयंकर शब्द सुनकर रावण इतना आहत हुआ मानो उसे शूल लग गया हो।

[१] सवेरे चन्द्रमारूपी पक्षी उड़ गया, और अन्धकाररूपी मधुकर चला गया। रात्रिरूपी पेड़के नष्ट होनेपर ताारूपी फूल भी झड़ गये। प्रत्यूष (प्रातःकाल) रूपी महान गज के भ्रमणशील होने पर तरुण सूर्यरूपी महावत ने आरोहण किया। तब देवसमूहको नष्ट करनेवाले रावणको किसीने जाकर बताया, "हे जगत्सिंह देव-देव, विशल्या नाम की कोई सुन्दरी आयी हुई है, उसने लक्ष्मण को प्राणदान कर दिया है।" यह सुनकर वह ऐसा भड़का मानो घृतधाराओंसे आग ही भड़क उठी हो। यह सुनकर कोमलवाणी रानी मन्दोदरी भी चिन्तामें पड़ गयी। वह मन ही मन सोचने लगी कि इस अज्ञानीकी बुद्धि आज भी ठिकाने नहीं है, लगता है अब केवली भगवान्का कहा हुआ सच होना चाहता है। काफी सोच विचारके बाद उसने देवताओंको सतानेवाले रावणसे अत्यन्त सद्भावनाके स्वर में कहा, "यदि मरे हुए भी लोग, इस प्रकार एक क्षणके बाद, दूसरे क्षणमें जिन्दा होते चले गये तो युद्धमें लक्ष्मणकी सेना अजेय हो जायेगी। कुछ अपनी लंकाका विचार करो। सीता देवीको आज ही वापस कर दो। तोयदवाहनके महान् वंशको इस प्रकार रामके दावानलमें मत फूँको।" ॥१-१०॥

[२] "तुमने इन्द्रजीत, भानुकर्ण और मेघवाहनको बन्धनमें डलवा दिया, और हे राजन्, स्वजनोंसे विहीन राज्य लेकर

किं उट्ठिउ णिप्पक्खु विहङ्गमु । किं णिव्विसु संचल्लउ भुअङ्गमु ॥२॥
किं वा तवइ णित्तेउ दिवायरु । किं णिज्जलु उच्छलइ रयायरु ॥३॥
गय-विसाणु किं गज्जइ कुञ्जरु । किं करेइ हरि हय-णह-पञ्जरु ॥४॥
किं विप्फुरइ चन्दु गह-गहियउ । किं पज्जलइ जलणु जल-सहियउ ॥५॥
किं छज्जइ तरु पाडिय-डालउ । किं सिज्झइ रिसि वयहँ अ-पालउ ॥६॥
किं करेहि तुहुँ सुट्ठु वि मल्लउ । बन्धव-सयण-हीणु एक्केल्लउ ॥७॥
तो वरि बुद्धि महारी किज्जइ । अज्ज वि एह णारि अप्पिज्जइ ॥८॥
उव्वेसहेंवि जन्तु हरि-राहव । मेलिज्जन्तु तुहारा बन्धव ॥९॥

घत्ता

अज्ज वि एउ स रज्जु रह-हय-गय-धय-दरिसावणु ।
ते जेँ सहोयर सव्व तुहुँ सो जेँ पडीवउ रावणु' ॥१०॥

[३]

॥ दुवई ॥ मन्दोयरि-विणिग्गयालाव पसंसिय सयल-मन्तिहिं ।
केयइ-कुसुम-गन्ध परिचुम्बिय णावइ भमर-पन्तिहिं ॥१॥

बाल-जुवाण-वुड्ढ-सामन्तेंहिँ । सव्वेंहि 'जय जय देवि' भणन्तेंहिँ ॥२॥
किय-कर-मउलि-पणमिय-सिर-कमलेंहिँ पुज्जिउ तं जि वयणु मइ-विमलेंहिँ ॥३॥
'चङ्गउ माएँ माएँ पइँ वुत्तउ । अत्थसत्थेँ एउ वि सु-णिरुत्तउ ॥४॥
अकुसलु कुसलेंहिँ ण जुज्जेवउ । राएं रज्ज-कज्जु वुज्झेवउ ॥५॥
पर-बलु पवरु णिएँवि वञ्चेवउ । अहवइ थोवउ तो जुज्झेवउ ॥६॥
समु साहणु सरिसउ जि समप्पउ । अवरु पवरु पर-चक्किउ चप्पइ ॥७॥
तं कज्जेँ जाणेवउ अवसरु । सुद्दपाए वि सङ्गामु असुन्दरु ॥८॥

क्या करोगे। क्या बिना पंखोंके पक्षी उड़ सकता है, क्या विषविहीन साँप काट सकता है, क्या तेजसे हीन होकर सूर्य तप सकता है, क्या बिना जल के समुद्र उछल सकता है, खींसोंसे हीन हाथी क्या गरज सकता है? राहुसे ग्रस्त होनेपर, क्या चन्द्रमा प्रकाश दे सकता है, क्या जल सहित आग जल सकती है, डाल के कट जानेपर क्या पेड़ छाया कर सकता है, क्या व्रतोंका पालन न कर मुनि सिद्ध हो सकते हैं? अच्छी तरह रहकर भी तुम स्वजनों के बिना अकेले क्या करोगे? इसलिए मेरी बुद्धिके अनुसार आज भी सीताको वापस कर दो। राम-लक्ष्मण वापस चले जायेंगे, तुम्हारे भाई-बन्धु छूट जायेंगे। तुम्हारा वह राज्य आज भी बच सकता है, रथ, अश्व, गज और ध्वज भी बच जायेंगे, और ये तुम्हारे भाई-बन्धु भी तुम्हारे सामने रहेंगे' ॥१-१८॥

[३] मन्दोदरीके मुखसे जो भी शब्द निकले, सभी मन्त्रियों ने उसकी उसी प्रकार प्रशंसा की जिस प्रकार भौंरे केतकीको चूम लेते हैं। आबाल-वृद्ध जनसमूह और सभी सामन्तोंने 'जय देवी, जय देवी!' कहकर उसकी सराहना की। विमलमति वृद्ध मन्त्रियोंने भी हाथ जोड़कर और झुककर, उसके वचनोंको सम्मान दिया। उन्होंने कहा, "हे आदरणीये, आपने बिलकुल ठीक कहा है। राजनीति शास्त्र भी इसी बातका निरूपण करता है। वास्तवमें अकुशल लोगोंको कुशल लोगोंसे नहीं लड़ना चाहिए। राजाको अपने शासनमें पूरी दिलचस्पी लेनी चाहिए। शत्रुसेनाको बलशाली देखकर, उससे दूर रहना चाहिए। यदि सेना कम (थोड़ी) हो तो युद्ध कर लेना चाहिए, अगर सेना बड़ी है तो समर्पण कर देना ठीक है; क्योंकि बड़ा राजा छोटे राजाको दबा देता है। इसलिए अव-

करेँवि पयत्तु तन्तु रक्खेव्वउ । मण्डल-कज्जु पुणु लक्खेव्वउ ॥९॥

॥ घत्ता ॥

जं उव्वरियउ किं पि तं सेयणु जाव णावट्टइ ।
ताव समप्पहि मोक्ख एँहु सन्धिहेँ अवसरु वट्टइ' ॥१०॥

[४]

॥ दुवई ॥ तं परमत्थ-वयणु णिसुणेप्पिणु दहवयणेण चिन्तियं ।
'वरि मेहलि ण-हूणण णाउ पुज्जिउ मन्तिहिँ जणउ मन्तियं ॥१॥
पच्चासण्णेँ परिट्ठिएँ पर-बलेँ । अमरोप्पम आयणिय-कलयलेँ ॥२॥
कवणु एत्थु किर सन्धिहेँ अवसरु । उत्तिम-पुरिसहोँ मरणु जेँ सुन्दरु ॥३॥
सम्बु-कुमार-णिहणेँ खर-आहवेँ । चन्दणहिहेँ कुमार-पराहवेँ ॥४॥
आसाली-विणासेँ वण-मद्दणेँ । किङ्कर-अक्ख-रक्ख-कडमद्दणेँ ॥५॥
मन्दिर-भग्गेँ विहीसण-णिग्गमेँ । अङ्गएँ दूएँ उवहि-बन्ध-सम्मेँ ॥६॥
हत्थ-पहत्थ-णील-णल-विग्गहेँ । इन्दइ-भाणुकण्ण-बन्दिग्गहेँ ॥७॥
तहिँ जि कालेँ जं ण किउ णिवारिउ तं किं एवहिँ थाइ णिवारिउ ॥८॥
तो इ तुहारी इच्छ ण भञ्जमि । माणिणि एहु सन्धि पडिवज्जमि ॥९॥

घत्ता

जइ उव्वेढइ रामु णिहि-रयणइँ रज्जु लएप्पिणु ।
पइँ मइँ सोयाएवि तिण्णि वि बाहिरइँ करेप्पिणु' ॥१०॥

सरको नाप-तौलकर ही कोई कदम उठाना उचित होगा। सज्जन लोगोंके साथ लड़ना भी ठीक नहीं। अब प्रयत्नपूर्वक अपने तन्त्रको बचाइए। अर्थशास्त्रमें पृथ्वीमण्डलके ये ही कार्य निरूपित हैं। तुम्हारा उद्धार तभीतक किसी प्रकार हो सकता है, जबतक सेना नहीं आती। तबतक सीता सौंप दीजिए, सन्धिका सबसे सुन्दर अवसर यही है ॥१-१०॥

[४] मन्त्रिवृद्धोंके कल्याणकारी वचन सुनकर रावण अपने मनमें सोचने लगा कि यह मैंने अच्छा ही किया जो सीता वापस नहीं की, और न ही मन्त्रियोंकी मन्त्रणा मानी। शत्रु-सेना एकदम निकट आ चुकी है। एक-दूसरेका कोलाहल सुनाई दे रहा है, ऐसे अवसरपर सन्धिकी बात क्या अच्छी हो सकती है ? ऐसी सन्धिसे तो आदमीका मर जाना अच्छा है। शम्बुकुमार मौतके घाट उतार दिया गया, खर आहत पड़ा है, चन्द्रनखा और कूबारकी बेइज्जती हुई। आशाली विद्या नष्ट हो गयी। नन्दन वन उजड़ गया, अनुचर और वनरक्षक भी धराशायी हुए। आवास नष्ट हुआ। भाई विभीषण चला गया। अंगद दूत बनकर आया और चला गया, दोनों ओरकी सेनाएँ युद्धके लिए तत्पर हैं। हस्त और प्रहस्तका नल-नीलसे विग्रह हो चुका है। इन्द्रजीत और भानुकर्ण बन्दीघरमें हैं। तब तो मैंने इन सब बातोंका प्रतिकार किया नहीं, और अब मैं एकदम निराकुल बैठ जाना चाहता हूँ। फिर भी हे मानिनि, मैं तुम्हारी इच्छाका अपमान नहीं करना चाहता। मैं सन्धि कर सकता हूँ, उसकी शर्त यह है। राम राज्य, रत्न और कोष मुझसे ले लें। और बदलेमें, मुझे तुम्हें और सीता देवीको बाहर कर दें। (मैं सन्धि करनेको प्रस्तुत हूँ) ॥१-१०॥

[५]

।। दुवई ।। तं णिसुणेवि वयणु दहवयणहों णरवइ के वि जम्पिया ।
'एक्काए महिलाएँ किं को वि ण इच्छइ महि समप्पिया' ।।१।।

के वि पवसन्ति मन्ति परमत्थें । 'सप्पुरिसहँ एउ काइँ णि आएँ ।।२।।
छड्डु जें एक्कु पाडहहों मच्चणु । पुत्तु कलत्तु मित्तु ओमच्चणु' ।।३।।
पभणइ मन्दोवरि 'को जाणइ । जइ महि लेइ समप्पइ जाणइ ।।४।।
तो सामन्तउ दूउ विसज्जहि । सयलु वि देइ सन्धि पडिवज्जहि ।।५।।
जइ रामणु जें मरइ सहुँ सयणेंहिँ' तो किर काइँ तेहिँ णिहि-रयणेंहिँ ।।६।।
एम भणेंवि पेसिउ सामन्तउ । जो सो परिमियत्थ-गुणवन्तउ ।।७।।
चडिउ महारहें हय कस-ताडिय । महि खुप्पन्तेंहिँ चक्केंहिँ फाडिय ।।८।।
णिय-णिसियर-बलेण परियरियउ । वीयउ रावणु णं णीसरियउ ।।९।।

घत्ता

दूआगमणु णिएवि थिउ कइ-बलु उक्खय-पहरणु ।
किण्ण पडीवउ आउ सरहसु सग्गहों वि दसाणणु ।।१०।।

[६]

।। दुवई ।। जम्पइ जम्बवन्तु 'फउ रावणु रावण-दूउ होसए' ।
ए आलाव जाव ताणन्तरें सो जें तहिँ पईसए ।।१।।

तहिँ पइसन्तें दहमुह-दूएं । दिट्ठु सेण्णु आसण्णाहूएं ।।२।।
किङ्कर-कर-अप्फालिय-तूरउ । गोसाथासु व उत्थिय-सूरउ ।।३।।
महरिसि-बिम्बु व धम्म-परायणु । पङ्कय-वणु व सिलीमुह-भायणु ।।४।।
कामिणि-वयणु व फालिय-णेत्तउ । महकइ-कव्वु व लक्खण-वन्तउ ।।५।।

[५] रावणका वचन सुनकर एक सामन्त राजाने कहा, "अरे कौन ऐसा होगा, जो एक स्त्रीके बदलेमें धरती स्वीकार नहीं करेगा"। तब एक और मन्त्रीने अधिक वास्तविकताके साथ कहा, "अपमानसे मिले धनसे क्या होगा, शील ही सेवकका एकमात्र अलंकार है। पुत्र, स्त्री और मित्र ये सब निरलंकार हैं।" तब मन्दोदरीने कहा, "कौन जान सकता है कि राम धरती लेकर, जानकी दे देंगे"। तब तुम सामन्तक दूतको भेजकर, सब कुछ देकर सन्धि कर लो। यदि रावण स्वजनोंके साथ युद्धमें मारा गया, तो फिर रत्नों और निधियों का क्या होगा ?" यह कहकर, सामन्तक दूतको भेज दिया गया, वह दूत मितार्थ और गुणवान था। वह महारथमें बैठ गया, अश्व कोड़ोंसे आहत हो उठे और उनके गड़ते हुए चक्के धरतीको फाड़ने लगे। ऐसा जान पड़ता था कि अपनी निशाचर सेनाके साथ, दूसरा रावण ही जा रहा हो। दूतके आगमनको देखकर वानर सेनाने अपने हथियार उठा लिये। उसने सोचा, "कहीं ऐसा तो नहीं है कि रावण ही सन्नद्ध होकर आ गया हो" ॥१–१०॥

[६] तब जाम्बवन्तने कहा, "जान पड़ता है कि यह रावण नहीं वरन् उसका दूत है।" उनमें ये बातें हो ही रही थीं कि दूत ने सहसा प्रवेश किया। प्रवेशके अनन्तर दूतने देखा कि सेना पूरी तरह सन्नद्ध है। अनुचरों द्वारा बजाया गया तूर्य ऐसा लगता था मानो सवेरे-सवेरे सूर्योदय हो रहा हो। वह सेना, महामुनिकी भाँति धर्मपरायण (धनुष और धर्मसे युक्त) थी, कमल वनके समान शिलीमुखों (बाणों और भ्रमरों) से युक्त थी, कामिनीके मुखकी तरह, आँखोंको फाड़-फाड़कर देख रही थी, महाकविके काव्यकी तरह लक्षण (काव्य, नियम और

मीण-उलु व दहवयणासङ्किउ । णव-कन्दुट्टु व गोल-गलङ्किउ ॥६॥
णन्दण-वणु व कुन्द-चन्दारउ । णिसि-णहयलु व स-इन्दु स-तारउ ॥७॥
पुणु अत्थाणु दिट्ठु उवसयणउ । सायर-महणु व पयडिय-रयणउ ॥८॥
खय-रवि-बिम्बु व वड्डिय-तेयउ । सइ-चित्तु व पर-णर-दुब्भेयउ ॥९॥

घत्ता

लक्खिय लक्खण-राम सव्वाहरणालङ्करिया ।
सग्गहों इन्द-पडिन्द बे वि णाइँ तहिँ अवयरिया ॥१०॥

[७]

॥ दुवई ॥ तेहिँ वि वासुएव-बलएवहिँ पइसरिसिएहिँ तक्खणे ।
हक्कारेवि पासु सम्माणेंवि । वइसारिउ वरासणे ॥१॥

किय-विणएण कियत्थीहूएं । तासु पजम्पिउ दहमुह-दूएं ॥२॥
'अहों अहों राम राम रामा-पिय । सुरवर-समर-सएहिँ अकम्पिय ॥३॥
अहों अहों सयल-पिहिमि-परिपालण । मायासुग्गीवन्त-णिहालण ॥४॥
अहों अहों दुद्दम-दणु-विद्दावण । वइरि-वरङ्गण-जण-जूरावण ॥५॥
अहों अहों वज्जावत्त-धणुद्धर । वाणर-विज्जाहर-परमेसर ॥६॥
सन्धि दसाणणेण सहुँ किज्जउ । इन्दइ-कुम्भयण्णु मेल्लिज्जउ ॥७॥
लइ तु-माय ति-खण्ड वसुन्धर । छत्तइँ पीढइँ हय-गय-णरवर ॥८॥
णिहि-रयणइँ अवरइँ कइजव । सीयहेँ तणिय वत्त छड्डिज्जउ' ॥९॥

लक्ष्मण) से सहित थी, मीनकुलकी तरह, दशमुख (रावण और हृदमुख) से आशंकित थी, नील कमलकी तरह नील और नल (नीलिमा मृणाल, नल और नील योद्धा) से शोभित थी, नन्दन वनकी भाँति कुन्द (फूल विशेष, इस नामके योद्धा) से वर्द्धनशील थी, निशा-आकाशकी भाँति तारा और इन्दु (तारे चन्द्रमा और इस नामके योद्धा) से युक्त थी। और पास पहुँचनेपर उसे दरबार दिखाई दिया, उसे लगा, जैसे समुद्र-मन्थनकी तरह उससे रत्न निकल रहे हों, प्रलय सूर्यकी भाँति वह दरबार तेजसे दीप्त था, और सतीके चित्तकी भाँति पर-पुरुषके लिए एकदम अभेद्य था। दूतने देखा कि राम और लक्ष्मण, अलंकारोंसे शोभित, ऐसे लगते हैं, मानो स्वर्गसे इन्द्र और उपेन्द्र उतर आये हों" ॥१-१०॥

[७] राम और लक्ष्मणने प्रसन्न होकर शीघ्र उस दूतको बुलाया, और सम्मान देकर अपने पास बढ़िया आसनपर बिठा दिया। यह देखकर रावणका दूत कृतार्थ हो उठा। उसने अत्यन्त विनयपूर्वक रामके सम्मुख निवेदन किया, "हे सीता-प्रिय राम, आप सचमुच सैकड़ों देवयुद्धोंमें अडिग रहे हैं, अरे ओ राम, आप समूची धरतीके प्रतिपालक हैं। आपने माया-सुग्रीवका अन्त अपनी आँखों देखा है, अरे ओ राम, आप दुर्दम दानवोंका संहार करनेवाले हैं, अरे ओ राम, आप शत्रुओंकी अंगनाओंको कँपा देते हैं, आप वज्रावर्त धनुष धारण करते हैं, आप वानरों और विद्याधरोंके परमेश्वर हैं। आप रावणके साथ सन्धि कर लें, इन्द्रजीत और कुम्भकर्णको छोड़ दें। इसके बदलेमें लंकाके दो भाग तीनों खण्ड धरती, छत्र, अश्व, गज, बड़े-बड़े पीठ, उत्तम योद्धा, निधि रत्न, सब कुछका आधा-आधा भाग ले लीजिए, केवल सीता देवीके बारेमें अपनी इच्छा

घत्ता

पभणइ राहवचन्दु 'गिहि-लच्छिहँ हय-गय-रज्जु ।
सव्वइँ सो जेँ लएउ अम्हहुँ पर सीयएँ कज्जु' ॥१०॥

[८]

॥ दुवई ॥ तं णिसुणेवि वयणु काकुत्थहों ईसीसि वि ण कम्पिओ ।
तिण-समु गणेंवि सयलु अत्थाणु दसाणण-दूउ जम्पिओ ॥१॥

'अहों बलएव देव मा बोल्लहि । कण्णहुँ तणिय वत्त आमेल्लहि ॥२॥
लङ्काहिउ हेमन्तु जेँ वीयउ । जो णिविसु वि णउ होइ णिसीयउ ॥३॥
जो रज्जहिउ परिकप्पणप्पणेँ । दीसइ सुविणएँ असिवर-दप्पणेँ ॥४॥
जेण धणउ कियन्तु किउ णिप्पहु । सहसकिरणु णलकुब्बरु सुर-पहु ॥५॥
जेण वरुणु समरङ्गणेँ थम्भिउ । अट्ठावउ पावउ उद्धरियउ ॥६॥
तेण समउ जइ सन्धि ण इच्छहि । तो अवजस जीवन्तु ण पेच्छहि' ॥७॥
तं णिसुणेवि कुइउ भामण्डलु । णं उट्ठिउ स-लग्गु आखण्डलु ॥८॥
'अरेँ खल खुद्द स-मउडु स-कुण्डलु पाडमि सीसु जेम तालहों फलु ॥९॥
को तुहुँ कहों केरउ सो रावणु । जं मुहुमुहु जम्पहि अ-सुहावणु' ॥१०॥

घत्ता

लक्खणु घोसइ एम 'सउ रामहों केरी आणा ।
सिसु-पसु-तवसि-तियाहुँ किं उत्तिमु गेण्हइ पाणा ॥११॥

[९]

॥ दुवई ॥ दुट्ठें दुम्मुहेण दुव्वियड्ढें दूसीलें अयाणेंणं ।
सहुँ आहिवन्त-पडिसइ-पडिय-पूसय- समाणेंणं ॥१॥

का त्याग कर दें। यह सुनकर रामने उत्तरमें कहा, "निधियाँ और रत्न, अश्व और गज एवं राज्य सब कुछ वही ले ले, हमें तो केवल सीता देवी चाहिए" ॥१-१०॥

[८] रामके संकल्पको जानकर सामन्तक दूत जरा भी नहीं डरा। पूरे दरबारको तिनका बराबर समझते हुए उसने कहा, "अरे बलराम देव, और अधिक मत बोलो, केवल पत्नीकी बात छोड़ दो, लंकाधिपति दूसरा हिमालय है, वह सिय (सीता और शीत) को एक पलके लिए भी नहीं छोड़ सकता। जो रात-दिन तलवार रूपी दर्पणकी भाँति स्वप्नमें शत्रुसेनाको दिखाई देता है, जिसने कुबेर और कृतान्तको भी बलशून्य बना दिया, सहस्र किरण नलकूबर और इन्द्रको भी, प्रभावहीन कर दिया, जिसने वरुणको संग्रामभूमिमें ही पकड़ लिया, जिसने अष्टापद और पावकका उद्धार किया। ऐसे (प्रतापी) रावणके साथ, यदि आप संधि नहीं करते तो निश्चय ही अयोध्या नगरी जिन्दा नहीं बचेगी।" यह सुनते ही भामण्डल ऐसा भड़क उठा, मानो तलवार सहित इन्द्र ही भड़क गया हो। उसने कहा, "अरे दुष्ट नीच, मैं मुकुट और कुण्डलके साथ, तुम्हारे सिरको तालफलके समान धरतीपर गिरा दूँगा। कौन तू और कौन तेरा रावण, जो तू बार-बार इतना अशोभन बोल रहा है," तब उसे मना करते हुए लक्ष्मणने यह घोषणा की, "तुम्हें रामका आदेश है। और फिर क्या यह ठीक होगा कि तुम शिशु, पशु, तपस्वी और स्त्रियोंके प्राण लो" ॥१-११॥

[९] प्रति शब्दमें पठित 'प' के समान यह सिरको पीड़ा देनेवाला दुष्ट, दुर्मुख, दुर्विदग्ध, दुःशील और अज्ञानी है। इसको मारनेमें कौन-सी वीरता है, इससे अकीर्तिका बोझ बढ़ेगा और कुलको कलंक लगेगा। यह सुनते ही भामण्डलका

एण हएण कवणु सुहडत्तणु । अयस-भारु केवलु कुल-लञ्छणु' ॥२॥
तं णिसुणेंवि पसमिउ कोवाणलु । णिय-आसणें णिविट्ठु मामण्डलु ॥३॥
तेहएँ काले तिजगब्भहिएं । पभणिउ राहवु रामण-दूएं ॥४॥
'चवइ मिच्चु देव पइँ लइउ । जिह सु-कव्वें अवसद्दु णिवद्धउ ॥५॥
सिर-विहीणु णउ लग्गइ कण्णहुँ । तिह अविसद्दु विवद्धहुँ अण्णहुँ ॥६॥
आएं होहि तुहु मि लहुयारउ । लवण-रसेण समुद्दु व खारउ ॥७॥
अहवइ कलें जि आवइ पाविय । रण्डउ जेम लज्ज रोमाविय ॥८॥
एवहिँ गज्जहों काइँ अकारणें । भल्लु वुज्झेसउ सइँ जें महारणें ॥९॥

घत्ता

जो एक्कएँ ससीएँ एही अवत्थ दरिसावइ ।
सो पहरण-उवसेहिँ केइ विहय जेव उड्डावइ ॥१०॥

[१०]

॥ दुवई ॥ तुम्ह सिरुप्पलाइँ तोडेप्पिणु पीढु रएवि तत्थेंणं ।
इन्दइ-भाणुकण्ण-घणवाहण मेल्लेसइ स-हत्थेणं ॥१॥

णिहएँ वासुएव-बलएवें । लेसइ सइँ जें सीय अवलेवें ॥२॥
अहवइ जइ वि आउ महों खिज्जइ । तुम्हारिसेंहिँ तो वि णउ जिज्जइ ॥३॥
किं जोइज्जइ सीहु कुरङ्गेंहिँ । किं वसिकिज्जइ गरुडु भुयङ्गेंहिँ ॥४॥
किं खज्जोएंहिँ किउ रवि णिप्पहु । किं घण-तिणेंहिँ धरिज्जइ हुयवहु ॥५॥
किं सरि-सोत्तेंहिँ फुट्टइ सायरु । किं करेंहिँ छाइज्जइ ससहरु ॥६॥
किं चालिज्जइ विञ्झु पुलिन्देंहिँ । हासउ महों तुम्हेंहिँ कु-णरिन्देंहिँ' ॥७॥

क्रोध ठंडा पड़ गया और वह अपने आसनपर जाकर बैठ गया। इस अवसर पर कुछ हड़बड़ाकर रावणके दूतने फिर रामसे निवेदन किया, "हे देव, आपको यह अच्छा अनुचर उपलब्ध है ठीक वैसे ही, जिस प्रकार सुकाव्य में अपशब्द निबद्ध होता है, शोभाहीन होकर भी, जैसे वह अपशब्द कानों में नहीं खटकता, उसी प्रकार अन्य विद्वानोंमें यह मूर्ख भी नहीं जान पड़ता, परन्तु इससे आपका ही हल्कापन होगा, उसी प्रकार जिस प्रकार समुद्र नमकके रससे खारा हो जाता है। कल ही आपको आपत्तिका सामना करना होगा, राँड़की भाँति (विधवाकी भाँति) सबको रुलाओगे। इस समय व्यर्थ गरजनेसे क्या लाभ? महायुद्धमें तुम स्वयं अपनी ताकत जान जाओगे। एक शक्ति लगनेसे तुम्हारी यह हालत हो गयी, लाखों हथियारोंके चलने पर तो वानर पक्षियोंकी भाँति उड़ जायेंगे ॥१-९॥

[१०] युद्धभूमिमें रावण तुम्हारे सिर कमलको तोड़कर, अपना पीठ बनायेगा, और इन्द्रजीत, भानुकर्ण एवं मेघवाहन-को अपने हाथों मुक्त कर देगा। वासुदेव और बलदेव (लक्ष्मण और राम) के मारे जानेपर वह अहंकारके साथ सीताको ग्रहण कर लेगा। चाहे उसकी आयु भी क्षीण हो जाय, परन्तु तुम जैसे लोग उसे नहीं जीत सकते। क्या हरिण सिंहको देख सकते हैं, क्या सर्प गरुड़को वशमें कर सकते हैं, क्या जुगनू सूर्यको कान्तिहीन बना सकते हैं, क्या वनतृणोंसे आगको बन्दी बनाया जा सकता है, क्या नदियोंके प्रवाह समुद्रका बाँध तोड़ सकते हैं, क्या हाथोंसे चन्द्रमाको ढँका जा सकता है। क्या शबर विन्ध्याचल हिला सकते हैं, तुम जैसे छोटे-मोटे राजा तो उसके लिए एक मजाक है।" यह सुन-

तं णिसुणेवि मणेंहिँ गलत्थल्लिउ । टक्कर-पण्हिय-घाएँहिँ पेल्लिउ ॥८॥
गउ स-पराहउ लङ्क पराइउ । कहिउ 'देव हउँ कह वि ण घाइउ ॥९॥

घत्ता

दुज्जय लक्खण-राम ण करन्ति सन्धि णउ जुत्तउ ।
जं जाणहि तं चिन्तें आयउ खय-कालु णिरुत्तउ ॥१०॥

[११]

॥ दुवई ॥ सम्बु-कुमारु जेहिँ विणिवाइउ घाइउ खरु वि दूसणो ।
जेहिँ महण्णवो समुल्लङ्घिउ णक्क-ग्गाह-भीसणो ॥१॥

हत्थ-पहत्थ जेहिँ संघाइय । इन्दइ-कुम्भयण्ण विणिवाइय ॥२॥
आणिय जेहिँ विसल्ला-सुन्दरि । मुउ जीवाविउ लक्खण-केसरि ॥३॥
तेहिँ समाणु णाउ सोहइ विग्गहु । लइ वइदेहि देहि मुएँ सग्गहु' ॥४॥
तं णिसुणेंवि णरवइ चिन्तासिउ । महण्णावत्थ समुद्दु व पाविउ ॥५॥
'होसइ कवणु कज्जु णउ जाणमि । किं लक्खणहों बन्धेंवि आणमि ॥६॥
किं पावमि समसुत्तो पर-बलें । किं सर-धोरणि लायमि हरि-बलें ॥७॥
जइ वि स-साहणु स-सुहु समप्पमि । तो वि ण रामहों गेहिणि अप्पमि ॥८॥
अण्णु उवाउ एक्कु जें साहमि । बहुरूविणिय विज्ज आराहमि ॥९॥

घत्ता

पइणें घोसण देमि जाव अट्ठ दिवस मग्गासमि ।
अच्छमि झाणारूढु घट्टइ सन्तिहरु पईसमि' ॥१०॥

[१२]

॥ दुवई ॥ एम भणेवि तेण सुहु जें चउ माहहों तणएँ णिग्गमे ।
घोसिय पुरें अमारि अहिणव-फग्गुण-णन्दीसरागमे ॥१॥

कर सैनिकोंने उसका गला पकड़कर धक्के एवं एड़ीके आघातसे उसे बाहर निकाल दिया। अपमानित होकर वह लंका नगरी पहुँचा। उसने रावणसे अपने निवेदनमें कहा, "हे देव, मैं किसी प्रकार मारा भर नहीं गया। लक्ष्मण राम अजेय हैं, उन्होंने साफ 'न' कह दिया है, वे संधि करनेके लिए प्रस्तुत नहीं। अब जो ठीक जानें उसे सोचें, निश्चय ही अब अपना क्षयकाल आ गया है ॥१-१०॥

[११] जिसने शम्बुकुमारको मार डाला, जिसने खर और दूषणको जमीनपर सुला दिया, जिसने मगर-मच्छोंसे भरा समुद्र पार कर लिया, जिन्होंने हस्त और प्रहस्तको मौतके घाट उतार दिया, इन्द्रजीत और कुम्भकर्णको गिरा दिया। जो विशल्या सुन्दरीको ले आये और अपना भाई जिला दिया, उसके साथ युद्ध शोभा नहीं देता सीता वापस कर दो, छोड़ो उसका संग्रह।" यह सुनकर राजा रावण घोर चिन्तामें पड़ गया, उसे लगा जैसे उसकी समुद्रकी भाँति मंथनकी स्थिति आ गयी। उसने कहा, "मैं नहीं जानता कि काम किस प्रकार होगा, क्या उसे बाँधकर कन्धों पर लाऊँ, क्या मैं शत्रु सेनामें नींद फेला दूँ, क्या लक्ष्मणको सेनापर तीरोंकी बौछार कर दूँ। भले ही मुझे सेना सहित आत्म-समर्पण करना पड़े, मैं सीताको वापस नहीं कर सकता। हाँ, अब भी एक उपाय है। मैं बहु-रूपिणी विद्याकी सिद्धिके लिए जा रहा हूँ। सारे नगरमें मुनादी पिटवा दी गयी कि कोई डरे नहीं, और आठ दिन की बात है, मैं ध्यान करने जा रहा हूँ। अब मैं शान्तिनाथ मन्दिरमें जाकर ध्यान करूँगा" ॥ १-१० ॥

[१२] यह कहकर रावण शीघ्र ही चल दिया। इसी बीच

'अट्ठ दिवस जिणवरु जयकारहों । अट्ठ दिवस महिमउ णीसारहों ॥२॥
अट्ठ दिवस जिण-भवणइँ सारहों । अट्ठ दिवस जीवाइँ म मारहों ॥३॥
अट्ठ दिवस समरङ्गणु छड्डहों । अट्ठ दिवस इन्दिय-दणु दण्डहों ॥४॥
अट्ठ दिवस उववास करेज्जहों । अट्ठ दिवस मह-दाणइँ देज्जहों ॥५॥
अट्ठ दिवस अप्पाणउ भावहों । एयारह गुण-थाणइँ दावहों ॥६॥
अट्ठ दिवस गुण-वयइँ पउञ्जहों । सेज्जहों जज्जहों अणुहुञ्जेज्जहों ॥७॥
अट्ठ दिवस पिय-वयणइँ भासहों । अणुवय-सिक्खावयइँ पगासहों ॥८॥
अट्ठ दिवस आमेल्लहों मच्छरु । जाम्व एहु फग्गुण-णन्दीसरु ॥९॥

घत्ता

पच्चक्खाणु लएहु पडिक्कमणु सुणहों मणु खञ्चहों ।
सोहँ वि तामरसाइँ सइँ भुएँहिँ भडारउ अञ्चहों ॥१०॥

[७१. एकहत्तरिमो संधि]

हरि-हलहर-गुण-गहणेँहिँ दुल्लहों वयणेँहिँ पहु पहरेव्वउ परिहरइ ।
विज्जहेँ कारणेँ रावणु सग-जगडावणु सन्ति-जिणालउ पइसरइ ॥

[१]

णन्दीसर-पइसारएँ सारएँ । माहव-मासु णाइँ हक्कारएँ ॥१॥
सासय-सुहु संपावणेँ पावणेँ । दरिसाविय-पुप्फ-ग्गुणेँ फग्गुणेँ ॥२॥

वसन्तका माह भी बीत गया, फागुनके अभिनव नन्दीश्वरव्रतके आगमनके साथ नगरमें 'हिंसा' बन्द कर दी गयी। आठ दिन तकके लिए जिनवरका जयकार हो, आठ दिनके लिए 'मही-मद' को निकाल दो, आठ दिन तक जिनमन्दिरकी स्थापना हो, आठ दिन तक जीवोंका वध मत करो, आठ दिन तक लड़ाई बन्द रखो, आठ दिन तक इन्द्रियोंके निशाचरोंका दमन करो, आठ दिन तक उपवास करो, आठ दिन तक महादान दो, आठ दिन तक अपना ध्यान करो, आठ दिन तक ग्यारह गुणस्थानों का ध्यान करो। आठ दिनों तक गुणव्रतोंका प्रयोग करो, उनका सेवन जप और अनुभव करो, आठ दिन तक प्रियवचन बोलो, अणुव्रत और शिक्षाव्रतोंका प्रकाशन करो। आठ दिन तक ईर्ष्या छोड़ दो। तबतक, जबतक यह फागुनका नन्दीश्वर व्रत है। प्रत्याख्यान करो (सब कुछ छोड़ो) प्रतिक्रमण सुनो। मनको वशमें रखो। रक्तकमल तोड़कर अपने हाथोंसे आदर-णीय जिनभगवान्‌की अर्चना करो ॥ १-१० ॥

●

[७१. इकहत्तरवीं संधि]

राम और लक्ष्मणके गुणोंसे युक्त, दूतके वचन सुनकर, राजा रावणने आक्रमणका इरादा स्थगित कर दिया। जग-सन्तापदायक रावणने विद्याके निमित्त शान्तिनाथ जिनमन्दिर-में प्रवेश किया।

[१] श्रेष्ठ नन्दीश्वर पर्वके आगमन पर, (प्रकृति खिल उठी) मानो वसन्त माहको आमन्त्रित किया गया हो। नन्दी-श्वर पर्व शाश्वत सुख प्रदान करनेवाला था, और फागुन

णव-फल-परिपक्काणणेँ काणणेँ । कुसुमिएँ साहारएँ साहारएँ ॥३॥
सिन्धि-गमहेँ कोक्कणयहेँ कणयहेँ । हंसडंसिएँ कुवलएँ कु-वलएँ ॥४॥
महुअरेँ महु-मअन्तएँ जन्तएँ । कोइल-कुलेँ वासन्तएँ सन्तएँ ॥५॥
कीर-वन्देँ उड्डन्तएँ डन्तएँ । मलयाणिलेँ आवन्तएँ वन्तएँ ॥६॥
महुअरि पडिसल्लावएँ लावएँ । जहिँ ण वि तिमि रयहोँ तिमिरयहोँ ॥७॥
णाउ ण णासइ किं सुएँ किंसुएँ । जहिँ असेण गयणाहहोँ णाहहोँ ॥८॥
तणु परिसप्पइ सीयहेँ सीयहोँ ॥९॥

घत्ता

अच्छउ किं साहण्णेँ केण वि अण्णेँ जहिँ अइमुत्तउ रइ करइ ।
तं जण-[मण-]मणावणु सव्व-सुहावणु को महु-मासु ण सम्भरइ ॥१०॥

[२]

कत्थइ अङ्गारय-सङ्कासउ । रेहइ तम्बिरु फुल्लु पलासउ ॥१॥
णं दावाणलु आउ गवेसउ । को महँ दड्ढु ण दड्ढु पएसउ ॥२॥
कत्थवि माहविअएँ णिय-मन्दिरु । एन्तु णिवारिउ तं इन्दिन्दिरु ॥३॥
'ओसरु ओसरु तुहुँ अपवित्तउ । अण्णएँ णव-पुप्फवइएँ छित्तउ' ॥४॥
कत्थइ चूअ-कुसुम-मञ्जरियउ । णाइँ वसन्त-पडायउ धरियउ ॥५॥
कत्थइ पवण-हयइँ पुण्णायइँ । णं जगेँ उच्छलियइँ पुण्णायइँ ॥६॥
कत्थइ अहिणवाइँ भमर-उलइँ । पियइँ वसन्त-सिरिहेँ णं कुरुलइँ ॥७॥
फणसइँ भमुह-मुहा इव जक्खइँ । सिरिहलाइँ सिरि-हल इव पक्कइँ ॥८॥

महीनेमें जगह-जगह फूल दिखाई दे रहे थे। वनोंमें नये फल पक चुके थे, आमका एक-एक पेड़ बौर चुका था। लाल कमल और कनेरने नयी शोभा धारण कर ली थी। कमल-कमल पर हंसोंकी शोभा थी। भौंरे मधुमें सराबोर हो रहे थे, कोकिल-कुल वासन्ती तराना छेड़ रहा था, कीरोंके झुण्ड जहाँ-तहाँ उड़ रहे थे। दक्खिनपवन हिलकोरे ले रहा था, मधुकरियाँ मीठी-मीठी बातोंमें व्यस्त थीं, अनुरक्त तीतर पक्षियोंको तृप्ति नहीं थी। पलाश वृक्षोंमें तोतोंका नाम भी नहीं जाना जा सकता था, जिसमें कामदेवके वशीभूत होकर सीता देवीका शरीर शीतसे काँप रहा था। सगे प्रिय कैसे रह सकते हैं जब कि कोई दूसरा अत्यन्त उन्मुक्त प्रेमक्रीड़ा कर रहा हो, और फिर, जनोंके मन-को मस्त करनेवाला, सुहावना मधुमास किसे याद नहीं आता ? ॥ १-१० ॥

[२] कहीं पर फूला हुआ लाल-लाल पलाश पुष्प ऐसा लग रहा था मानो अंगार हो, मानो दावानल उसके बहाने यह खोज रहा था कि कौन मुझसे जला और कौन नहीं जला। कहीं पर माधवीलता अपने घर आते हुए मधुकरको रोक रही थी, "हटो-हटो तुम गन्दे हो, दूसरी पुष्पवतीने तुम्हें छू लिया है, कहीं पर आमकी खिली हुई मंजरी ऐसी लगती थी मानो उसने वसन्त पताकाको धारण कर लिया है। कहीं पवनसे हिलती-डुलती नागकेशर ऐसी लगती थी मानो सारी दुनियामें केशर फैल गयी हो। कहीं पर नये भ्रमरकुल ऐसे लगते थे मानो वसन्त लक्ष्मीके काले केशपाश हों, कहीं-कहीं पर दुर्जनोंके मुखकी तरह अत्यन्त कठोर नागरमोथा दिखाई दे रहा था, और कहीं पर नारियल श्री (लक्ष्मी) फलकी तरह वृद्धिंगत जान पड़ते थे। उस

घत्ता

तेहएँ काल मणोहरेँ णव-णन्दीसरेँ लङ्क पुरन्दर-पुरि व थिय ।
रयणियरेँहि गुरु-भसिएँ (?) अविचल-भत्तिएँ जिणहरेँ जिणहरेँ पुज्ज किय ॥९॥

[३]

घरेँ घरेँ महिमउ णीसारियउ । घरेँ घरेँ पडिमउ अहिसारियउ ॥१॥
घरेँ घरेँ तूरइँ अप्फालियइँ । णं सीह-उलइँ ओरालियइँ ॥२॥
घरेँ घरेँ रवि-किरण-णिवारणइँ । उब्भियइँ वियाणइँ तोरणइँ ॥३॥
घरेँ घरेँ मालउ गन्धुक्कडउ । घरेँ घरेँ णिवडिय चन्दण-छडउ ॥४॥
घरेँ घरेँ मोत्तिय-रङ्गावलिउ । घरेँ घरेँ दवणुल्लउ णव-फलिउ ॥५॥
घरेँ घरेँ अहिणव-पुप्फच्चणिय । घरेँ घरेँ चच्चरि कोड्डावणिय ॥६॥
घरेँ घरेँ मिहुणइँ परिओसियइँ । घरेँ घरेँ मह-दाणइँ घोसियइँ ॥७॥
घरेँ घरेँ भोयण-सामग्गि किय । घरेँ घरेँ सिरि-देवय णाइँ थिय ॥८॥

घत्ता

करेँ वि महोच्छउ पट्टणेँ दणु-दलवट्टणेँ सप्परिवारु णिराउहउ ।
अट्ठावय-कम्पावणु सरहसु रावणु गउ सन्तिहरहोँ सम्मुहउ ॥९॥

[४]

कुसुमाउह-आउह-सम-णयणेँ । णीसरियएँ सरियएँ दहवयणेँ ॥१॥
मणहरणाहरणालङ्करिएँ । स-पसाहण-साहण-परियरिएँ ॥२॥
दप्पहरण-पहरण-वज्जियएँ । तूराउलेँ राउलेँ गज्जियएँ ॥३॥
जय-मङ्गलेँ मङ्गलेँ घोसियएँ । रयणियर-णियरेँ परिओसियएँ ॥४॥
जणु णिग्गउ णिग्गउ णित्तुरउ । महिरक्खहोँ रक्खहोँ थिउ पुरउ ॥५॥
दप्प-रहिय पर-हिय के वि णर । उववासिय वासिय धम्म-पर ॥६॥

सुन्दर नन्दीश्वर पर्वके समय, लंका नगरी अमरावतीके समान शोभित थी। अविचल और भारी भक्तिसे भरे हुए निशाचरोंने अपने प्रत्येक जिनमन्दिरमें जिनपूजा की ॥ १-९ ॥

[३] घर-घरमें धरतीकी गन्दगी निकाल दी गयी, घर-घरमें प्रतिमाका अभिषेक किया गया, घर-घरमें तूर्य बजाये गये, मानो सिंहसमूह ही गरज रहा हो, घर-घरमें सूर्य किरणोंको रोक दिया गया। ऊँचे वितान और तोरण सजा दिये गये। घर-घरमें उत्कट गन्धसे भरी मालाएँ थीं, घर-घरमें चन्दनका छिड़काव हो रहा था, घर-घरमें मोतियोंकी रांगोली पूरी जा रही थी, घर-घरमें दमनलता नयी-नयी फल रही थी, घर-घरमें नयी पुष्पअर्चा हो रही थी, घर-घरमें चर्चरी और दूसरे कौतुक हो रहे थे। घर-घरमें मिथुन परिपोषित थे, घर-घरमें महादानोंकी घोषणा की जा रही थी, घर-घरमें भोजनकी सामग्री बनायी जा रही थी, मानो घर-घरमें लक्ष्मीके देवता अधिष्ठित हों। दनुका संहार करनेवाले लंका नगरमें, सपरिवार रावणने नन्दीश्वर पर्वका उत्सव, निश्चिन्ततासे मनाया। और फिर अष्टापदको कँपानेवाला वह हर्षपूर्वक शान्ति जिनालयकी ओर गया ॥ १-९ ॥

[४] कामदेवके अस्त्रके समान नेत्रवाले रावणने वसन्तके अनुरूप क्रीड़ा की। सुन्दर अलंकारोंसे अलंकृत, और प्रसाधनोंके सहित सेनासे वह घिरा हुआ था। दर्प हरण करनेवाले अश्व खनखना रहे थे। नगाड़ोंसे भरपूर राजकुल गूँज रहा था, जयमंगल और मंगल गीतोंकी घोषणा हो रही थी। निशाचर समूह सन्तुष्ट था। जनसमूह निकलकर धरतीकी रक्षा करनेवाले उस राक्षसके सम्मुख खड़ा हो गया। अहंकार शून्य और परोपकारी बहुत-से धर्मपरायण लोग वहीं ठहर गये। कोई की

दइ(?य)-महियएँ महियएँ का वि तिय । कंजय-करि जय-करि णाइँ सिय ॥७॥
का वि राम राम-उक्कंठियहि । का वि धवलें धवलें दीवयरि ॥८॥

घत्ता

वालि-महिन्दालंकारें णायर-लोएँ सन्ति-जिणालउ दिट्ठु किह ।
णह-यम्बर-आवासें समहर-हंसें सुट्ठु वि घत्तिउ कमलु जिह ॥९॥

[५]

विमलं रवि-रासि-हरं सिहरं । लक्खिज्जइ सन्ति-हरं तिहरं ॥१॥
वुड्ढत्तण-जम्म-रणं मरणं । वारेइ व कणयवणं पवणं ॥२॥
वीसमइ व रम्म-वणे भवणे । फुल्लइ व कुसुम-जडं अजडं ॥३॥
भणइ व अलिमा भमरे भमरे । वड्ढइ व (?) ससि-समयं स-मयं ॥४॥
लोडइ व णह-यलयं अलयं । आरुहइ व अक्क-रहे कर-हे ॥५॥
मइलेइ व उज्जलयं जलयं । परिहेइ व दिव्वलयं वलयं ॥६॥
खुडुइ व अवणिलयं णिलयं । हसइ व परिमुक्क-मलं कमलं ॥७॥
जोयइ व सव्व-सुहं वसुहं । धरइ व अहिट्ठाणं अहि-ठाणं ॥८॥

घत्ता

गुण-पवित्तु विसालउ सन्ति-जिणालउ सव्वहँ लोअहँ सन्ति-करु ।
णारीयहँ णय-मग्गहँ पर-तिय-मग्गहँ लक्खाहिवहँ असन्ति-करु ॥९॥

[६]

दसाणणो समालयं । पइट्ठओ जिणालयं ॥१॥
सओ कओ महोच्छवो । वियाण-वीण-मण्डवो ॥२॥
विसारिया चक्क मणी । णिबद्ध तोरणावली ॥३॥

अपने पतिसे पूजित विमानमें ऐसे बैठ गयी मानो कमलमें विजयशीला शोभालक्ष्मी विराजमान हो। कोई स्त्री अपने प्रियसे बात कर रही थी, कोई-कोई पत्नियाँ दीपको तरह आलोकित हो रही थीं। बाल सिंहके समान नागरिकोंको शान्तिजिनालय ऐसा दिखाई दिया, मानो आकाश रूपी सरोवरमें रहनेवाले चन्द्रमारूपी हंस ने कमल काटकर नीचे गिरा दिया हो॥ १–९॥

[५] उस मन्दिरके शिखर पवित्रतामें सूर्यके प्रकाशको फीका कर देते थे, वह शान्ति जिनका घर था, जो जन्म-जरा और मृत्युका निवारण करता था, जो हवाके कम्पनको दूर कर देता था, जो मार्गसे अनतिदूर होकर भी पुष्पोंसे परिपूर्ण था, जो भ्रमरोंके बहाने कह रहा था कि संसारमें घूमना असत्य है, चन्द्रमाके समान, जिसकी मृगमयता बढ़ती जा रही थी (मृग-लांछन और आत्मज्ञान), जो इतना ऊँचा था, कि आकाशतल-को तोड़नेमें समर्थ था, अथवा जो अपनी किरणोंसे सूर्यके रथ पर बैठना चाह रहा था, अथवा जो स्वच्छ मेघोंको मलिन बना रहा था, अथवा दिशावलयका त्याग कर रहा था, मानो वह अपना धरतीका घर छोड़ रहा था, अथवा जो शुभ्र जल कमलकी भाँति हँस रहा था, जो सर्व सुखवाली धरतीकी रक्षा कर रहा था, अथवा जो पाताललोक या स्वर्गलोकको पकड़ना चाहता था। पुण्य पवित्र और विशाल वह जिनालय सब लोगोंको शान्ति प्रदान कर रहा था, केवल एक वह अशान्ति-दायक था, वह था व्रतसे च्युत और दूसरोंकी स्त्रियोंका संग्रह-कर्ता लंकाधिराज रावण॥ १–९॥

[६] रावणने शान्तिके निवास स्थान, शान्ति जिनालयमें प्रवेश किया। वहाँ उसने महान् उत्सव किया, उसने एक विशाल मंडप बनवाया। उसमें नैवेद्य और चरु बिखरे हुए थे, तोरण-

समुब्भिया महद्धया । सियायवत्त चिन्धया ॥४॥
जिणाहिसेय-तूरयं । समाहयं गहीरयं ॥५॥
मउन्द-णन्दि-मद्दला । हुडुक्क-ढक्क-काहला ॥६॥
सरुञ्ज-भेरि-झल्लरी । दडिक्क-पाणिकत्तरी ॥७॥
स-दद्दुरा-रवुक्कया । स-ताल-सङ्ख-संघडा ॥८॥
कडप्प-ढक्क-टट्टरी । झुणुक्क-भम्भ-किङ्किरी ॥९॥
वमीस-वंस-कंसिया । हिरि हरी समासिया ॥१०॥
पवीण वीण वाणिया । पढ्ढ झुणी सुहाविया ॥११॥
पसण्णि-दण्ड-चम्बरा । अणेय सेय चामरा ॥१२॥
सुराण जं णिबन्धणं । कयं च तेहिँ पेसणं ॥१३॥
अमस्स सव्व-रक्खणं । पहुअणेण पङ्गणं ॥१४॥
कयं अ-रेणु-सेत्तयं । महाघणेहिँ सित्तयं ॥१५॥
वणासईहिँ अञ्चियं । वरङ्गणाहिँ णच्चियं ॥१६॥
सरस्सईएँ गाइयं । पउञ्जिएहिँ वाइयं ॥१७॥

घत्ता

णरवइ भामरि देप्पिणु णाहु णवेप्पिणु एक्कु खणन्तरु एँ कुमणु ।
रावणहत्थउ वाएँ वि मङ्गलु गाएँ वि पुणु पारम्भइ जिण-ण्हवणु ॥१८॥

[७]

आढत्तु सत्तु-सन्तावणेण । अहिसेउ जिणिन्दहाँ रावणेण ॥१॥
पक्खिलउ वि भूमि-पक्खालणेण । पुणु मङ्गलग्गि-पज्जालणेण ॥२॥
भुवणिन्द-बिम्ब-पडिबोहणेण । अभिएण वसुन्धर-सोहणेण ॥३॥
वर-मेरु-पीढ-पक्खालणेण । अणगोवइए रिव चालणेण(?) ॥४॥
कलसङ्कुरि-सेहर-बन्धणेण । कुसुमञ्जलि-पडिमा-थावणेण ॥५॥
महि-संसम-कलस-णिरोहणेण । पुप्फबलि-पुप्फञ्जलि-घत्तणेण ॥६॥

मालाएँ बँधी हुई थीं, विशाल पताकाएँ उड़ रही थीं। शुभ्र आतपत्र शोभित थे। सहसा जिन भगवान्‌के अभिषेक तूर्य बज उठे। मउन्द, नन्दी, मृदंग, हुडुक्क, ढक्क, काहल, सरुंज, भेरी, झल्लरी, दड्डिक, हाथकी कतार, सदद्दुर, खुक्कड, ताल, शंख और संघड, डउप्फ, ढक्क और टट्टरी, झुणुक, भम्भ, किङ्करी, वव्वीस, वंश, कंस तथा तीन प्रकारके स्वर वहाँ बजाये गये। प्रवीण, वीण और पाविया आदि पटहोंकी ध्वनि सुहावनी लग रही थी। सोनेके दण्डोंका विस्तार था, शुभ्र चमर बहुत-से थे, देवताओंको जो बातें निषिद्ध थीं वे भी उन्होंने वहाँ कीं। यमका काम सबकी रक्षा करना था, पवन बुहारता था और सब धूल साफ कर देता था, अहमेन्द्र सेवनका काम करते थे, वनस्पतियाँ पूजा करती थीं, उत्तम अँगनाएँ नृत्य कर रही थीं, सरस्वती गीत गा रही थीं और प्रयोक्ताओंने नृत्य किया। परिक्रमाके बाद स्वामीको नमस्कार कर, वह एक क्षणके लिए अपने मनमें स्थित हो गया। उसने अपने हाथों वाद्य बजाकर मंगल-गान किया, और जिन भगवान्‌का अभिषेक किया ॥ १-१८ ॥

[७] शत्रुओंको सतानेवाले रावणने जिनेन्द्रका अभिषेक प्रारम्भ किया। सबसे पहले उसने भूमिको धोया, फिर मंगल अग्नि प्रज्वलित की। फिर भुवनेन्द्रोंको सम्बोधित किया। तदनन्तर अमृतसे धरतीकी शुद्धि की, उसके बाद उत्तम मेरुपीठका प्रक्षालन किया। फिर वलय सहित अंगुलियोंसे अपना मुकुट बाँधा, सुमनमालाके साथ प्रतिमाकी स्थापना की। विश्व प्रशंसनीय कलशोंको उसने रोपा। फिर फूलोंकी अञ्जलि छोड़ी, अर्घ्य चढ़ाया, देवताओंका

अग्घेण अमर-आवाहणेण । णाणाविहेण अवधारणेण ॥७॥
जय-मङ्गल-कलसुक्खिप्पणेण । जलधारोवरि-परिखिप्पणेण ॥८॥

घत्ता

अइरावय-मय-रिद्धें मसलाइद्धें किङ्कर-पवर-पराणिएँण ।
अहिसिञ्चिउ सुर-सारउ सन्ति-भडारउ पुण्ण-पवित्तें पाणिएँण ॥९॥

[८]

करि-मयर-करग्गप्फालिएण । भिङ्गार-फार-संचालिएण ॥१॥
महुअरि-उवगीय-वमालिएण । अलि-वलय-मुहल-सम-कालिएण ॥२॥
अह पर-दुक्खेण व सीयलेण । सज्जण-वयणेण व उज्जलेण ॥३॥
मलय-रुह-वणेण व सुरहिएण । सद्द-णिसेण व मल-विरहिएण ॥४॥
अहिसिञ्चिउ तेणामल-जलेण । पुणु णव-घएण महु-पिङ्गलेण ॥५॥
पुणु सङ्ख-कुन्द-जस-पण्डुरेण । गङ्गा-तरङ्ग-डम्मरेण ॥६॥
हिमगिरि-सिहरेण व साडिएण । ससहर-बिम्बेण व पाडिएण ॥७॥
मोत्तिय-हारेण व तुट्टएण । सरयब्भ-उरेण व फुट्टएण ॥८॥
खीरेण तेण सु-मणोहरेण । पुणु सिसिर-पवाहें मन्थरेण ॥ ॥
अविणय-पुरिसेण व थद्धएण । णव-कुसुमेण व साहा-बद्धएण ॥१०॥
पुणु पडिसूवयण-धोवणेण । चुण्णेण अलेण गन्धोवएण ॥११॥

घत्ता

कप्पूरायरु-वासिउ घुसिणुम्मीसिउ तं गन्ध-जलु स-णेउरहों ।
दिण्णु विहज्जैवि राएं णं अणुराएं हियउ सव्वु अन्तेउरहों ॥१२॥

आह्वान किया, दूसरे तरह-तरहके विधान किये, जय और मंगल के साथ उसने घड़े उठाये और प्रतिमाके ऊपर जलधाराका विसर्जन किया। ऐरावतके मदजलसे समृद्ध, भ्रमरोंसे अनुगुंजित और अनुचरोंसे प्रेरित पुण्यपवित्र अपने हाथसे दशाननने देवताओंमें श्रेष्ठ आदरणीय जिन भगवान्‌का अभिषेक किया ॥ १–९ ॥

[८] उसने पवित्र जलसे जिन भगवान्‌का अभिषेक किया। उस पवित्र जलसे जो हाथीकी सूँड़से ताड़ित था, भ्रमर समूहसे अत्यन्त चंचल था, भ्रमरियोंके उपगीतोंसे कोलाहलमय था, भ्रमर समूहसे मुखर और चंचल, अथवा, शत्रुके दुःखकी तरह अत्यन्त शीतल, सज्जनके मुखकी तरह उज्ज्वल, मलय वृक्षोंके समान, सुगन्धित, सतीके चित्तके समान निर्मल था। फिर उसने मधुकी तरह पीले और ताजे घी से अभिषेक किया। इसके बाद उसने दूधसे उनका अभिषेक किया, वह चूर्ण जल, शंख, कुन्द और यशके समान स्वच्छ था, गंगाकी लहरोंकी तरह कुटिल, हिमालयके शिखरकी भाँति सघन, चन्द्रबिम्बकी तरह शुभ्र, टूटे हुए मोतियोंकी तरह स्फुट, शरद् मेघकी तरह बिखरा हुआ था, और शिशिरके प्रवाहकी भाँति मंथर था। फिर उसने प्रतिमाका उबटन, धोवन, चूर्ण और गन्ध जलसे अभिषेक किया, जो चूर्ण जल, अविनीत पुरुषकी भाँति सघन, और नये वृक्षकी भाँति साहाबद्ध (शाखाएँ और मलाईसे सहित) था। कपूर और अगरसे सुवासित, केशरसे मिश्रित वह गन्धोदक रावणने अपने अन्तःपुरको दिया, मानो उसने समूचे अन्तःपुरको अपना हृदय ही विभक्त करके दे दिया हो ॥ १–१२ ॥

[९]

दिव्वेण अणुलेवणेणं सुअन्धेण । सिरिखण्ड-कप्पूर-कुङ्कुम-समिद्धेण ॥१॥
दिव्वेहिँ णाणा-पयारेहिँ पुप्फेहिँ । रत्तुप्पलिन्दीवरसमोय-गुप्फेहिँ ॥२॥
अइमुत्तयासोय-पुण्णाय-णाएहिँ । सयवत्तिया-मालई-पारिजाएहिँ ॥३॥
कणियार-करवीर-मन्दार-कुन्देहिँ । बिअइल्ल-वरतिलय-बउलेहिँ मरुएहिँ ॥४॥
सिन्दूर-बन्धुक्क-कोरण्ट-कुज्जेहिँ । [illegible] ॥५॥
एवं च मालाहिँ अण्णण्ण-रूवाहिँ । कण्णाडियाहिँ व सर-सार-भूआहिँ ॥६॥
आहीरियाहिँ व वायाल-मसलाहिँ । वर-लाडियाहिँ व सुह-वण्ण-कुसलाहिँ ॥७॥
सोरट्ठियाहिँ व सव्वङ्ग-मउआहिँ । मालविणियाहिँ व मल्हार-रुइआहिँ ॥८॥
मरहट्ठियाहिँ व उद्दाम-वायाहिँ । गेय-ज्झुणीहिँ व अण्णण्ण-छायाहिँ ॥९॥

घत्ता

णाणाविह-मणिमइयहिँ किरणब्भइयहिँ चन्द-सूर-सारिच्छएहिँ ।
अच्चण किय जग-णाहहोँ केवल-बाहहोँ पुण्ण-सएहिँ व अच्छएहिँ ॥१०॥

[१०]

पच्छा चरुएण मणोहरेण । गङ्गा-वाहेण व दीहरेण ॥१॥
मुत्ता-णियरेण व पण्डुरेण । सु-कलत्त-मुहेण व सु-महुरेण ॥२॥
वर-अमिय-रसेण व सुरहिएण । सुअणेण व सुट्ठु सणेहिएण ॥३॥
तित्थयर-वरेण व सिद्धएण । सुरएण व तिम्मण-रिद्धएण ॥४॥
पुणु दीवएहिँ णाणाविहेहिँ । घरहिमेँहिँ व अइसीहर-सिहेहिँ ॥५॥
सुहडेहिँ व वणिएहिँ बलियएहिँ । रिण्डावत्तेहिँ व जलियएहिँ ॥६॥

[९] फिर उसने परम जिनकी अर्चना की दिव्य सुगन्धित चन्दन, कपूर और केसरसे मिश्रित अनुलेपसे। फिर दिव्य नाना प्रकारके फूलोंसे, जिनमें लाल और नील कमल गुंथे हुए थे। अत्युत्तम अशोक, पुंनाग, नाग कुसुम, शतपत्र, मालती, हरसिंगार, कनेर, करवीर, मंदार, कुन्द, बेला, बरतिलक, बकुल, मन्द, सिन्दूर, बंधूक, कोरंट, कुंज, दमण, मरुआ, पिका, तिलक आदि फूलोंसे उसने जिनकी अर्चा की। इसके अनन्तर, उसने तरह-तरह रूपवाली मालाओंसे जिनकी पूजा की, जो मालाएँ कर्णाटक नारियोंकी तरह कामदेवकी सारभूत थीं, आभीर स्त्रियोंकी तरह विटरूपी भ्रमरोंसे युक्त थीं, लाट देशकी वनिताओंकी तरह मुखवर्णोंमें अत्यन्त चतुर थीं, सौराष्ट्र देशकी स्त्रियोंकी तरह सब ओरसे मधुर थीं, मालव देशकी पत्नियोंकी तरह मध्यमें दुबली पतली थीं, महाराष्ट्र देशकी स्त्रियोंकी भाँति जो उद्दामवाक् (बोली, छालसे प्रगल्भ) थीं, गीत ध्वनियोंकी तरह एक दूसरेसे मिली हुई थीं। तरह-तरहके मणि रत्नोंसे बनी हुई, किरण जालसे चमकती हुई, सूर्य चन्द्र जैसी मालाओं एवं शत-शत पुण्य अक्षतोंसे, रावणने विश्वस्वामी परम जिनेन्द्रकी पूजा की ॥ १-१० ॥

[१०] उसके अनन्तर, उसने नैवेद्यसे पूजा की, जो गंगाप्रवाहकी तरह दीर्घ, मुक्तासमूहके समान स्वच्छ, सुन्दरीके समान सुमधुर, उत्तम अमृत रसके समान सुरभित, स्वजनके समान स्नेहिल, उत्तम तीर्थंकरकी तरह सिद्ध, सुरतके समान तिम्मण(घी, पक्वान्न) से युक्त थी। फिर उसने नाना प्रकारके दीपोंसे उनकी आरती उतारी। वे दीप, मयूरोंकी भाँति अतिदीर्घ शिखा (पूँछ और ज्वाला) वाले थे, जो सुभटोंकी भाँति व्रणित (व्रणों-घावों, स्त्रियों) से युक्त थे, द्यूताधिकारीकी

धूवेण विविह-गन्धुद्धुरएण । मयणेण व जिणवर-दड्ढएण ॥७॥
पुणु फल-णिवहेण सुसोहिएण । कव्वेण व सव्व-रसाहिएण ॥८॥
साहारेण व अइ-पक्कएण । तक्केण व साहा-मुक्कएण ॥९॥
पहु-अच्चण एम्व करेइ जाम । गयणङ्गणे सुर घोसन्ति ताम्व ॥१०॥

घत्ता

'जइ वि सन्ति एहु घोसइ कल्लाणु होसइ तो वि राम-लक्खणहुँ जउ ।
इन्दिय वसि ण करन्तहुँ सोय [illegible] हुँ सिव-[illegible] ॥११॥

[११]

जगु थुणेहुँ पयत्थ-विचित्तं । णाय-णराण सुराण विचित्तं ॥१॥
मोक्खपुरी-परिपालिय-गत्तं । सन्ति-जिणं ससि-णिम्मल-वत्तं ॥२॥
सोम-मुहं परिपुण्ण-पवित्तं । जस्स चिरं चरियं सु-पवित्तं ॥३॥
सिद्धि वहू-मुह-दंसण-पत्तं । सील-गुणव्वय-सञ्जम-पत्तं ॥४॥
मावलचामर-चामर-छत्तं । दुन्दुहि-दिव्व-झुणी-पह-वत्तं ॥५॥
जस्स मवाहि-कुलेसु खगत्तं । अट्ठ-सयं चिय लक्खण-गत्तं ॥६॥
चन्द-दिवायर-सण्णिह-छत्तं । चारु-असोय-महद्दुम-छत्तं ॥७॥
दप्पिट्ठ जेण मणिन्दिय-छत्तं । णोमि जिणोत्तममम्बुज-णेत्तं ॥८॥

(दोधकं)

भाँति जलित (जलमय, ज्वालामय) थे। फिर उसने नाना प्रकारकी गन्धवाली धूपसे जिनकी पूजा की, जो जिनवरकी तरह दग्धकाम थी। उसके अनन्तर सुशोभित फल-समूहसे उन्हें पूजा, वह फल-समूह काव्यकी भाँति सब रसोंसे अधिष्ठित था। फिर उसने पके हुए आम्रफलोंसे पूजा की, जो तरुकी भाँति शाखासे मुक्त थे। जब वह इस प्रकार भगवान जिनेन्द्रकी पूजा कर ही रहा था कि आकाशमें देवताओंकी ध्वनि सुनाई दी। ध्वनि हुई कि भले ही तू इस समय शान्तिकी घोषणा कर रहा है फिर भी कल, जय राम लक्ष्मणकी ही होगी। जो अपनी इन्द्रियाँ वशमें नहीं करते और दूसरोंकी सीता वापस नहीं करते, उनको श्री और कल्याणकी प्राप्ति कैसे हो सकती है ॥१-११॥

[११] उसके अनन्तर, रावण विचित्र स्तोत्र पढ़ने लगा- "नाग नरों और देवताओंमें विचित्र हे देव, तुमने अपने शरीर से मोक्षकी सिद्धि की है, चन्द्रमाके सदृश शान्त-आचरण शान्तिनाथ, सोमकी भाँति हे कल्याणमय, हे परिपूर्ण पवित्र, आपके चरित्र सदासे पवित्र हैं, तुमने सिद्ध वधूका घूँघट खोल लिया है, शील, संयम और गुणव्रतोंकी तुमने अन्तिम सीमा पा ली है, आप भामण्डल, श्वेत छत्र और चमर, दिव्य ध्वनि और दुन्दुभिसे मण्डित हैं। जिसके संसारोत्तम कुलमें सुभगता है, जिसका शरीर १०८ लक्षणोंसे अंकित है, जिनके छत्रकी कान्तिसे सूर्य और चन्द्र लजाते हैं, जिनके ऊपर अशोक सदैव अपनी कोमल छाया किये रहता है। मन और इन्द्रियाँ, जिनके अधीन हैं, मैं ऐसे कमलनयन शान्तिनाथको प्रणाम करता हूँ।

परं परमपारं । सिवं सयल-सारं ॥९॥
जरा-मरण-णासं । जय-स्सिरि-णिवासं ॥१०॥
णिराहरण-सोहं । सुरासुर-विबोहं ॥११॥
अयाणिय-पमाणं । गुरुं णिरुवमाणं ॥१२॥
महा-कलुण-भावं । दिसायड्ड-सहावं ॥१३॥
णिराउह-करग्गं । विणासिय-कुमग्गं ॥१४॥
हरं हुयवहं वा । हरिं चउमुहं वा ॥१५॥
ससिं दिणयरं वा । पुरन्दर-वरं वा ॥१६॥

महापाव-भीरुं पि एक्कल्ल-वीरं । कला-भाव-हीणं पि मेरुं हि धीरं ॥१७॥
विमुत्तं पि मुत्तावली-सण्णिकासं । विणिग्गन्थ-मग्गं पि गन्धावयासं ॥१८॥
महा-वीयरायं पि सीहासणत्थं । अ-भूमङ्गुरत्थं पि णट्टारि-सत्थं ॥१९॥
समाणङ्गधम्मं पि देवाहिदेवं । णिरिहसा-विहीणं पि सव्वूड-सेवं ॥२०॥
अणाथप्पमाणं पि सव्व-प्पसिद्धं । अणन्तं पि सन्तं अणेयत्त-सिद्धं ॥२१॥
मलुब्भिन्न-गत्तं पि णिव्वाहिसेयं । अजङ्गं पि लोएं णिराणेय-भेयं ॥२२॥
सुरा-णाम-णासं पि णाणा-सुरेसं । जडा-जूड-भारं पि दूरत्थ-केसं ॥२३॥
अमाया-विरूवं पि विक्खिण्ण-सीसं सया-आगमिल्लं पि णिच्चं अदोसं॥२४॥
(भुजंगप्पयातं)

महा-गुरुं पि णिक्करं । अणिन्दियं पि दुम्मरं ॥२५॥
परं पि सव्व-पच्चलं । परं पि णिच्च-केवलं ॥२६॥

हे श्रेष्ठ परमागम, हे सर्वश्रेष्ठ जिन, आपने जन्म, जरा और मृत्युका अन्त कर दिया है। आप जयश्रीके निकेतन हैं, आपकी शोभा अलंकारोंसे बहुत दूर है, सुर और असुरोंको आपने सम्बोधा है, अज्ञानियोंके लिए आप एकमात्र प्रमाण हैं। हे गुरु, आपकी क्या उपमा हो, आप महाकरुण और आकाश-धर्मा हैं। अस्त्रविहीन आप कुमार्गको कुचल चुके हैं, आप शिव हैं या अग्नि, हरि हैं या ब्रह्मा, चन्द्र हैं या सूर्य, या उत्तम इन्द्र हैं। महापापोंसे डरनेवाले आप अद्वितीय वीर हैं। आप कलाभागसे (शरीर) रहित होकर, सुमेरुके समान धीर हैं, विमुक्त होकर भी मुक्तामालाकी तरह निर्मल हैं, ग्रन्थमार्गसे (गृहस्थसे) बाहर होकर भी ग्रन्थों (धन, पुस्तक) के आश्रयमें रहते हैं, महा वीतराग होकर भी सिंहासन (मुद्रा-विशेष) में स्थित हैं, भौंहोंके संकोचके बिना ही, आपने शत्रुओं (कर्म) का नाश कर दिया है, समान अंगधर्मा होकर भी आप देवाधि-देव हैं, जीतनेकी इच्छासे शून्य होकर भी, सर्वसेवारत हैं, प्रमाण ज्ञानसे हीन होकर भी सर्व-प्रसिद्ध हैं। जो अनन्त होकर भी सान्त हैं और सर्वज्ञात हैं, मलहीन होनेपर भी, आपका नित्य अभिषेक होता है। विद्वान् होकर भी, आप लोकमें ज्ञान, अज्ञानकी सीमासे परे हैं। सुराके संहारक होकर भी नाना सुराओंके (देवियोंके) अधिपति हैं। जटाजूटधारी होकर भी जटाओंको उखाड़ डालते हैं, मायासे विरूप रहकर भी, स्वयं विक्षिप्त रहते हैं, आपका आगमन ज्ञान शोभित है, पर स्वयं आप अदृश्य हैं। आप महान् गुरु (भारी, गुरु) होकर भी, स्वयं निर्भर (परिग्रह हीन) हैं। आप अनिर्दिष्ट (मृत्यु-रहित, समवशरणसे जाने जानेवाले), होकर भी दुम्मर (मरण-शील, मृत्युसे दूर) हैं। आप पर (शत्रु, महान्) होकर भी,

पहुं पि णिप्परिग्गहं । हरं पि दुट्ठ-णिग्गहं ॥२७॥
सुहिं पि सुट्ठु-दूरयं । अ-विग्गहं पि सूरयं ॥२८॥
णिरक्खरं पि बुद्धयं । अमच्छरं पि कुद्धयं ॥२९॥
महेसरं पि णिद्धणं । गयं पि मुक्क-बन्धणं ॥३०॥
अरूवियं पि सुन्दरं । अ-वड्ढियं पि दीहरं ॥३१॥
अ-सारियं पि विरययं । थिरं पि णिच्च-पत्थयं' ॥३२॥
(णाराचं)

घत्ता

अग्गएँ थुणेंवि जिणिन्दहों भुवणाणन्दहों महियलें जण्णु-जोत्तु करेंवि ।
णासग्गाणिय-लोअणु अणिमिस-जोअणु थिउ मणें भवलु झाणु धरेंवि ॥३३॥

[१२]

बहुरूविणि-विज्जासत्त-मणु । णियमत्थु मुणेप्पिणु दहवयणु ॥१॥
तो जाय बोल्ल वलें राहवहों । सुग्गीवहों हणुवहों जम्बवहों ॥२॥
सोमित्तिहें अङ्गहों अङ्गयहों । स-गवक्खहों तह गवयहों गयहों ॥३॥
तारहों रम्भहों भामण्डलहों । कुमुयहों कुन्दहों णीलहों णलहों ॥४॥
अवरहु मि असेसहुँ किङ्करहुँ । एक्केण वुत्तु 'लइ किं करहुँ ॥५॥
अट्ठाहिएँ आहउ परिहरेंवि । थिउ सन्ति-जिणालउ पइसरेंवि ॥६॥
आराहइ लग्गइ एक्क-मणु । रावण-अवलोयणि दहवयणु' ॥७॥
तं सुणेंवि विहीसणु विण्णवइ । 'साहिय बहुरूविणि-विज्ज जइ ॥८॥
तो ण वि हउं ण वि तुहुँ ण वि य हरि वरि एहएं अवसरें णिहउ अरि ॥९॥

घत्ता

चोर-जार-अहि-वइरहुँ हुअवह-वमरहुँ जो अवहेरि करेइ णरु ।
सो अइरेण विणासइ वसणु पयासइ मूल-वलुक्कउ जेम तरु ॥१०॥

सर्ववत्सल हैं। आप वर (वधूयुक्त, प्रशस्त) होकर भी सदैव अकेले रहते हैं, आप प्रभु (स्वामी, ईश) होकर भी अपरिग्रही हैं, हर (शिव) होकर दुष्टोंका निग्रह करते हैं, सुधी (सुमित्र, पण्डित) होकर भी दूरस्थ हैं, विग्रहशून्य होकर भी आप सूर-वीर हैं, (वैरशून्य होकर भी अनन्त वीर हैं), निरक्षर (अक्षरशून्य, क्षयशून्य) होकर भी बुद्धिमान् हैं, आप अमत्सर होकर क्रुद्ध (कुपित, पृथ्वीको पताका) हैं, महेश्वर होकर भी निर्धन हैं, गज होकर भी बन्धनहीन हैं, अरूप होकर भी सुन्दर हैं, आप वृद्धिसे रहित होकर भी दीर्घ हैं, आत्मरूप होकर भी, विस्तृत हैं, स्थिर होकर भी नित्यपरिवर्तनशील हैं, इस प्रकार भुवनानन्ददायक जिनेन्द्रकी स्तुति कर, धरती तलपर रावणने नमस्कार किया, अपनी आँखोंको नाकके अग्रबिन्दु पर जमा कर अपलक नयन होकर उसने मनमें अविचल ध्यान प्रारम्भ कर दिया ॥१-२३॥

[१२] यह सुनकर कि रावण बहुरूपिणी विद्याके प्रति आसक्त होनेके कारण नियमकी साधना कर रहा है, राम, हनूमान, सुग्रीव और जाम्बवानकी सेनामें हल्ला होने लगा। सौमित्रि, अंग, अंगद, गवाक्ष, गवय, गज, तार, रम्भ, भामण्डल, कुमुद, कुन्द, नल और नीलमें खलबली मच गयी। और भी अनेक अनुचरोंमें-से एक ने कहा, "बताओ क्या करें" वह तो युद्ध छोड़कर शान्ति जिनमन्दिरमें प्रवेश कर बैठ गया है। वहाँ वह ध्यान कर रहा है। यदि कहीं उसे विद्या सिद्ध हो गयी तो न मैं रहूँगा और न आप और न ये वानर। अच्छा हो, यदि शत्रु अभी मार दिया जाय। चोर, जार, सर्प, शत्रु और आग, इन चीजोंकी जो मनुष्य उपेक्षा करता है वह विनाशको प्राप्त होता है, वह उसी प्रकार दुःख पाता है जिस प्रकार जड़

[१३]

सक्केण वि किय अवहेरि चिरु । जं बन्धाविउ वीसद्ध-सिरु ॥१॥
तं खउ अप्पाणहों आणियउ । णिसिहिँ अहियारु ण जाणियउ' ॥२॥
तं णिसुणेँवि सोराउहु भणइ । 'जो रिउ पणमन्तउ आहणइ ॥३॥
सो खत्तिय-कुलेँ कलङ्कु करइ । जो घरेँ पुणु वयसि ण परिहरइ ॥४॥
तहों किं पुच्छिज्जइ चारहडि । वरि भिन्दइ णिय-सिरेँ छार-हडि ॥५॥
जेत्तिउ दप्पु हुअउ संभवइ । तेत्तिउ पहरन्तहुँ जसु भमइ' ॥६॥
तं णिसुणेँवि कण्टइयङ्गएँहिँ । रहु-तणउ वुत्तु अङ्गङ्गएँहिँ ॥७॥
'मा खोहहुँ जाम झाणु दलिउ' । मणु हरेँवि कुमार-सेण्णु चलिउ ॥८॥

घत्ता

तं स-विमाणु स-वाहणु उक्खय-पहरणु णिएँवि कुमारहों तणउ बलु ।
णिसियर-णयरु पडोलिउ थिउ पच्चोलिउ महण-कालेँ णं उवहि-जलु ॥९॥

[१४]

जमकरण-लील-द्दरिसन्तएँहिँ । णयरब्भन्तरेँ पइसन्तएँहिँ ॥१॥
कञ्चण-कवाड-फोडन्तएँहिँ । सिय-तार-हार-तोडन्तएँहिँ ॥२॥
मणि-कोट्टिम-खोणि-खणन्तएँहिँ । 'अरेँ रावण रक्खु' भणन्तएँहिँ ॥३॥
अप्पंपरिहूअउ सव्वु जणु । साहारु ण बन्धइ हट्ट-मणु ॥४॥
तहिँ अवसरेँ सम्भासन्तु मउ । सण्णहेँवि दसासहों पासु गउ ॥५॥
थिउ अड्डेँवि साहणु अप्पणउ । किय-कालहों फेडिउ जम्पणउ ॥६॥
मन्दोअरि अन्तरेँ ताम थिय । 'किं रावण-घोसण ण वि सुहय ॥७॥
जं भावइ तं करन्तु [illegible]-णउ । णन्दीसरु जाम ताम समउ' ॥८॥

खोखली होनेपर पेड़ ॥१-१०॥

[१३] इन्द्र बहुत समय तक उपेक्षा करता रहा इसी लिए रावणने उसे बन्दी बनाया, इस प्रकार उसने खुद अपने विनाश-को न्यौता दिया। वह नीतिका अधिकारी जानकार नहीं था।" यह सुनकर रामने कहा, "जो प्रणाम करते हुए शत्रुओं मारता है, वह क्षत्रिय कुलमें आग लगाता है और फिर जो तपस्वीको भी नहीं छोड़ता, उसकी बहादुरीका पूछना ही क्या, इससे अच्छा तो यह है कि वह अपने सिर पर राखका घड़ा फोड़ ले। शत्रु जितना अजेय होता है, (उसके जीतनेपर) उतना ही यश फैलता है।" यह सुनकर उनके अंग-अंग रोमांचित हो उठे। उन्होंने कहा कि हम उसे क्षोभ उत्पन्न करते हैं कि जिससे वह अपने ध्यानसे डिग जाय। तब कुमारको विमानों, वाहनों और हथियार सहित सेनाको देखकर, निशाचरोंकी नगरीमें खलबली मच गयी, निशाचर-नगर अचरजमें पड़ गया कि कहीं यह समुद्रमन्थनका जल तो नहीं है? ॥१-९॥

[१४] मृत्यु लीलाका प्रदर्शन करते हुए नगरके भीतर प्रवेश करते हुए सोनेके किवाड़ और सफेद स्वच्छ द्वारोंको तोड़ते-फोड़ते हुए; मणियोंसे जड़ित धरतीको रौंदते हुए अंग और अंगद चिल्ला रहे थे कि रावण अपनेको बचाओ। लोगोंमें अपने परायेकी चिन्ता होने लगी। उनका पीड़ित मन सहारा नहीं पा रहा था। उस अवसर पर अभय देता हुआ मय संनद्ध होकर रावणके पास पहुँचा, और अपनी सेना अड़ाकर स्थित हो गया। उसने यमका वाहन तोड़ दिया। इतनेमें मन्दो-दरीने बीचमें पड़कर कहा कि क्या तुमने रावणकी घोषणा नहीं सुनी कि जो अन्याय उन्हें अच्छा लगे, वह वे करें; जब तक

घत्ता

तं णिसुणेँवि दूमिय-मणु आमेल्लिय-रणु मउ पवहइ अप्पणउ घरु ।
पञ्चियक्किमिय अङ्कुसय मत्त महागय णाइँ पइट्ठा पउम-सरु ॥९॥

[१५]

णवर पडिपक्कममाणेहिँ दोहिँ वि सुग्गीव-पुत्तेहिँ ।
अण्णाय-वत्तेहिँ उम्मिण्ण-खग्गेहिँ रेक्कारिओ रावणो ॥१॥
तह वि अमणो ण सीहं गओ सव्व-रायाहिरायस्स
णिक्कममाणस्स तइलोक्क-चक्केक्क-वीरस्स लङ्काहिवो ॥२॥
मलय-गिरि-विञ्झ-सम्मत्थ-केलास-किक्किन्ध-सम्मेय-
हेमिन्दकील-प्पगुरुझेम्ल-मेरुहिँ धीरत्तणं धारिणो ॥३॥
पवल-बहुरूविणी-दिव्व-विज्जा-महाकरिस-ज्झाण-दावग्गि-
जालावली-जाय-जज्जल्लमाणङ्ग-पव्भत्थिणो ॥४॥
असुर-सुर-वन्दि-मुक्कग्गुम्मिस्स-थोरंसु-धारा-
पुसिज्जन्त-णीलिम्विय-च्छत्त-चिन्ध-प्पहावालिणो ॥५॥
पणय-जम-चन्द-सूरग्गि-खगिन्द-देवाइ-चूडामणिन्दु-
प्पहा-वारि-धारा-समुद्धूय-पायारविन्दस्स से ॥६॥
गरुय-उवसग्ग-विग्घे समारम्भिए [ए?] समुग्गिण्ण-
णाणाउहं रुद्द-दट्ठाहरं जक्ख-सेण्णं समुद्धाइयं ॥७॥
फरुस-वयणाहिँ हक्कार-डक्कार-फेक्कार-हुङ्कार-
भीसावणं पिच्छिऊणं पणट्ठा कइन्दद्धया (?) ॥८॥

घत्ता

भग्गु कुमारहुँ साहणु गलिय-पसाहणु पच्छलेँ लग्गउ जक्ख-बलु ।
(णं) णव-पाउसेँ अइ-मन्दहोँ तारा-चन्दहो मेह-समूहु णाइँ स-जलु ॥९॥

नन्दीश्वर पर्व है तबतक सबको अभय है। यह सुनकर खिन्न-मन मय युद्ध छोड़कर अपने घर चला गया। अंग और अंगद बढ़ने लगे, मानो मतवाले हाथी कमलोंके सरोवरमें घुस गये हों ॥१-९॥

[१५] सुग्रीवके वे दोनों पुत्र, (अंग और अंगद) केवल बढ़ने लगे, अन्यायपर तुले हुए दोनोंने तलवारें निकालकर रावणको 'रे' कहकर पुकारा। तब भी अमन रावण क्षुब्ध नहीं हुआ। समस्त राजाओंका अधिराज अकम्प, त्रिलोक मण्डलका इकलौता वीर, इन्द्रका शत्रु, मलयगिरि, विन्ध्य, सह्याद्रि, कैलास, किष्किन्धा, सम्मेद, हेमेन्द्र, कालाञ्जन, उज्जयन्त और सुमेरु पर्वत-से भी अधिक धैर्यशाली, जिसकी प्रबल बहुरूपिणी विद्या और महापुरुषके ध्यानकी दावाग्निकी ज्वालमालासे अंग, चमड़ी और हड्डियाँ जल उठती थीं, जिसकी देवों और अदेवोंसे छोड़े गये काजलसे मिली हुई अश्रुधारासे मिश्रित और नीले छत्र-चिह्न और पताकाएँ भौंरोंके समान थीं, धनद, यम, चन्द्र, सूर्य, अग्नि, खगेन्द्र आदि देवता और भगवान् शिवके चूड़ा-मणिके चन्द्रकान्त मणिसे जलधारा फूट पड़ी, और उससे उनके चरणकमल धुल जाते। तब उसपर भारी उपसर्ग किये जाने लगे। तरह-तरहके हथियार उठाये हुए और अधरोंको भींचते हुए सेना उठी। हक्कार, डक्कार, फेक्कार और हुंकारादि कठोर शब्दोंसे भयंकर उसे देखकर कपीन्द्रके देवता कूच कर गये। कुमारोंकी सेना नष्ट हो गयी, सज्जा फीकी पड़ गयी; यक्ष सेना, उनका पीछा करने लगी, मानो नवी वर्षामें अत्यन्त कान्ति-हीन ताराओं और चन्द्रमाका पीछा सजल मेघसमूह कर रहा हो ॥१-९॥

[१६]

तहिँ अवसरेँ जणिय महाहवेँण । जं अक्खिउ पुच्छिउ राहवेँण ॥१॥
तं अक्खय-सेण्णु सेण्णहोँ पवरु । थिउ अग्गएँ खग्गुग्गिण्ण-करु ॥२॥
'अरेँ जणयहोँ रक्खहोँ किङ्करहोँ । जिह सक्कहोँ तिह रणेँ उत्थरहोँ ॥३॥
बलु बुज्झहोँ जुज्झहोँ आहयणेँ । पेक्खन्तु सुरासुर थिय गयणेँ ॥४॥
ता अच्छहुँ रावण-रामहु मि । समरङ्गणु अम्हहुँ तुम्हहु मि' ॥५॥
तं णिसुणेँवि दहमुह-चारिणएँहिँ । रोमञ्चिय सण्णिहरारक्खिएँहिँ ॥६॥
'दुम्मणुसहोँ दुट्ठहोँ दुम्मुहहोँ । जं किय रोहाइं दहमुहहोँ ॥७॥
तं सो ज्जि भणेसइ सव्वहु मि । तुम्हहँ हरि-बल-सुग्गीवहु मि' ॥८॥

घत्ता

तं णिसुणेँवि आसङ्किय माण-कलङ्किय उब्भय परिट्ठिय मुएँवि छलु ।
पुणु वि समुग्गय-खग्गा पच्छएँ लग्गा जाव पत्त रिउ राम-बलु ॥९॥

[१७]

बलु णरहिउ रक्ख-पहाणएँहिँ । बहु-भूय-मणिस्सय-जाणएँहिँ ॥१॥
'अहोँ णर-परमेसर दासरहि । अइ तुहु मि भणिज्जि एम करहि ॥२॥
सो होसइ कहोँ परिहास पुणु । णिक्खत्थु हणन्तहुँ कवणु गुणु' ॥३॥
तं सुणेँवि वुत्तु णारायणेँण । 'एँउ बोल्लिउ कवणेँ कारणेँण ॥४॥
अहोँ अहोँ जक्खहोँ दुच्चारिणहोँ । दुट्ठहोँ चोरहोँ परयारियहोँ ॥५॥
साहेज्जउ देन्तहुँ कवणु गुणु । किं मइँ आरुट्टें सत्ति पुणु' ॥६॥
तं णरहिउ देवहुँ चित्तेँ थिउ । 'सच्चउ अम्हेहिँ अजुत्तु किउ ॥७॥
सच्चउ विक्खारउ दहवयणु । ण समप्पइ पर-कलत्त-रयणु' ॥८॥

[१६] उस अवसर, महायुद्धके रचयिता राघवने जैसे ही 'अंघी' की पूजा की वैसे ही सेनामें प्रबल यक्ष सेना टूट पड़ी और अपनी तलवारें निकालकर उनके सामने स्थित हो गयी।' तब देवताओंने कहा, अरे रावणके अनुचरो, जिस तरह सम्भव हो, युद्धमें आक्रमण करो, अपनी ताकत तौलकर युद्धमें लड़ो।' देखनेके लिए देवता आकाशमें स्थित हो गये।" यक्षोंने कहा, "राम और रावणका युद्ध रहे, अभी हमारी तुम्हारी भिड़न्त हो ले।" यह सुनकर, शान्तिनाथ मन्दिरकी रक्षा करनेवाले रावण पक्षके अनुचरोंने उन्हें डाँटा और कहा, "अरे दुर्मन, दुष्टो, तुमने रावण-के साथ धोखा किया है, अब वही रावण तुम सबको और रामकी सेना और सुग्रीवको मजा चखायेगा।" यह सुनकर आशंकासे भरे हुए और कलंकित मान यक्ष छल छोड़कर भाग खड़े हुए, फिर भी तलवार उठाये हुए वे पीछा करने लगे। इतने में शत्रु रामकी सेना आ गयी ॥१-९॥

[१७] तब बहुत-से भूत और भविष्यको जाननेवाले प्रधान रक्षकोंने रामकी निन्दा करते हुए कहा—"हे मनुष्य श्रेष्ठ राम, यदि तुम्हीं इस तरह अन्याय करते हो तो फिर किसका परि-हास होगा? साधनामें रत व्यक्ति पर आक्रमण करनेमें कौन-सा गुण है" यह सुनकर नारायणने कहा—"तुम यह किस कारण कहते हो; अरे चरित्रहीन यक्षो, दुष्ट चोरो, दूसरेकी स्त्रीका अपहरण करनेवालो, तुम्हें अनुगृहीत करनेमें क्या लाभ? मेरे रूठनेपर क्या शान्ति रह सकती है?" यह निन्दा यक्षोंके मनमें बैठ गयी। वे सोचने लगे, हमने सचमुच अनु-चित काम किया, सचमुच रावण बुरा करनेवाला है, यह दूसरे-

घत्ता

एम भणेंवि स-विलक्खेंहिं वुच्चइ जक्खेंहिं 'हरि अवराहु एक्कु खमहि ।
अण्ण वार जइ आवहुँ मुहु दरिसावहुँ तो सइँ भुएँहिं सव्व दमहि' ॥९॥

●

७२. दुसत्तरिमो संधि

पुण वि पडीवएँहिं जिणु जयकारेंवि विक्कम-सारेंहिं ।
लङ्कहिं गमणु किउ अङ्गङ्गय-पमुहे [हिं] कुमारेंहिं ॥

[१]

वेढाइएँहिं उक्खय-खग्गेंहिं ।
पवर-विमाणेंहिं धवल-धयग्गेंहिं ॥१॥
पउम-विसन्तेंहिं लङ्क णिहालिय ।
णाइँ विलासिणि कुसुमोमालिय ॥२॥ (अब्भेडिया)
जा ण वि लङ्घिज्जइ रवि-रहहिँ । दहवस-तुरङ्गम-मय-गयहिँ ॥३॥
जहिँ मत्त-महागय-मच्छरेंहिं । गज्जेवउ छण्डिउ जलहरेंहिँ ॥४॥
जहिँ पहरें पहरें ओसरइ दूरु । बहु-सूरहुँ उवरि ण जाइ सूरु ॥५॥
जहिँ रामाणण-चन्देंहिं चन्दु पंक्खिज्जइ किज्जइ तेय-मन्दु ॥६॥
जहिँ उण्हु ण णावइ अहिणवेण । बहु-पुण्डरीय-किय-मण्डवेण ॥७॥
जहिँ पाउसु करि-कर-सीयरेंहिं । उट्ठन्ति णइउ दाणोज्झरेंहिं ॥८॥
मणि-भवणिहिँ तुरय-खुरेंहिं पंसु । घोलइ रविकन्त-पहाएँ हंसु ॥९॥
मोत्तिय-रङ्गेण णक्खत्त-मग्गु । बहु-चन्दकन्ति-कन्तीएँ चन्दु ॥१०॥

की स्त्री वापस नहीं देता"। यह सोचकर बिलखते हुए यक्षोंने कहा, "हे राम, आप हमारा एक अपराध क्षमा करें; यदि हम दुबारा आयें और आपको अपना मुँह दिखायें तो अपने हाथों हम सबका दमन कर देना" ॥१-९॥

●

बहत्तरवीं सन्धि

पराक्रममें श्रेष्ठ अंग और अंगद वीरोंने, जिन भगवान्की जय बोलकर फिरसे लंका नगरीकी ओर कूच किया।

[१] क्रोधसे अभिभूत तलवार उठाये हुए, बड़े-बड़े विमानोंमें, धवल ध्वजोंसे सजे हुए, पहले-पहल घुसते हुए उन्होंने लंका नगरी देखी; जैसे फूल-मालाओंसे सजी हुई कोई विलासिनी हो; रावणके घोड़ोंसे भयभीत सूर्यके अश्व उसको लाँघ नहीं पाते। जिसमें मतवाले हाथियोंकी गर्जनासे मेघोंने गरजना छोड़ दिया है, जिसमें सूर्य पहर-पहरमें दूर हटता जाता था, क्योंकि वह शूर-वीरोंकी उस नगरीके ऊपरसे नहीं जा सकता। जहाँ स्त्रियोंके मुखचन्द्रोंसे पीड़ित चन्द्रमा अपना तेज छोड़ देता है। जिसमें नये कमलोंसे बने नये मण्डपोंमें गरमी नहीं जान पड़ती। हाथियोंकी सूँड़ोंके जलकणोंसे जहाँ वर्षा जान पड़ती और मन्दजलकी धाराओंसे नदियोंमें बाढ़ आ जाती, जिसमें घोड़ोंकी टापोंसे उड़ी हुई मणिमय भूमिकी धूल सूर्यकान्ति मणिकी आभासे सूर्यकी तरह लगती, मोतियोंके बहाने नक्षत्र समूह, बहुत-से चन्द्रकान्त मणियोंकी कान्तिसे चन्द्रमाकी

घत्ता

किं रवि किरण ससि   अण्ण वि जे जियन्ति मायारें ।
णिप्पह बहु-पिसुण   अवसें जन्ति सयण-उत्थारें ॥११॥

[२]

दिट्ठु स-मोत्तिउ   रावण-पङ्गणु ।
णाइँ स-तारउ   सरय-णहङ्गणु ॥१॥
बहु-मणि-कुट्टिमु   बहु-रयणुज्जलु ।
णाइँ विसट्टउ   रयणायर-जलु ॥२॥
चिन्ताविय 'केत्तहुँ जाहुँ देहुँ ।   मण-खोह दयावहीँ किह करेहुँ' ॥३॥
किर चन्दण-छडा-मग्गेण जन्ति ।   कद्दम-भइयएँ ण पईसरन्ति ॥४॥
किर फलिह-पएसेँ समुच्चलन्ति ।   आयासासङ्कएँ पुणु वलन्ति ॥५॥
मरगय-विद्दुम-मेइणि णिएवि ।   पउ देन्ति ण 'किरणावलि' भणेवि ॥६॥
पेक्खेँवि आलेक्खिम-सप्प-सयइँ ।   'डसेसहुँ' भणेँवि ण दिन्ति पयइँ ॥७॥
पइँ लग्गा णीलमणि-सार-रूएँ ।   चिन्तविउ 'पडेसहुँ अन्धकूएँ' ॥८॥
पुणु गय ससिकन्त-मणि-प्पहेण ।   ओसरिय 'विलेसहुँ किं दहेण' ॥९॥
गय सूरकन्ति-कुट्टिम-पहेण ।   सङ्किय 'डज्झेसहुँ हुअवहेण' ॥१०॥

घत्ता

ढुक्कय-पट्टु तहिँ   ससिकर-हणुवङ्गय-तारा ।
णाइँ विरुद्ध-मण   जम-सणि-राहु-केउ-अङ्गारा ॥११॥

[३]

हसइ व रिउ-घरु   सुह-चय-बन्धुरु ।
विद्दुमयाहरु   मोत्तिय-दन्तुरु ॥१॥

तरह प्रतीत होता है। क्या सूर्य, क्या तारे, क्या चन्द्रमा और भी जो अपने व्यापार (गमन) हैं, वे दुष्ट स्वजनके उत्थानसे अवश्य कान्तिहीन हो जाते हैं ॥१-१०॥

[२] मोतियोंसे जड़ा हुआ रावणका आँगन ऐसा लगा मानो ताराओंसे जड़ा शरदका आँगन हो; बहुत-से रत्नोंसे उज्ज्वल और मणियोंसे निर्मित धरती ऐसी लगती मानो रत्नाकरका विशिष्ट जल हो; वे सोचने लगे कि कहाँ पैर रखा जाय और किस प्रकार रावणको क्षुब्ध किया जाय; शायद वे चन्दनके छिड़कावके मार्गसे जाने पर कीचड़के भयसे पैर नहीं रख पाते; शायद स्फटिक मणियोंके रास्ते जाते परन्तु आकाशकी आशंकासे लौट आते; पन्नों और मूँगोंकी धरती देखकर, वे समझते कि यह किरणावलि है, इसलिए पैर नहीं रखते; चित्रोंमें सैकड़ों साँपोंको चित्रित देखकर; वे इसलिए उनपर पैर नहीं रखते कि कहीं काट न खायें; फिर भी नील मणियोंसे बने हुए मार्गपर जाते हैं, परन्तु फिर सोचते हैं कि कहीं अन्धकूपमें न चले जाँय। फिर वे चन्द्रकान्त मणियोंके पथपर जाते हैं, परन्तु लौट आते हैं कि कहीं तालाबमें न डूब जाँय, फिर वे सूर्यकान्त मणियोंके पथसे गये, पर शंका होती है कि कहीं आगमें न जल जाँय। दुःखसे प्रवेश पानेवाले चन्द्रकिरण, हनुमान्, अंग, अंगद और तारा ऐसे लगते मानो यम, शनि, राहु, केतु और अंगार हों ॥१-११॥

[३] शत्रुका घर हँस-सा रहा था, वह मुखपटसे सुन्दर था, मूँगा उसके अधर थे, मोती ही दाँत थे, सुमेरु पर्वतकी तरह मस्तकसे आसमान छूता हुआ-सा, यह देखनेके लिए तुम्हारे-हमारे बीचमें कौन अधिक ऊँचा है, जो चन्द्रकान्त

छिवइ व मत्थए मेरु-महीहरु ।
'तुम्हु वि मज्झु वि कवणु पईहरु' ॥२॥

जं चन्दकन्त-सलिलाहिँ सित्तु । अहिसेय-पणालु व फुसिय-चित्तु ॥३॥
जं विद्दुम-मरगय-कन्तियाहिँ । थिउ गयणु व सुरधणु-पन्तियाहिँ ॥४॥
जं इन्दणील-मालए-समीवें । आलिहइ व दिस-भित्तीउ लीएँ ॥५॥
जहिँ पोमराय-मणि-गणु विहाइ । थिउ अहिणव-सञ्झा-राउ णाइँ ॥६॥
जहिँ सूरकन्ति-संकुज्जमाणु । गउ उत्तरएसहोँ णाइँ भाणु ॥७॥
जहिँ चन्दकन्ति-मणि-चन्दियाउ । णव-चन्द-कमासेँ वन्दियाउ ॥८॥
'अच्चरिउ' कुमार चवन्ति एव । 'बहु-चन्दोहूयउ गयणु केम' ॥९॥
पेक्खेविणु मुत्ताहल-णिहाय । 'गिरि-णिज्झर' भणेंवि छुहन्ति पाय ॥१०॥

घत्ता

तं दहवयण-घरु ते कुमार मणि-तोरण-दारेँहिं ।
वर-वायरणु जिह अ-बुह पइट्ठा पच्चाहारेँहिं ॥११॥

[५]

पइठ कइद्धय भवणब्भन्तरे ।
णं पञ्चाणण गिरिवर-कन्दरे ॥१॥
पवर-महाणइ- णिवह व सायरे ।
रवि-किरणा इव अत्थ-महीहरे ॥२॥

धावन्ति के वि ण करन्ति खेउ । खम्भेहिँ थिवन्ति मेल्लन्ति वेउ ॥३॥
बहु-फलह-सिला-भित्तिहिँ भिडेवि । सरुहिर-सिर परियत्तन्ति के वि ॥४॥
के वि इन्दणील-णीलेहिँ जाय । केहि मि थिय तुरहँ एत्थु आय ॥५॥
जच्चन्ध-लील के वि दरिसवन्ति । उट्ठन्ति पडन्ति मिलेंवि भिडन्ति ॥६॥
के वि सूरकन्त-कन्तीहिँ भिण्ण । बहु सूरएँ मेल्लेवि पुरेँ पइट्ठ ॥७॥

मणियोंकी धाराओंसे अभिषिक्त था, अभिषेककी धाराओंके समान साफ-सुथरा था, जो मूँगों और मरकत मणियोंकी आभासे ऐसा लगता मानो इन्द्रधनुषकी धाराओंसे युक्त गगन हो, जो इन्द्रनील मणियोंकी मालाओंसे ऐसा लगता मानो दीवालपर स्त्रियाँ चित्रित कर दी गयी हों, उसमें पद्मराग मणियोंका समूह ऐसा शोभित था जैसे संचित सान्ध्य लालिमा हो, जहाँ सूर्यकान्त मणियोंसे खिन्न होकर, सूर्य उत्तर दिशाकी ओर चला गया, जहाँ चन्द्रकान्त मणियोंके खण्ड नये चन्द्रोंके समान लगते हैं, उन्हें देखकर कुमार आपसमें कह रहे थे, यहाँ तो बहुत-से चन्द्र हैं, क्या यह आकाश है, मोतियोंके समूहको देखकर वे समझ बैठते कि यह कोई पहाड़ी झरना है, और वे उसमें अपने पाँव धोने लगते। उन कुमारोंने मणि-तोरणवाले द्वारोंसे रावणके घरमें उसी प्रकार प्रवेश किया, जिस प्रकार अज्ञ लोग प्रत्याहारोंके माध्यमसे उत्तम व्याकरणमें प्रवेश करते हैं ॥१–११॥

[४] अंग अंगद आदि कपिध्वजियोंने भवनके भीतर प्रवेश किया, मानो सिंहोंने गिरिवरकी गुफाओंमें प्रवेश किया हो। मानो महानदियोंके समूहने समुद्रमें प्रवेश किया हो। मानो सूर्यकी किरणोंने अस्ताचल पर्वतमें प्रवेश किया हो। क्षोभ न करते हुए कितने ही वानर दौड़े, परन्तु खम्भोंसे टकरा कर उनका वेग धीमा पड़ गया; बहुत-सी स्फटिक मणियोंकी शिलाओं द्वारा टकरा जानेसे उनके सिर लोहूलुहान हो उठे। कितने ही इन्द्रनील पर्वत से नीले हो गये; और किसी प्रकार अपने को बचा सके। कोई अपनी जातीय लीलाका प्रदर्शन करते हुए उठते गिरते और चट्टानोंसे जा टकराते। कितने ही सूर्यकान्त मणिकी ज्वालासे जल उठे, वे शूरवीरता छोड़कर नगरमें चले

कें वि चन्दकन्त-कन्तेहिँ जाय । मुह-चन्दहों उप्परि णाइँ आय ॥८॥
कें वि पउमराय-कर-णियर-सवन्न । णं अहिणव-रण-लीलावलम्ब ॥९॥
कें वि आलेक्खिय-कुञ्जरहों तट्ठ । कें वि सीहहुँ कें वि पण्णयहुँ णट्ठ ॥१०॥

घत्ता

णिग्गय तहों घरहों पुणु वि पओवा तेहिँ जि बारेंहिँ ।
उब्भय-महीहरहों रवि-यर णाइँ अणेयागारेंहिँ ॥११॥

[५]

तं दहमुह-घरु मुएँवि विसालउ ।
गय परिओसें सन्ति-जिणालउ ॥१॥
तहिँ पइसन्तेंहिँ दिट्ठु स-णेउरु ।
रामण-केरउ हुद्धन्तेउरु ॥२॥
चिहुरेंहिँ सिहण्डि-ओलम्बु णाइँ । कुरुलेंहिँ इन्दिन्दिर-विन्दु णाइँ ॥३॥
भउहेंहिँ अणङ्ग-धणुहर-लय व्व । णयणेंहिँ णीलुप्पल-काणणं व ॥४॥
मुह-बिम्बेंहिँ मयलञ्छण-कुलं व । कल-वाणिहिँ कल-कोइल-कुलं व ॥५॥
कोमल-बाहेंहिँ लयाहरं व । पाणिहिँ रत्तुप्पल-सरवरं व ॥६॥
णक्खेंहिँ केअइ-सूई-थलं व । सिहिणेंहिँ सुवण्ण-घड-मण्डलं व ॥७॥
सोहग्गें वम्मह-साहणं व । रोमावलि-णाइणि-परियणं व ॥८॥
तिवलिहिँ अणङ्ग-पुरि-खाइयं व । गुज्झेंहिँ मयण-मउजग-हरं व ॥९॥
ऊरुहिँ तरुण-कैली-वणं व । चलणग्गेंहिँ पल्लव-काणणं व ॥१०॥

घत्ता

हंस-उलु व गइ (ए) हिँ कुञ्जर-जूहु व वर-लीलाहिँ ।
चाव-वलु व गुणेंहिँ ऊण-ससि-विम्बु-व सयल-कलाहिँ ॥११॥

गये। कोई चन्द्रकान्त मणियोंकी कान्तिसे ऐसे हो गये जैसे चन्द्रमाके ऊपर उनकी स्थिति हो। कितने ही पद्मराग मणियोंके समूहसे लाल लाल हो उठे मानो उन्होंने युद्धकी अभिनव लीलाका अनुसरण किया हो; कितने ही चित्रोंमें लिखित हाथियोंसे त्रस्त हो उठे, कोई सिंहोंसे और कोई नागों-से भयभीत हो उठे। वे वानर उन्हीं द्वारोंसे घरसे बाहर हो गये, जिनसे गये थे, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार उदयाचलसे सूर्यकी किरणें नाना रूपोंमें निकल जाती हैं ॥१-११॥

[५] रावणके उस विशाल घरको छोड़कर, वानरोंने सन्तोषकी साँस ली। वे भगवान शान्तिनाथके जिनमन्दिरमें पहुँचे। वहाँ उन्होंने देखा कि रावणका सनूपुर अन्तःपुर स्थित है, जो केशोंसे मयूर कलापकी भाँति शोभित है; कुटिल केश-पाशमें भ्रमरमालाकी तरह, भौंहोंमें कामदेवका धनुषलताकी तरह; नेत्रोंमें नीलकमलवनकी तरह, मुखबिम्बमें चन्द्रमाकी तरह; सुन्दर बोलीमें सुन्दर कोकिल कुलकी भाँति; कोमल बाहुओंमें लताघरकी भाँति; हथेलियोंसे लाल कमलोंके सरोवरकी तरह; नखोंमें केतकी कुसुमके काँटोंके अग्रभागों-की तरह; स्तनोंमें स्वर्ण कलशोंकी तरह; सौभाग्यमें काम-देवकी प्रसाधन सामग्रीकी तरह; रोमावलीमें नागिनोंके परिजनोंकी तरह; त्रिवलिमें कामदेवकी नगरीकी खाईकी तरह; गुह्यांगमें कामदेवके स्नानघरकी तरह; ऊरुओंमें तरुण कदलीवनकी तरह; चरणोंके अग्रभागमें पल्लवोंके काननकी भाँति; जो शोभित था। गमनमें जो हंस कुलकी भाँति; वर क्रीड़ाओंमें हाथियोंके शुण्डोंकी भाँति; गुणोंमें धनुष-शक्तिकी भाँति और सम्पूर्ण कलाओंमें पूर्णिमाके चन्द्रमाकी भाँति शोभित था ॥१-११॥

[६]

'अवि य णरिन्दहो सव्व-सय-चिण्णहो ।
काइँ करेसहुं माणुत्तिण्णहो ॥१॥
वरि अब्भासहुँ' एव भणन्तु व ।
थिउ रमणिहिँ णिय- हियएँ गुणन्तु व ॥२॥
सिर-णमणु जिणाहिव-वन्दणेण । पिय-वन्धणु कुवलय-णिवन्धणेण ॥३॥
मवहा-विधंसणु पच्चणेण । [illegible] ॥४॥
णासउड-फुरणु फुल्लक्खणेण । परिचुम्बणु वंसाकरणेण ॥५॥
अहरक्कणु चोंडी-खण्डणेण । पिय-कण्ठ-ग्गहणु सुहावणेण ॥६॥
अहिसेय-कलस-कण्ठ-ग्गहेण । अवरुण्डणु थम्भालिङ्गणेण ॥७॥
पिय-काडणु छेयाकड्ढणेण । कुडमालणु वीणा-वायणेण ॥८॥
कर-घायणु झिन्दुय-घायणेण । सिक्कारु कुसुम आसवणेण ॥९॥
कम-घाउ असोय-पहरणेण ॥१०॥

घत्ता

कुङ्कुम-चन्दणहुँ सेअ-फुडिङ्ग वि गरुआ भारा ।
किं पुणु कुण्डलहुँ कडय-मउड-कडिसुत्ता हारा ॥११॥

[७]

काइ वि देविउ काइ वि णारिहिँ ।
दिण्णि सु-पेसणु पेसणयारिहि ॥१॥
'हउँ ललियङ्गिए लइ णारङ्गइँ ।
जाइँ जिणिन्दहो अमण-जोग्गइँ ॥२॥
हउँ दाडिमीएँ दाडिमइँ देहि । बिज्जउरिएँ बिज्जउराइँ लेहि ॥३॥
बहुफलिएँ सुअन्धइँ बहुफलाइँ । रत्तुप्पलीएँ रत्तुप्पलाइँ ॥४॥
इन्दीवरीएँ इन्दीवराइँ । सयवत्तिएँ सयवत्ताइँ वराइँ ॥५॥

[६] अन्तःपुर सोच रहा था कि हम क्या करें ? क्योंकि सैकड़ों घावोंसे चिह्नित प्रिय अभी ध्यानमें लीन है। वह जैसा कह रहा था कि चलो हम भी अभ्यास करें। इस प्रकार रातमें अपने मनमें विचार करता हुआ वह बैठ गया। जिन-राजकी वन्दनामें ही उसका सिर नमन था; फूलोंके निब-न्धनमें ही प्रिय बन्धन था; गुणमें ही मौर्वीका निबंध था, दर्पण देखनेमें ही नेत्रोंका शिकार था; फूल सूँघनेमें ही नाक फड़कती थी, बाँसुरी बजानेमें ही चुम्बन था, पान खानेमें ही अधरोंमें ललाई थी. सुहावने अभिषेक कलशके कण्ठ ग्रहणमें प्रियका कण्ठ ग्रहण था; खम्भेके आलिंगनमें ही आलिंगन था; घूँघट काढ़नेमें ही प्रियका दुराव था; गेंदके आघातमें ही करका आघात था; फूलोंके लगानेमें ही सीत्कारकी ध्वनि थी; अशोकपर प्रहार करनेपर ही चरणाघात होता था। रावणका जो अन्तःपुर कुंकुम चन्दन आदिके भी लेपभारको सहन नहीं कर सकता था, तो फिर कुण्डल, कटिसूत्र, कटक और मुकुट और हारोंकी तो बात ही क्या है ॥१–११॥

[७] कोई देवी, आज्ञापालन करनेवाली स्त्रियोंको सुन्दर आदेश दे रही थी, "हे ललिताङ्गे तुम नारंगी ला दो, जो जिनेन्द्र भगवान्‌की अर्चा करने योग्य हो। अरे दाड़िमी, तू सुन, दाड़िम लाकर दे, हे विद्याकरी, तुम विद्यापुर ले लो, हे बहु-फलिते, तुम सुगन्धित बहुत-से फल ले लो, हे रक्तोत्पले, तुम रक्तकमल ले लो, हे इन्दीवरे, तुम इन्दीवर ले लो, हे शतपत्रे,

कुसुमिएँ कुसुमेंहिँ अच्चण करेहि । मणिदीविएँ मणि-दीवउ धरेहि ॥६॥
कप्पूरिएँ करेँ कप्पूर-दालि । विद्दुमिएँ पडावहि विद्दुमालि ॥७॥
मुत्तावलि लइ मुत्तावलीउ । संचूरेंवि सुहु रङ्गावलीउ ॥८॥
मरगएँ मरगय-वेइहेँ चडेवि । सम्मज्जणु करेँ कमलाइँ लेवि ॥९॥
हलेँ लयलिएँ चन्दण-लट्ठउ देहि । गन्धावलि गन्धु लएवि एहि ॥१०॥
कुङ्कुमलेहिएँ लइ घुसिण-सिप्पि । आलावणि आलावेहि किं पि ॥११॥
किण्णरिएँ तुरिउ किण्णरउ लेहि । तिलयावलि तिलय-पयाइँ देहि' ॥१२॥
आयएँ लीलएँ अच्छन्ति जाव । आसण्णीहूअ कुमार ताव ॥१३॥

घत्ता

रावण-जुवइ-यणु अक्कन्थ णियवि आसङ्किउ ।
णं करि-करिणि-थडु सीहालोयणेँ माण-कलङ्किउ ॥१४॥

[८]

सन्ति-जिणालएँ भामरि देप्पिणु ।
सन्ति-जिणिन्दहो पणवण करेप्पिणु ॥१॥
पासु दसासहो दुक्क कइद्धय ।
णाइँ मइन्दहो मत्त महागय ॥२॥
उग्गालेँवि हत्थहों अक्ख-सुत्तु । दरसिउ सुग्गीव-सुएण सुत्तु ॥३॥
'पेक्खु काइँ राय आढत्तु कम्मु । थिउ णिच्चलु णं पाहाण-खम्भु ॥४॥
तउ कवणु घोरु को वाउह्लिमाणु । सा कवण विज्ज हुउ कवणु झाणु ॥५॥
उप्पाइय लोयहुँ काइँ भन्ति । पर-णारि लयन्तहों कवण सन्ति ॥६॥
किं भाणुकण्ण-इन्दइ-दुहेण । णउ बोल्लहि एक्केण वि मुहेण ॥७॥
किं लक्खण-रामहुँ ओसरेंवि । थिउ सन्तिहेँ भवणु पईसरेंवि' ॥८॥

तुम शतपत्र ले लो, हे कुसुमिते, तुम कुसुमोंसे पूजा करो, हे मणिदीपे, तुम मणिदीप स्थापित करो, हे कपूरी, तुम कपूर जला दो, हे विद्रुमयी, तुम विद्रुमाला चढ़ा दो, मुक्तावली, तुम मोती की माला चूर कर शीघ्र ही रांगोली पूर दो, हे मरकते, तुम मरकत वेदीपर चढ़कर कमलोंसे उनका परिमार्जन करो, हे लवली, तुम चन्दनका छिड़काव करो, हे गन्धावली, तुम गन्ध लेकर आओ, हे कुंकुमलेखे, तुम केशरका पुट लेकर आओ, हे आलापिनी, तुम कुछ भी आलाप करो, हे किन्नरी, तुम अपना किन्नर (वीणा विशेष) ले लो, हे तिलकावली, तुम अपने तिलकपद रखो।' वे इस प्रकार लीला करती हुई समय बिता रही थी कि इतनेमें कुमार वहाँ आ पहुँचे। अंग और अंगदको देखकर रावणका युवतीजन सहसा आशंकामें पड़ गया, मानो हाथी और हथिनियोंका समूह सिंहको देखकर गलित मान हो उठा हो ॥१–१४॥

[८] तब कपिध्वजी शान्ति जिनालयमें पहुँचे। प्रदक्षिणा देकर उन्होंने जिन भगवान्‌की वन्दना की। फिर वे रावणके पास पहुँचे, मानो सिंह के पास हरिण पहुँचे हों। रावणके हाथसे अक्षमाला छीनकर सुग्रीवसुतने उससे कहा, "हे राजन्, तुमने यह क्या ढोंग कर रखा है, तुम तो ऐसे अचल हो जैसे पत्थरका खम्भा हो, यह कौन-सा तप है, कौन-सा धीरज है, कौन-सा चिह्न है, वह कौन-सी विद्या है, यह कौन-सा ध्यान है, तुम लोगोंमें व्यर्थ भ्रान्ति क्यों उत्पन्न कर रहे हो। सोचो, दूसरेकी स्त्रीका अपहरण करनेसे तुम्हें शान्ति कैसे मिल सकती है ? अरे क्या तुम इन्द्रजीत और भानुकरणके दुःखके कारण एक भी मुखसे नहीं बोल पा रहे हो ? क्या तुम राम और लक्ष्मणसे बचकर शान्तिनाथ भगवान्‌के मन्दिरमें छिपकर

णिवमच्छेँ वि एम कइद्धएहिँ । महएविउ वेढाविद्धएहिँ ॥९॥
आढत्तउ बन्धहुँ धरहुँ लेहुँ । विच्छायहुँ दारहुँ हणहुँ णेहुँ ॥१०॥

घत्ता

तहोँ अन्तेउरहोँ भउ उप्पण्णु अणेहिँ भिडन्तेंहिँ ।
णं णलिणी-वणहोँ मत्त-गइन्देंहिँ सरु पइसन्तेंहिँ ॥११॥

[९]

का वि वरङ्गण कड्ढिय थाणहो ।
कुसुम-लया इव वर-उज्जाणहो ॥१॥
सामल-देहिय हार-पयासिरी ।
स-बलायावलि णं पाउस-सिरि ॥२॥
क वि कड्ढिय णेउर-चलवलन्ति । सरवर-लच्छि व कमल-कलयलन्ति ॥३॥
क वि कड्ढिय रसणा-दाम लेवि । सु-णिहि व्व भुअङ्गमु वसिकरेवि ॥४॥
क वि कड्ढिय तिवलिउ दक्खवन्ति । कामाउरि-परिहउ पायडन्ति ॥५॥
क वि कड्ढिय मसाण-भयहोँ जन्ति । किस-रोमावलि-णवसुन्दरन्ति ॥६॥
क वि कड्ढिय थण-यलसुव्वहन्ति । लायण्ण-वारि-पूरें व तरन्ति ॥७॥
क वि कड्ढिय कर-कमलइँ धुणन्ति । छप्पय-रिञ्छोलि व सुच्छलन्ति (?) ॥८॥
क वि कड्ढिय सव्वहुँ सरणु जन्ति । मुत्तावलि वि कण्ठएँ धरन्ति ॥९॥
क वि कड्ढिय 'हा रावण' भणन्ति । दीहर-भुव-पञ्जरें पइसरन्ति ॥१०॥

घत्ता

जाहँ गइन्द-ससि वरहिण-हरिण-हंस-सयणिज्जा ।
ताहँ विचक्खणहुँ अवसेँ सूर ण होन्ति सहेज्जा ॥११॥

बैठे हो ?" कपिध्वजियोंने उसकी इस प्रकार खूब निन्दा की, और फिर ईर्ष्यासे भरकर कहना शुरू कर दिया—"बाँधूँ पकड़ूँ, ले लूँ, बिखरा दूँ, विदीर्ण कर दूँ, मार ले जाऊं।" योद्धाओंकी इस आपसी भिड़न्तसे रावणका अन्तःपुर ऐसा भयभीत हो उठा जैसे मतवाले हाथियोंके प्रवेशसे कमलिनियों का वन अस्त-व्यस्त हो उठता है ॥१–११॥

[९] कोई उत्तम अंगना, अपने घरसे ऐसे निकल आयी, मानो कोई श्रेष्ठ लता, उद्यानसे अलग कर दी गयी हो। उसके श्यामल शरीर पर बिखरा हुआ हार ऐसा लगता था, मानो पावसकी शोभामें बगुलोंकी कतार बिखरी हुई हो। कोई अपने नूपुर चमकाती हुई ऐसी निकली, मानो सरोवरकी शोभा कमलोंपर फिसल पड़ी हो, कोई बाला अपनी करधनीके साथ ऐसी निकली, मानो नागको वशमें कर लेनेवाली कोई सुनिधि हो, कोई अपनी त्रिवलीका प्रदर्शन करती हुई ऐसी निकली, जैसे कामातुरता-जन्य अपनी पीड़ा दिखा रही हो, कोई निकल कर मर्दनके डरसे आतंकित होकर जा रही थी, अपनी काली रोमराजीके खम्भेका उद्धार करती हुई। कोई अपने स्तनयुगलका भारवहन करती हुई ऐसे जा रही थी, मानो सौन्दर्यके प्रवाहमें तिर रही हो। कोई अपने दोनों करकमल पीटती हुई जा रही थी, उससे भौंरोंकी कतार उछल पड़ रही थी। कोई निकलकर किसीकी भी शरणमें जानेके लिए प्रस्तुत थी, फिर भी मोतीकी मालाने उसे गलेमें पकड़ रखा था। कोई निकलकर, 'हे रावण' चिल्ला रही थी, और उसकी बाँहोंके लम्बे अन्तरालमें प्रवेश पाना चाह रही थी। गजराज, चन्द्रमा, मयूर, हरिण और हंस जिनके स्वजन और सहायक होते हैं, उनके व्याकुल होनेपर, शूर (विवेकी, राम जैसे पुरुष)

[१०]

का वि णियम्बिणि सिढिल--णियंसण ।
केस-विसंथुल पगलिय-लोयण ॥१॥
उब्भिय-करयल मुह-विच्छाइय ।
दइयहों अग्गएँ रुअइ वराइय ॥२॥
'अहो दुद्दम-दाणव-दप्प-दलण । सुर-मउड-णिहामणि-किरिय-चलण ॥३॥
जम-महिस-सिङ्ग-णिव्वलण-णिहट्ट । सुरकरि-विसाण-मूरण-पहट्ठ ॥४॥
परमेसर किं ओहट्ट-थामु । किं रावणु अण्णहों कहों वि णामु ॥५॥
किं अण्णें साहिउ चन्दहासु । किं अण्णें धणयहों किउ विणासु ॥६॥
किं अण्णें वसिकिउ उद्ध-सोण्डु । वण-हत्थि तिजगभूसणु पचण्डु ॥७॥
किं अण्णें भग्गु कियन्त-राउ । किं अण्णहों वसें सुग्गीउ जाउ ॥८॥
किं अण्णें गिरि कइलासु वेध । हेलएँ जें तुलिउ बिन्दुवइ जेम ॥९॥
किं अण्णें णिज्जिउ सहसकिरणु । फेडिउ णलकुब्बर-सक्क-फुरणु ॥१०॥

घत्ता

किं अण्णहों जि भुव वरुण-णराहिव-धरण-समत्था ।
अज्जु मुहुँ दहवयणु सो किं अच्छहुँ एह अवत्था' ॥११॥

[११]

सो वि ण झाणहों टलिउ राणउ ।
अचलु णिरारिउ मेरु-समाणउ ॥१॥
जोगि व सिद्धिहें रासु व भज्जहें ।
लिद्ध लग्गय-मणु थिउ पहु विज्जहें ॥२॥

सहायक नहीं होते ॥१-११॥

[१०] किसी वनिताके वस्त्र एकदम ढीले ढाले थे, बाल बिखरे हुए, और आँखें गीली-गीली। दोनों हाथोंसे मुखको ढककर वह बेचारी प्रियके सम्मुख रो रही थी,—"अरे दुर्दम दानवोंका दमन करनेवाले ओ रावण, तुम्हारा चरण देवताओंके मुकुटोंके शिखरमणि पर अंकित है। तुमने यमरूपी महिषके सींगोंको उखाड़ फेंका है, इन्द्रके ऐरावत हाथीके दाँतोंको तोड़-फोड़ दिया है। हे परमेश्वर, आज आपकी शक्ति कम क्यों हो रही है, क्या रावण किसी दूसरे का नाम है ? क्या चन्द्रहास तलवारकी साधना किसी और ने की थी ? क्या कुबेरका विनाश किसी दूसरेने किया था। क्या वह कोई दूसरा था जिसने सूँड़ उठाये हुए, प्रचण्ड त्रिजगभूषण हाथीको अपने वशमें किया था ? क्या कृतान्त-राजको किसी दूसरेने अपने अधीन बनाया था ? क्या सुग्रीव किसी दूसरेके अधीन था ? क्या किसी दूसरेने कैलास पर्वत-को गेंदकी भाँति उछाला था ? क्या सहस्रकिरणको किसी दूसरेने जीता था। नलकूबर और इन्द्रकी उछल-कूद किसी औरने ठिकाने लगायी थी। क्या वे किसी दूसरेकी भुजाएँ थीं जो वरुण-जैसे नराधिपको उठानेकी सामर्थ्य रखती थीं ? यदि तुम्हीं दशवदन हो, तो फिर हमारी यह हालत क्यों हो रही है ?" ॥१-११॥

[११] इससे भी रावण अपने ध्यानसे नहीं डिगा। मेरु पर्वतकी तरह वह एकदम अचल था। ठीक उसी प्रकार अचल था जिस प्रकार योगी सिद्धिके लिए, या राम अपनी पत्नीकी प्राप्तिके लिए अडिग थे। रावण भी इसी प्रकार स्थिर

संखुहिउ ण कङ्काहिवहों चित्तु । जं अङ्गउ पुलयङ्गु जिह संछित्तु ॥३॥
मन्दोयरि कड्ढिय मच्छरेण । कप्पद्दुम-साह व कुञ्जरेण ॥४॥
हरिणि व सीहेण विरुद्धएण । ससि-पडिम व राहुं कुद्धएण ॥५॥
उरगिन्दि व गरुड-विहङ्गमेण । लोगाणि व पवर-जिणागमेण ॥६॥
परमेसरि तो वि ण भयहों जाइ । णिक्कम्प परिट्ठिय धरणि णाइँ ॥७॥
'रे रे जं किउ महु केस-गाहु । अण्णु वि महएविहुँ हियय-डाहु ॥८॥
तं पाव फलेसइ परएँ पाउ । दहगीव णिलेसइ बलु जें साउ' ॥९॥
तं णिसुणेंवि किय-कलमलएण । णिब्भच्छिय तारा-णन्दणेण ॥१०॥

घत्ता

'काइँ विहाणएँण अज्जु जि णिक्खन्ताहों दहगीवहों ।
सहुँ अन्तेउरेंण पइँ महएवि करमि सुग्गीवहों' ॥११॥

[१२]

एम भणेप्पिणु रिउ रेकारिउ ।
'रक्खु दसाणण मइँ पचारिउ ॥१॥
हउँ सो अङ्गउ तुहुँ लङ्केसरु ।
एह मन्दोयरि एहु सो अवसरु' ॥२॥
जं एव वि खोहहों ण गउ राउ । तं चिमहँ आसण-कम्पु जाउ ॥३॥
आइय अन्धारउ जउ करन्ति । बहुरूविणि बहु-रूवइँ धरन्ति ॥४॥
थिय अग्गएँ सिद्धहों सिद्धि जेवँ । 'किं पेसणु पहु' पभणन्ति एवँ ॥५॥
किं दिज्जउ वसुमइ वसिकरेवि । किं दिज्जउ दिस-करि-घट्ट(?) धरेवि ॥६॥
किं दिज्जउ फणि-मणि-रयणु लेवि । किं दिज्जउ मन्दरु दरमलेवि ॥७॥

जो सिद्धिके लिए स्थिरचित्त था। लंकानरेशका चित्त एक क्षणके लिए भी जब नहीं डिगा, तो अंगद आगकी भाँति जल उठा, मानो उसमें घी पड़ गया हो। उसने ईर्ष्यासे भरकर मन्दोदरीको ऐसे बाहर निकाला, मानो हाथीने कल्पवृक्षकी डाल काट दी हो, या सिंहने हरिणीको पकड़ लिया हो, या क्रुद्ध राहुने शशिके बिम्बको निगल लिया हो, या गरुड़राजने नागराजको दबोच लिया हो, या महान् आगम ग्रन्थोंने लोकोंको अपने वशमें कर लिया हो!" परन्तु इससे भी रावण हिला-डुला नहीं। धरतीकी भाँति वह एकदम अडिग और और अटल था। तब परमेश्वरी मन्दोदरीने कहा, "अरे देखते नहीं इसने मेरे बाल पकड़ लिये हैं। मुझ महादेवीके हृदयमें असह्य जलन हो रही है? हे पाप, तुम्हारा यह पाप, कल अवश्य फल लायेगा, दशानन कल समूची सेनाको नष्ट कर देगा।" यह सुनते ही तारानन्दन कुड़मुड़ा उठा। उसने भर्त्सनाभरे शब्दोंमें कहा, "अरे कल क्या, आज ही मैं रावणके देखते देखते तुम्हें सुग्रीवकी महादेवी बना दूँगा!" ॥१-११॥

[१२] यह कहकर दुश्मनने ललकारना शुरू कर दिया, "हे रावण बचाओ अपनेको, मैं कहता हूँ। मैं हूँ वही अंगद, तुम लंकेश्वर हो, यह रही मन्दोदरी, और यह है वह अवसर!" जब इससे भी रावण क्षुब्ध नहीं हुआ तो विद्याका (बहुरूपिणी) आसन हिल उठा। वह अन्धकार फैलाती हुई आयी! वह बहुरूपिणी विद्या थी, और नाना रूप धारण कर रही थी। वह आकर, इस प्रकार स्थित हो गयी, मानो सिद्धके आगे सिद्धि आ खड़ी हुई हो। वह बोली, "क्या आज्ञा है देव? क्या धरती वशमें कर दी जाय, क्या दिग्गजोंका झुण्ड भेंट किया जाय, क्या नागका मणिरत्न लाया जाय, क्या

किं दिज्जउ सुरणन्दिणि दुहेवि । किं दिज्जउ अमु णियलेंहिँ छुहेवि ॥८॥
किं दिज्जउ बन्धेंवि अमर-राउ । किं कुसुमसरावहु रइ-सहाउ ॥९॥
किं दिज्जउ धणयहोँ तणिय रिद्धि । किं दिज्जउ सव्वोवाय-सिद्धि ॥१०॥

घत्ता

सहुँ देवासुरेंहिँ किं सहुलोक्कु वि सेव करावमि ।
णवर णराहिवइ एक्कहोँ चक्कवइहेँ ण पहावमि' ॥११॥

[१३]

तं णिसुणेप्पिणु सुर-सन्तावणु ।
पुण्ण-मणोरहु उट्ठिउ रावणु ॥१॥
जा सन्तिहरहोँ देइ ति-भामरि ।
मुक्क कुमारेँ सा मन्दोयरि ॥२॥
अक्कुय णट्ठ पइट्ठ सेण्णेँ । सम्पत्त वत्त काकुत्थ-कण्णें ॥३॥
'परमेसर सुर-सन्तावणासु । परिपुण्ण मणोरह रामणासु ॥४॥
उप्पण्ण विज्ज णिब्भूढु धीर । एवहिँ णिच्चिन्तु वियसहु मि वीर ॥५॥
णउ जाणहुँ होसइ एउ केम । कइ सीयहेँ छण्डहि तत्ति देव' ॥६॥
तं वयणु सुणेवि कुमारु कुद्धु । खय-कालेँ दिणायरु णाइँ उद्दु ॥७॥
'णासहोँ णासहोँ जइ णाहि सत्ति । हउँ लक्खणु एक्कु करेमि तत्ति ॥८॥
कहोँ तणिय विज्ज कहोँ तणिय सत्ति । कलएँ पेक्खेसहोँ तहोँ असन्ति ॥९॥
महुँ दूसरह-णन्दणेँ किय-पइज्जेँ । विरथहँ अत्थाहँ अलज्जणिज्जेँ ॥१०॥

घत्ता

सीणा-जुयल-जलें भणु-वेला-कल्लोल-रउद्दे ।
बुड्डेवउ सक्केँण महु केरएँ णाराय-समुद्दे ॥११॥

[१४]

ताव णिसायर- णाहु स-विज्जउ ।
णं स-कलत्तउ सुरवइ विज्जउ ॥१॥

सुमेरुपर्वत दलमल कर दिया जाय, क्या कामधेनु दुहकर दी जाय, क्या यमको जंजीरोंसे बाँधकर लाया जाय, क्या इन्द्रको बाँधकर लाया जाय, क्या रति स्वभाववाला काम लाया जाय, क्या कुबेरकी सम्पदा, या सर्वोपायसिद्धि नामकी विद्या दी जाय। क्या देवता और असुरोंके साथ तीनों लोकोंकी सेवा कराऊँ। हे राजन्, मैं केवल एक चक्रवर्तीके सम्मुख अपने आपको समर्थ नहीं पाती" ॥१–११॥

[१३] यह सुनकर देवताओंको सतानेवाला, पुण्य मनोरथ, रावण उठ बैठा। उसने शान्तिनाथ भगवान्‌की तीन परिक्रमाएँ दी ही थीं कि इतनेमें कुमारने मन्दोदरीको मुक्त कर दिया। अंग और अंगद भाग गये, सेना भी तितर-बितर हो गयी। यह बात रामके कान तक जा पहुँची। किसीने जाकर कहा, "हे परमेश्वर, रावणकी इच्छा पूरी हो गयी है। उसे विद्या उपलब्ध हो चुकी है। अब वह निर्वृत्त और धीर है। अब वह वीर, देवताओंसे भी निश्चिन्त है। नहीं मालूम अब क्या होगा। हे देव, सीतादेवीकी आशा छोड़ दीजिए।" यह वचन सुनकर कुमार लक्ष्मण इतना कुपित हो गया, मानो प्रलयकालमें सूर्य ही उग आया हो। उसने कहा, "जाओ मरो, यदि तुममें शक्ति नहीं है, मैं अकेला लक्ष्मण आशा पूरी करूँगा। कहाँकी विद्या, और कहाँ की शक्ति। कल तुम उसका अनस्तित्व देखोगे। हे दशरथनन्दन, मैंने जो प्रतिज्ञा की है, वह समुद्रके समान अलंघनीय है। दोनों तरकस जलकी भाँति हैं, धनुषकी तट लहरियोंसे यह प्रतिज्ञासमुद्र भयंकर है, मैं अपने तीरोंके समुद्रमें उस दुष्टको डुबाकर रहूँगा" ॥ १–११ ॥

[१४] अपनी बहुरूपिणी विद्याके साथ, निशाचरराज रावण ऐसा लगता था, मानो सपत्नीक इन्द्रराज ही हो। उसने आकर

पेक्खइ दुम्मणु सोंढिय-सारउ ।
णिय-अन्तेउरु णाडु व अ-रुवउ ॥१॥
तहिँ मज्झेँ महा-गिरि-माणणेण । मन्दोयरि दिट्ठ दसाणणेण ॥३॥
थुइ थुइ आमेल्लिय अङ्गएण । णं कमलिणि मत्त-महागएण ॥४॥
णं कुसुमसि-वावि जिणागमेण । णं णाइणि गरुड-विहङ्गमेण ॥५॥
णं दिणयर-संझ घराहवेण । णं पवर-महाणइ दुब्भवहेण ॥६॥
णं ससहर- पडिम महग्गहेण । मम्मीसिय विज्ञा-सङ्गहेण ॥७॥
‘एक्केलउ जेण्हउ केण सहिउ । अण्णु वि बहुरूविणि-विज्ञ-सहिउ ॥८॥
किउ जेहिँ णियम्बिणि एउ कम्मु । कइ वट्टइ तहोँ एत्तडउ जम्मु ॥९॥
जइ मणुस होन्ति सो काइँ एत्थु । कुकन्ति परिट्ठिउ विमाणेँ जेत्थु ॥१०॥

घत्ता

जेण भरहिएँण सीसेँ तुहारएँ लाइय हत्था ।
कड्ढएँ तासु धणेँ पेक्खु काइँ दरिसवमि अवत्था’ ॥११॥

[१५]

एम भणेप्पिणु दणु-विद्दावणु ।
जय-जय-सद्दें स-रहसु रावणु ॥१॥
चलिउ सउण्णउ उट्ठिय-कलयलु ।
णं रयणायरु परिवड्ढिय-जलु ॥२॥
णवर पहुणो चलन्तस्स दिण्णा महाणन्द-भेरी मउन्दा दडी दड्डुरा ।
पडह टिविला य डक्कडक्करी झल्लरी भम्भ भम्भीस कंसाल-कोलाहला ॥३॥
मुरव तिरिडिक्किया काहला ढड्ढिया सङ्ख घुम्मुक ढक्का हुडुक्का घरा ।
तुणव पणवेक्कपाणि त्ति एवं च सिज्झोसि (?) सेसा उणा (?णो) केण ते
मुज्जिया ॥४॥

देखा कि उसका अन्तःपुर उन्मन है। उसके हार टूट-फूट चुके हैं, और वह ताराविहीन आकाशकी भाँति है। अन्तःपुरके मध्यमें उसे लक्ष्मीसे भी अधिक मान्य मन्दोदरी दिखाई दी, जिसे अङ्गदने हाल ही में मुक्त किया था। उस समय वह ऐसी दिखाई दी, मानो मदगल गजने कमलिनीको छोड़ा हो, या जिनागमने किसी खोटे तपस्वीकी वाणीका विचार किया हो, या गरुड़राज नागिनपर झपटा हो, या मेघ दिनकरकी शोभा-पर टूट पड़ा हो, या आग प्रवर महाटवीपर लपकी हो, या चन्द्र प्रतिमाको महाग्रहने ग्रसित किया हो। विद्या संग्राहक रावणने मन्दोदरीको अभय वचन दिया। उसने कहा, "मैं अपने जैसा अकेला हूँ। मेरे समान दूसरा कौन है, जिसके पास बहुरूपिणी विद्या हो। हे नितम्बिनी, जिसने तुम्हारे साथ ऐसा बर्ताव किया है, समझ लो उसका इतना ही जीवन बाकी है। यदि वे आदमी होते तो उस समय मेरे पास आते कि जब मैं नियममें स्थित था। जिस घमण्डीने तुम्हारे सिरमें हाथ लगाया है, कल देखना मैं उसकी पत्नीकी क्या हालत करता हूँ" ॥ १–११॥

[१५] यह कहकर, दानवोंका संहार करनेवाला रावण हर्षके साथ वहाँसे चल दिया। चारों ओर 'जय-जय' की गूँज थी। सगुण वह जैसे ही चला, कल-कल शब्द होने लगा, मानो समुद्रमें जल बढ़ रहा हो। रावणके इस प्रकार प्रस्थान करते ही, भेरी, मृदंग, दड्डी, दर्दुर, पटह, त्रिविला, ढड्ढड्ढरी, झल्लरी, भम्भ, भम्भीस और कंसालका कोलाहल होने लगा। मुरव, तिरिडिक्कय, काहल, ढक्किय, शंख, धुमुक्क, ढक्क और श्रेष्ठ हुडुक्क, पणव, एक्कपाणि आदि वाद्य बज उठे। और भी दूसरे वाद्य थे, उन सबको भला कौन जान सकता है

कहिँ मि चलियं चलन्तेण अन्तेउरं थोर-मुत्तावली-हार-केऊर-कण्ठो-
कलावेहिँ गुप्पन्तयं ।
बहल-सिरिखण्ड-कप्पूर-कत्थूरिया-कुङ्कुमुप्पील-कालागरुम्मिस्स - चिक्खिल्ल-
पन्थेसु खुप्पन्तयं ॥ ५॥
धवल-धय-तोरण-च्छत्त-चिन्ध-प्पहायावली-मण्डवब्भन्तरालिन्द- णीसन्द-
यारे विसूरन्तयं ।
मुहल-चल-णेउरुग्घाय-झङ्कार-वाहित्त-मज्झाणुलग्गन्त-हंसेहिँ मुक्कन्त-हेला-
गईं-णिग्गमं ॥ ६ ॥
फलिह-मणि-कुट्टिमे भूमि-भाए विचड्डेहिँ छाया-च्छलेणं (?) चुम्बिज्जमा-
णाणणं
णवर पिसुणो जणो तं च मा पेच्छहीमीएँ लज्जाएँ पायन्तुएहिं व
झायन्तयं
गलिय-मणि-मेहला-दाम-सद्दायमण्णोण्ण-कज्जाहिमाणेण मुच्चन्तयं ।
कसण-मणि-खोणि-छायाहिँ रज्जिज्जमाणं व दट्ठूण वेवन्तयं ॥८॥

कहिँ मि णव-पाडली-पुप्फ-गन्धेण आयड्ढिया छप्पया ।
णवर मुह-पाणि-पायग्ग-रत्तुप्पलासोय-मोहं गया ॥ ९ ॥
तहिँ मि चल-चामरुच्छोह-विच्छेव-छिप्पन्त-मुच्छाविया ।
सुरहि-सुह-गन्धवाएण मन्दाणुसीएण संजीविया ॥१०॥

घत्ता

एम पइट्ठु घरु जय-जय-सद्दें इन्द-विमद्दणु ।
वसुमइ वसिकरेंवि णाइँ सयं भुव णाहिय-णन्दणु ॥११॥

उसके चलनेपर अन्तःपुर भी जाग पड़ा। कहीं-कहीं, मोती-मालाएँ, हार, केयूर और करधनीसे वह शोभित था। प्रचुर चन्दन, कर्पूर, कस्तूरी, केशर और कालागुरुके मिश्रणकी कीचड़से मार्ग लथपथ हो रहा था। सफेद पताकाओं, तोरण, छत्रचिह्न, पताकावलियोंसे सजे हुए मण्डपके भीतर भौंरे गुन-गुना रहे थे, उसके सघन अन्धकारमें वह अन्तःपुर खिन्न हो रहा था। मुखरित और चंचल नूपुरोंकी झंकारसे आकृष्ट होकर हंस, उसके मध्यभागसे आकर लग रहे थे, और उससे उनकी क्रीड़ापूर्वक गतिमें बाधा पड़ रही थी। स्फटिक मणियोंसे जड़ी हुई धरतीपर, जो उसकी प्रतिच्छाया पड़ रही थी, विदग्धजन, उसके बहाने उसका मुख चूम रहा था। कहीं दुष्टजन न देख लें, इस आशंकासे उसने चरणकमलोंसे छाया कर रखी थी। गिरी हुई मणिमय मेखलाएँ और मालाएँ एक-दूसरेसे टकरा रही थीं और इस कारण वह अन्तःपुर लज्जा और अभिमान छोड़ चुका था। काले मणियोंकी धरतीकी कान्तिसे वह रंजित था। जहाँ-तहाँ वह अपनी दृष्टि दौड़ा रहा था। कहीं-कहीं पर नवपाटल पुष्पकी गन्धसे भौंरे मँडरा रहे थे। ऐसा लगता था, मानो वे मुख हाथ और चरणोंके लालकमलोंके क्रीड़ामोहमें पड़ गये हों। वहाँ कितनी ही रमणियाँ चंचल चामरोंके वेग-शील विक्षेपसे सहसा मूर्छित हो उठीं। फिर सुगन्धित शुभ शीतल मन्द पवनकी ठण्डकसे उन्हें होश आया। इन्द्रका मर्दन करनेवाले रावणने जय-जय ध्वनिके साथ अपने घरमें इस प्रकार प्रवेश किया, मानो नाभिनन्दन आदिजिन अपने बाहु-बलसे धरतीको वशमें कर गृहप्रवेश कर रहे हों॥ ९-११॥

●

[७३. तिसत्तरिमो संधि]

तिहुयण-डामर-वीरु मयरद्धय-सर-सण्णिह-णयणु ।
मङ्गल-तूर-रवेण मज्जाणउ पइसइ दहवयणु ॥

[१]

पइसेंवि भवणु भिच्च अवयज्जिय ।
णिय-णिय-णिलयहों तुरिय विसज्जिय ॥ १ ॥

कइवय-सेवहिँ सहिउ दहमुहु । गउ मज्जण-भवणहों सवडम्मुहु ॥२
ओसारियइँ असेसाहरणइँ । दुद्दिणें दिणयरेण णं किरणइँ ॥३
लइय पोत्ति रिसहेण दया इव । गुज्झावरणसीलें माया इव ॥४॥
सण्ह-सुत्त वायरण-कहा इव । पल्लव-णाडिय महा-वणराइ व ॥५॥
वर-वारङ्गणेहिँ सब्भङ्गिउ । विविहामङ्गणेहिँ अब्भङ्गिउ ॥६॥
गउ आयाम-भूमि रहसाहिउ । तणु-संवाहणेहिँ संवाहिउ ॥७॥
ताव विमद्दिउ जाव पइग्गउ । सव्वङ्गिउ पासेउ वलग्गउ ॥८॥

घत्ता

थुड्डु उग्गायइँ सरीरें पासेय-फुल्लिङ्गइँ णिम्मलइँ ।
णं तुट्ठेण समेण कइ वि दिण्णइँ मुत्ताहलइँ ॥९॥

[२]

पुणु चारङ्गेहिँ उव्वाहिउ । णं करि करिणि-करेहिँ विहाहिउ ॥१
गउ चामियर-दोणि परमेसरु । णं कणियारि-कुसुम-थक्कि महुअरु ॥२

तेहत्तरवीं सन्धि

वह रावण त्रिभुवनमें बेजोड़ और भयंकर वीर था। उसकी आँखें कामदेवके बाणकी तरह पैनी थीं। मंगल तूर्यकी ध्वनिके साथ उसने स्नानके लिए प्रवेश किया।

[१] अपने भवनमें प्रवेश करते ही, उसे नौकर दिखाई दिये। उसने उन्हें तुरन्त अपने-अपने घर जानेकी छुट्टी दे दी। अपने इने-गिने सेवकोंके साथ रावण स्नानघरकी ओर गया। उसने अपने समस्त आभरण उसी प्रकार हटा दिये, जिस प्रकार दुर्दिनमें दिनकर अपनी सब किरणें हटा लेता है। उसने नहाने की धोती ग्रहण की, मानो आदिनाथने 'दया' को ग्रहण किया हो। माताके समान वह अपने गुप्त अंगको ढक रहा था। व्याकरणकी कथाकी भाँति उसने सण्ह सूत्र (?) बाँध रखा था। विशाल वनराजिकी तरह वह पल्लवयुक्त था। उत्तम वारांगनाओंसे वह परिपूर्ण था। विविध भंगिमाओंसे उन्होंने उसकी ओर देखा। फिर हर्षसे विभोर होकर वह व्यायामशाला में पहुँचा। वहाँपर मालिश करनेवालोंने उसकी खूब मालिश की। सबेरे तक उसकी मालिश करते रहे। उसका अंग-अंग पसीना-पसीना हो गया। शरीरपर पसीनेकी स्वच्छ बूँदें ऐसी झलक रही थीं मानो समुद्रने सन्तुष्ट होकर अपने मोती निकालकर दे दिये हों॥ १-९॥

[२] फिर उत्तम विलासिनियोंने उसका ऐसा उबटन किया मानो हथिनीने अपनी सूँड़से हाथीका मर्दन किया हो। इसके बाद सोनेकी करधनी पहने हुए रावण गया। वह ऐसा लग रहा था मानो कनेर कुसुमके किनारे मधुकर बैठा हो, दरवाजे-

वारिहिँ मज्झेँ पइट्ठु व कुञ्जरु । दप्पण-भित्तिहिँ व छाया-णरवरु ॥३॥
सरसिहिँ मज्झेँ व पडिमा ससहरु । पुव्व-दिसहेँ व तरुण-दिवायरु ॥४॥
गन्धामलएँहिँ णिहुर पसाहिय । वइरि व मञ्जेँ वि वन्धेँ वि साहिय ॥५॥
पुणु गउ मज्जण-पीढु आणन्देँ । णड-कइ-वन्दिण-जय-जय-सद्देँ ॥६॥
फलिह-सिला-मणियहेँ(?)थिउ छज्जइ । हिम-सिहरोवरिएँ णं घणु गज्जइ ॥७॥
पण्डु-सिलहेँ व काम-करि-केसरि । वहुल-पक्खु पुण्णिवहेँ व उप्परि ॥८॥

घत्ता

मङ्गल-कलस-कराउ ढुक्कउ णारिउ छक्केसरहोँ ।
णावइ सयल-दिसाउ उण्णय-मेहाउ महीहरहोँ ॥९॥

[२]

पवर पहुणोऽहिसेयस्स पारम्भए । हेम-कुम्भेहिँ उक्खित्त-सारम्भए ॥१॥
पवर-अहिसेय-तूरं समुप्फालियं । वहु-कण्ठेहिँ मङ्गेहिँ ओरालियं ॥२॥
कहि मि सु-स्सरेहिँ गायणेहिँ झङ्कारियं । मङ्गलं वन्दि-लोएण उच्चारियं ॥३॥
कहि मि वर-वंस-वीणा-पवीणा णरा । गन्ति गन्धव्व विज्जाहरा किण्णरा ॥४॥
कहि मि कलहोय-माणिक्क-सिप्पी-णिबद्धेण ।
संकुन्दिओ(?)फल्व(?)-वन्देण आणन्दिओ ॥५॥
कहि मि सिरिखण्ड-कप्पूर-कत्थूरिया-कुङ्कुमप्पङ्क-पङ्केण एक्केक्को आहओ ॥६॥
कहि मि अहिसेय-सिङ्गग्ग-धारा-णिवाय-
प्पवाहेण तूराहि एक्केक्को सिञ्चिओ ॥७॥
कहि मि णड-छत्त-कप्फाव-गन्देहिँ सोहग्ग-सूराण
णामावलि से समुच्चारिया ॥८॥

घत्ता

एवँ जणुल्लावेण पल्हत्थिय कलस णरेसरहोँ ।
सुर-जय-जय-सद्देण अहिसेय-समएँ जिह जिणवरहोँ ॥९॥

में हाथी घुसा हो, या दर्पणमें किसी श्रेष्ठ नरकी छाया पड़ी हो, या सरोवरमें चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब हो, अथवा पूर्व दिशामें दिनकरकी प्रतिमा हो। गन्धामलकसे उसने अपने केश सुवासित किये, फिर शत्रुकी तरह उन्हें अलग-अलग कर बाँधा और सज्जित किया। फिर आनन्दके साथ वह स्नानपीठपर जाकर बैठ गया। नट, कवि और बन्दीजन उसका जय-जयकार कर रहे थे। स्फटिक मणिकी वेदीपर बैठा हुआ वह ऐसा जान पड़ रहा था मानो हिमशिखरपर मेघ गरज रहा हो या पाण्डुशिला पर तीर्थंकर हों, या पूर्णिमाके ऊपर कृष्णपक्ष स्थित हो। स्त्रियाँ मंगलकलश अपने हाथोंमें लेकर उसके निकट इस प्रकार पहुँचीं मानो उन्नत मेघोंसे युक्त दिशाएँ महीधरके पास पहुँची हों॥ १–९॥

[३] प्रभु रावणका अभिषेक प्रारम्भ होनेपर स्वर्णिम कलशोंसे जलधारा छोड़ी जाने लगी। बड़े-बड़े नगाड़े बज उठे। काँछ बाँधकर योद्धा गरज उठे। कहींपर बन्दीजन सस्वर गानसे झंकृत मंगलोंका उच्चारण कर रहे थे। कहीं पर उत्तम बाँसकी बनी वीणा बजानेमें निपुण मनुष्य, किन्नर, गन्धर्व और विद्याधर गा रहे थे। कहींपर बन्दीजनोंने स्वर्ण माणिक्यके समूहसे देहलीको भर दिया था। कहींपर चन्दन, कपूर, कस्तूरी और केशरकी कीचड़ एकमेक हो रही थी। कहीं पर अभिषेकशिलाकी जलधाराके प्रवाहसे लोग दूरसे ही भीग रहे थे। कहीं पर नट, छत्र, फम्फाव और बन्दीजन, सौभाग्यशाली वीरोंकी नामावलीका उच्चारण कर रहे थे। इस प्रकार जनानन्ददायक कलशोंसे रावणका अभिषेक हो रहा था। जिन भगवान्‌के अभिषेककी भाँति देवता 'जय-जयकार' कर रहे थे॥ १–९॥

[४]

क वि अहिसिञ्चइ कञ्चण-कुम्भें । ण्हविउ पुरन्दरं व विमलम्भें ॥१॥
क वि रुप्पिय-कलसें जल-गाहें । पुण्णिमय ससिमिव जोण्हा-वाहें ॥२॥
क वि मरगय-कलसेण उर-त्थलु । णलिणि व णलिण-उडेण महीयलु ॥३॥
क वि कुङ्कुम-कलसेणायम्बें । सञ्झ व दिवसु दिवायर-बिम्बें ॥४॥
णायएँ लीलएँ जयसिरि-माणणु । जय-जय-सद्दें ण्हाउ दसाणणु ॥५॥
विमल-सरीरु जाउ चक्केसरु । णं उप्पण्ण-णाणु तित्थङ्करु ॥६॥
दिण्णाइँ तणु-लुहणाइँ सु-सण्हइँ । खल-कुहणि-वयणा इव लण्हइँ ॥७॥
मेल्लिय पोत्ति जिणेण व दुग्गइ । मोआविय केसाइँ जलुग्गइँ ॥८॥
लेप्पिणु सेयम्बरु वि सहावइ (?) । वन्दिउ सन्तु भडारे-पुरु गामइ ॥९॥

घत्ता

सोहइ धवल-वत्थेण आवेढिउ दससिर-सिरु पवरु ।
णं सुर-सरि-वाहेण कइलासहों तणउ तुङ्ग-सिहरु ॥१०॥

[५]

गम्पिणु देव-भवणु जिणु वन्देँवि । वार-वार अप्पाणउ णिन्देँवि ॥१॥
भोयण-भूमि पइट्ठु पहाणउ । कञ्चण-पीढें परिट्ठिउ राणउ ॥२॥
जवणि समाढिय असइ व धुत्तेंहिं । अबुह-मइ व वायरणहों सुत्तेंहिं ॥३॥
गरुडु व सयर-सुएँहिँ खिय-णासेँहिँ । महकइ-कित्ति व सीस-सहासेँहिँ ॥४॥

[४] कोई स्वर्ण कलशसे वैसे ही अभिषेक कर रहा था, जैसे लक्ष्मी विमल जलसे इन्द्रका अभिषेक करती है। कोई जलसे भरे रजतकलशसे उसका अभिषेक कर रहा था, मानो पूर्णिमा चाँदनीके प्रवाहसे चन्द्रमाका अभिषेक कर रही हो। कोई मरकत कलशसे उसके वक्षःस्थलका अभिषेक कर रहा था, मानो कमलिनी कमल कुण्डलोंसे महीतलको सींच रही हो। कोई आरक्त केशर कलशसे अभिषेक कर रहा था, मानो सन्ध्या दिवाकरके बिम्बसे दिनका अभिषेक कर रही हो। जयश्रीके अभिमानी रावणने इस प्रकार विविध लीलाओं और जय-जय शब्दके साथ स्नान किया। चक्रवर्ती रावणका शरीर ऐसा पवित्र हो गया मानो तीर्थंकर भगवान्को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ हो। फिर उसे शरीर पोंछने के लिए वस्त्र दिये गये जो दुष्ट दूतीके वचनों के समान सुन्दर थे। उसने धोती उसी प्रकार छोड़ दी जिस प्रकार जिन भगवान् खोटी गति छोड़ देते हैं। जलसे गीले बाल उसने सुखाये। उसने स्वयं सफेद कपड़ा ले लिया और उससे अपना सिर उसी प्रकार लपेट लिया, मानो उसने शत्रुका नगर घेर लिया हो। सफेद कपड़ेसे ढके हुए रावणका सबसे बड़ा सिर ऐसा लगता था, मानो गंगाकी धारा से हिमालयकी सबसे बड़ी चोटी शोभित हो॥ १–१० ॥

[५] जिनमन्दिरमें जाकर उसने भगवानकी स्तुति की। उसने बार-बार अपनी निन्दा की। उसके बाद उसने भोजन-शालामें प्रवेश किया। वहाँ वह स्वर्णपीठपर बैठ गया। उसके बाद जेवनार उसी प्रकार घुमायी गयी, जिसप्रकार धूर्तलोग किसी असतीको घुमाते हैं, जैसे व्याकरणके सूत्र अपण्डितकी बुद्धिको घुमाते हैं, जैसे अपना सर्वस्व नाश करनेवाले सगर-पुत्रोंने गंगाको घुमाया था, जैसे हजारों शिष्य महाकविकी

दिण्णइँ रुप्पिम-कञ्चण-थालइँ । णं सुपुरिस-चित्तइँ व विसालइँ ॥५॥
वित्थारिउ परिमलु पहु केरउ । अरहाहच्चु व कन्ति-जणेरउ ॥६॥
सरयहो व्व सयवत्त-विसट्टउ । पट्टण-पइसारु व बहु-चट्टउ ॥७॥
सवहि व सिप्पि-सङ्ख-सन्दोहउ । वर-जुवइ-यणु व कण्ठी-सोहउ ॥८॥

घत्ता

जिम्मइ अमियाहारु बहु-खण्ड-पयारु सुहावणउ ।
णावइ भरहु विसालु अण्णण्ण-महारस-दावणउ ॥९॥

[६]

भुञ्जवि परिपिएँवि पहाणउ । मुऍवि अप्पण-थामेँ थिउ राणउ ॥१॥
मलयरुहेण पसाहिउ अप्पउ । गन्धु लयन्तु णाइँ थिउ छप्पउ ॥२॥
पुणु तम्बोलु दिण्णु चउरङ्गउ । णड-पेक्खणउ णाइँ बहु-रङ्गउ ॥३॥
पुणु दिण्णाइँ अम्बरइँ अमोल्लइँ । जिण-वयणाइँ व अइमहल्लइँ ॥४॥
वेल्लि-विलय-मिहुणाइँ व सुअन्धइँ । अहोरत्ताइँ व घडिया-बन्धइँ ॥५॥
सुकलत्त-चित्ताइँ व मउअइँ । दुट्ठक्कुर-दाणाइँ व छउअइँ ॥६॥
दीहइँ दुज्जण-दुव्वयणाइँ व । विहुलइँ गङ्गा-णइ-पुलिणाइँ व ॥७॥
विरहिणिअइँ व बहु-कामाकरिसइँ । बन्दिण-जण-चन्दइँ व णियत्थइँ ॥८॥

घत्ता

लइयइँ आहरणाइँ विप्फुरिय-समुज्जल-मणि-गणइँ ।
कञ्चण-सरीरेँ थियाइँ णं बहुल-पक्खेँ तारायणइँ ॥९॥

[७]

कओ तिलोयभूसणो । सुरिन्द-दन्ति-दूसणो ॥१॥
पसाहिओ गइन्दओ । णिवारियारि-विन्दओ ॥२॥

कीर्तिको सब ओर घुमाते हैं। उसे सोने और चाँदीकी थाली दी गयीं, जो सत्पुरुषोंके चित्तोंकी भाँति विशाल थीं। फिर रावणका थाल रखा गया, जो तरुण दिवाकरकी भाँति चमचमा रहा था, जो सरोवरकी भाँति शतपत्रसे सहित था, जो नगर प्रवेशकी तरह बहुविध था, जो समुद्रकी भाँति सीप और शंखोंके समूहसे सहित था, जो उत्तम स्त्री समूहकी भाँति कंचो (करधनी, कढ़ी) से युक्त था। इसप्रकार उसे तरह-तरह का अमृत भोजन दिया गया जो भरत (मुनि) की तरह दूसरे-दूसरे महारसोंसे परिपूर्ण था ॥ १-९ ॥

[६] कपूरसे सुवासित पानी पीकर और खाकर राजा रावण दूसरे निवासस्थानपर आकर बैठ गया। उसने अपने-आपको चन्दनसे अलंकृत किया। वह ऐसा लग रहा था जैसे भ्रमर गन्ध ग्रहण कर रहा हो। फिर चार रंगका पान उसे दिया गया जो नटप्रदर्शनकी तरह रंग-बिरंगा था। फिर उसे अमूल्य वस्त्र दिये गये, जो जिनवचनोंकी भाँति दोनों लोकोंमें श्लाघनीय थे—जो मलयदेशके मिथुनकी भाँति सुगन्धित थे, जो आधीरातकी भाँति घड़ियोंसे बँधे हुए थे, जो मुग्धांगनाओंके चित्तोंकी भाँति खिले हुए थे, जो दुष्टोंके दानकी भाँति क्षुब्ध करनेवाले थे। जो दुर्जनोंके वचनोंके समान लम्बे थे, जो गंगा नदीके किनारोंकी भाँति एकदम फैले हुए थे। जो वियोगिनीकी भाँति नाना कामावस्था वाले थे। जो बन्दीजनोंके समूहकी भाँति द्रव्यविहीन थे। तदनन्तर उसने मणियोंसे चमकते हुए आभूषण ग्रहण किये। वे गहने उसके श्याम शरीरपर ऐसे मालूम होते थे मानो कृष्णपक्षमें तारे चमक रहे हों ॥ १-९ ॥

[७] उसके अनन्तर ऐरावत को भी मात देनेवाले त्रिजगभूषण हाथीको सजा दिया गया। अपनी सूँड़से, वह भौंरोंकी

पलम्ब-चवर-ओसओ । घडन्त-दाण-सोत्तओ ॥३॥
पसण्ण-कण्ण-चामरो । णिमीलियच्छि-डम्बरो ॥४॥
मणोज्ज-गेज्ज-कण्ठओ । मिसी-णिबद्ध-पट्टओ ॥५॥
विसाल-कुम्भ-चिन्धओ पहु व्व पट्ट-बन्धओ ॥६॥
गिरि व्व तुङ्ग-गत्तओ । महण्णउ व्व मत्तओ ॥७॥
घणो व्व भूरि-पांसओ । जमो व्व सुट्ठु भीसणो ॥८॥
मणो व्व लोल-वेयओ । रवि व्व उग्ग-तेयओ ॥९॥

घत्ता

सव्वाहरणु णरिन्दु तहिँ कसण-महग्गएँ चडिउ किह ।
अञ्जणय-मेह-णिसण्णु लक्खिज्जइ विज्जु-विलासु जिह ॥१०॥

[८]

जय-जय-सद्दें सत्तु-पयाणउ । सीयहेँ पासु पयट्टु दसाणणु ॥१॥
बहुरूविणि-रूवइँ मायन्तउ । खणें वासरु खणें णिसि दावन्तउ ॥२॥
खणें चन्दिम खणें मेहन्धारउ । खणें वाओलि-धूलि-जलधारउ ॥३॥
खणें णिग्घाय-तडि-वज्जण-भमालिउ । खणें गय-वग्घ-सिङ्घ-ओरालिउ ॥४॥
खणें पाउसु हेमन्तु उण्हालउ । खणें गयण-यलु सयलु सम-जालउ ॥५॥
खणें महि-कम्पु महीहर-डुल्लिउ । खणें रयणायर-सलिलुच्छलिउ ॥६॥
तं तेहउ णिएवि ससि-मुहियएँ । तियडएँ पुच्छिय जणयहो दुहियएँ ॥७॥
'एउ महन्तु काइँ अच्चरियउ । किं केण वि जगु उवसग्गरियउ' ॥८॥

घत्ता

पभणइ तियडाएवि 'बहुरूविणि-रूवालिद्ध-तणु ।
आयइ रावणु एहु तउ वयणु णिहालउ दहवयणु' ॥९॥

कतारको दूर हटा रहा था। दोनों ओर विशाल घण्टे लटक रहे थे। मदजलकी धाराएँ बह रही थीं। कानोंके चमर हिल-डुल रहे थे, दोनों आँखें मुँदी हुई थीं। सुन्दर गेय के समान उसका कण्ठ था। उसकी पीठपर भ्रमरियाँ मँडरा रही थीं। उससे विशाल चिह्न बँधे हुए थे। राजाकी भाँति उसे पट्ट बँधा हुआ था। पहाड़की तरह उसका शरीर विशाल था, महार्णव-की भाँति गम्भीर था। महामेघ की तरह उस की ध्वनि गम्भीर थी। यमकी तरह वह अत्यन्त भीषण, मनकी तरह अत्यन्त वेगशील और सूर्यकी तरह प्रतेज था। सब ओरसे अलंकृत रावण उस कृष्णवर्णके हाथीपर इस प्रकार बैठा, मानो उन्नतमेघोंमें बिजलीकी शोभा विलसित हो ॥१-१०॥

[८] शत्रुका क्षय करनेवाला रावण सीता देवीके निकट गया। वह बहुरूपिणी विद्याका ध्यान कर रहा था। कभी दिन दिखाई देता था और कभी रात। कभी चाँदनी और कभी मेघों-का अन्धकार। एक ही क्षणमें तूफान और जलधारा दिखाई देने लगती। एक पलमें बिजलीके गिरनेकी आवाज सुनाई देती और दूसरे ही पलमें गज, सिंह और बाघकी गर्जना। एक पलमें गर्मी-सर्दी और वर्षा और दूसरे पलमें शान्त ज्वाला-का आकाशतल। एक क्षणमें धरती काँप उठती और पहाड़ हिल जाता, दूसरे क्षणमें समुद्रका जल उछल पड़ता। यह सब देखकर जनककी बेटी चन्द्रमुखी सीतादेवीने त्रिजटासे पूछा, "ये अचरज भरी बातें क्यों हो रही हैं, क्या किसीने संसारका संहार कर दिया है।" यह सुनकर त्रिजटादेवीने कहा, "अपने शरीरमें बहुरूपिणी विद्याका प्रवेश कर, रावण तुम्हें देखने आ रहा है" ॥ १-२ ॥

[९]

तं णिसुणेवि महासइ कम्पिय । थाहु भरन्ति चक्खु दर जम्पिय ॥१॥
'मायँ ण जाणहुँ काइँ करेसइ । सीलु महारउ किं मइलेसइ' ॥२॥
ताव सुरिन्द-विन्द-कन्दावणु । कण्ठाहरण-विचिह-कं-दावणु ॥३॥
सीयहेँ पासु पढुक्किउ सरहसु । णावइ कम्मइसरहेँ सुणक्खसु ॥४॥
णावइ दीह-समासु विहत्तिहेँ । णावइ छन्दु देव-गाइत्तिहेँ ॥५॥
ओहुल्लिय [illegible] परमेसरि । होन्ति ण होन्ति दसाणण-केसरि ॥६॥
सुभउ ण सुभउ महारउ कइद्धसु । दिट्ठु ण दिट्ठु विउव्वण-साहसु ॥७॥
एवहिँ किं करन्ति ते हरि-बल । णल-सुग्गीव-णील-भामण्डल ॥८॥

घत्ता

अण्ण वि जे जे सुहड ते ते मज्झु सव्व समावडिय ।
एवहिँ कहिँ णासन्ति सारङ्ग व सीहहोँ कमेँ पडिय ॥९॥

[१०]

सीमन्तिणि मयरहरुत्तिण्णहोँ । लुहमि कीह कइद्धय-सेण्णहोँ ॥१॥
रामु तुहारउ जम-पहेँ लायमि । इन्दइ कुम्भकण्णु मेल्लावमि ॥२॥
जो विसल्लु किउ कह वि विसल्लएँ । सो वि णिबन्धु ण छुट्टइ कल्लएँ ॥३॥
जीवियास तहुँ केरी छण्डहि । चडु विमाणेँ अप्पाणउ मण्डहि ॥४॥
स-रयण स-णिहि पिहिमि परिपालहि । जाहुँ मेरु जिणहरहुँ णिहालहि ॥५॥
पेक्खु समुद्द दीव सरि सरवर । णन्दण-वणाइँ महा-दुम मणहर ॥६॥

[९] यह सुनकर, वह महासती काँप गयी। उसके हाथ फूल गये और आँखें कुछ-कुछ काँप गयीं। वह सोचने लगी—"हे माँ, न जाने यह दुष्ट क्या करेगा? क्या यह मेरे शीलको कलंकित कर देगा।" इतनेमें देवताओंके समूहको सतानेवाला रावण अपने कंठोंके आभरण और मस्तक दिखाता हुआ सीतादेवीके पास इस प्रकार पहुँचा, मानो अनंगशराके पास पुनर्वसु चक्रवर्ती पहुँचा हो, मानो दीर्घ समास विभक्तिके पास पहुँचा हो, मानो छन्द देव गायत्रीके पास पहुँचा हो। उसने कहा, "हे देवि बोलो, चाहे मैं दशानन सिंह होऊँ या न होऊँ, चाहे मेरा साहस तुमने सुना हो या न सुना हो, चाहे तुमने मेरी विक्रिया-शक्ति का प्रभाव देखा हो या न देखा हो, इस समय राम और लक्ष्मण, नल, सुग्रीव, नील और भामण्डल, मेरा क्या कर सकते हैं? और भी, इनके सिवा जितने दुष्ट हैं उन सबको मैंने धरतीपर लिटा दिया है। वे लोग भी अब कहीं न कहीं उसी प्रकार नष्ट हो जायेंगे जिस प्रकार सिंहके पैरोंकी चपेटमें आकर हरिण मारा जाता है॥ १-९॥

[१०] हे सीमन्तनि, मैं समुद्र पार करनेवाले कपिध्वजियों-की सेनाके नाम तककी रेखा मिटा दूँगा, तुम्हारे रामको यमपथपर भेज दूँगा। इन्द्रजीत और कुम्भकर्णकी भेंट हो जायगी और जिसे विशल्याने शल्यविहीन बना दिया है, वह लक्ष्मण भी कल लड़ाईमें किसी भी प्रकार बच नहीं सकता। इसलिए तुम उन सबके जीनेकी आशा छोड़ दो, विमानमें बैठकर चलो और अपनी साज-सज्जा करो।" रत्नों-निधियोंसे सहित इस धरतीका पालन करो, मैं सुमेरु पर्वत जा रहा हूँ, चलो जिन मन्दिरोंकी वन्दना कर लो। समुद्र, द्वीप, नदियाँ, सरोवर, महावृक्ष, पहाड़ और नन्दनवन चल कर देखो। अभी

अह एत्तडउ कालु जं चुक्की । तं मइँ वय-चारहिँ मुक्की ॥७॥
अह वि तिलोत्तिम रम्भाउव्वी । जा ण समिच्छइ सा ण अउव्वी ॥८॥
वार-वार तें तइँ अब्भत्थमि । दय करि अन्तेउरु अवहत्थमि ॥९॥
तुहुँ जें एक्क महएविय वुच्चहि । चामर-गाहिणिहिँ मा मुच्चहि ॥१०॥

घत्ता

सुरवर सेव करन्तु घण छत्तउ दिन्तु पुरें पइसरहि ।
लक्खण-रामहुँ तत्ति दुब्बुद्धि व दूरें परिहरहि' ॥११॥

[११]

जाणेंवि दुट्ठ-कम्मु पारम्भिउ । बहुरूविणि-बहु-रूव-वियम्भिउ ॥१॥
चिन्तिउ दसरह-णन्दण पत्तिएँ 'लक्खण-राम जिणइ विणु सन्तिएँ ॥२॥
जासु इय इ एवडुइँ चिन्धइँ । बहुरूविणि-बहु-रूवइँ सिद्धइँ ॥३॥
अण्ण इ सुरवर सेव कराविय । मन्दि-विन्द कलुणइँ कन्दाविय ॥४॥
सो किं मइँ ण लेइ पिउ ण हणइ' । आसङ्केवि देवि पुणु पभणइ ॥५॥
'दहमुह भुवण-विणिग्गय-णामें । खणु वि ण जियमि मरन्तें रामें ॥६॥
जेत्थु पईवु तेत्थु सिह णज्जइ । जेत्थु अणङ्गु तेत्थु रइ जुज्जइ ॥७॥
जेत्थु सणेहु तेत्थु पणयञ्जलि । जेत्थु पयङ्गु तेत्थु किरणावलि ॥८॥

घत्ता

जहिँ ससहरु तहिँ जोण्ह जहिँ परम-धम्मु तहिँ जीव-दय ।
जहिँ राहउ तहिँ सीय' सा एम भणेप्पिणु मुच्छ गय ॥९॥

तक जो तुम बची रही, वह केवल मेरी इस भारी व्रत-वीरताके कारण कि मैंने संकल्प किया है कि जो स्त्री मुझे नहीं चाहेगी उसे मैं जबर्दस्ती नहीं लूँगा ! फिर चाहे वह तिलोत्तमा या रम्भा देवी ही क्यों न हो ? यही कारण है कि मैं बार-बार तुम्हारी अभ्यर्थना कर रहा हूँ। मुझपर दया करो। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हें अन्तःपुर में सम्मानसे प्रतिष्ठित करूँगा, तुम्हीं एकमात्र महादेवी होगी। स्वर्ण चामरोंको धारण करने-वाली सेविकाएँ तुम्हें कभी नहीं छोड़ेंगी। देवता तुम्हारी सेवामें रहेंगे। घने छिड़कावके बीचमें-से तुम नगरमें प्रवेश करोगी। अब तुम राम और लक्ष्मणकी आशा तो दुर्बुद्धिकी तरह दूरसे ही छोड़ दो ॥ १-११ ॥

[११] इस प्रकार जान-बूझकर रावणने दुष्टता शुरू की। उसने बहुरूपिणी विद्याके सहारे तरह-तरहके रूपोंका प्रदर्शन प्रारम्भ कर दिया। यह देखकर दशरथपुत्र रामकी पत्नी सोचने लगी— "निश्चय ही अब राम-लक्ष्मण जीत लिये जायेंगे। भला जिस-के पास इतने सारे साधन हैं, जिसे बहुरूपिणीसे बड़े-बड़े रूप सिद्ध हो चुके हैं, और दूसरे बड़े-बड़े देवता जिसकी सेवा करते हैं, चारणोंका समूह जिसे नम्रतासे अपना सिर झुकाते हैं, क्या वह प्रियको मारकर मुझे नहीं ले लेगा"। इस आशंकासे वह देवी फिर बोली, "हे दशमुख, भुवन विख्यात रामके मरनेके बाद मैं एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकती। जहाँ दीपक होगा वहीं उसकी शिखा होगी, जहाँ काम होगा रतिका वहाँ रहना ही ठीक है, जहाँ प्रेम होता है प्रणयाञ्जलि वहीं हो सकती है, जहाँ सूर्य होगा किरणावली वहीं होगी। जहाँ चाँद होगा चाँदनी वहीं होगी, जहाँ परमधर्म होगा जीवदया भी वहीं रहेगी। जहाँ राम, सीता भी वहीं होगी।" यह कहकर

[१२]

मुक्क णिएप्पिणु रहुवइ घरिणिहेँ । करि ओसरिउ व पासहोँ करिणिहेँ ॥१॥
'विद्धिगत्थु परयारु असारउ । दुग्गइ-गमणु सुगइ-विणिवारउ ॥२॥
मइँ पावेण काइँ किउ एहउ । जें विच्छोइउ मिहुणु स-णेहउ ॥३॥
को वि ण मइँ सरिसउ णिस्सारउ । कूडउ कुम्भुइ कुच्छिय-गारउ ॥४॥
दुज्जणु दुट्ठु दुरासु दुलक्खणु । कु-पुरिसु मन्द-मणुअ-वियक्खणु ॥५॥
दुण्णयवन्तु विणय-परिवज्जिउ । दुच्चारित्तु कु-सीलु अ-लज्जिउ ॥६॥
णिद्दउ पर-कलत्त-सन्तावणु । सरि [illegible] पक्खालइ [illegible]-मावणु ॥७॥
वरि पसु वरि विहङ्गु किमि कीडउ । णउ अवहारिसु जग-परिपीडउ ॥८॥

घत्ता

वरि तिणु वरि पाहाणु वरि लोह-पिण्डु वरि सुक्क-तरु ।
णउ णिग्गुणु वय-हीणु माणुसु उप्पण्णु महीहेँ भरु ॥९॥

[१३]

अहो अहोँ दारा परिभव-गारा । कयलि व सव्वङ्गिउ णीसारा ॥१॥
चालणि व्व केसक-मल-गाहिणि । सरि व कुडिल हेट्ठामुह-वाहिणि ॥२॥
पाउस-कुहिणि व दुस्सञ्चारिणि । कुसुइणि व्व गहवइ-उवगारिणि ॥३॥
कमलिणि व्व पङ्केण ण मुच्चइ । मणु दारेंइ दार तें वुच्चइ ॥४॥
वणिय वणेइ सरीरु समत्तउ । गणिय गणेइ असेसु वित्तउ ॥५॥

सीता देवी मूर्च्छित हो गयीं ॥ १–९ ॥

[१२] रामकी पत्नी सीता देवीको मूर्च्छित देखकर, रावण उसके पाससे वैसे ही हट गया जिसप्रकार हथिनीके पाससे हाथी हट जाता है। वह अपनी ही निन्दा करने लगा, "धिक्कार है मुझे। परस्त्री सचमुच असार है, वह खोटी गतिमें ले जाती है और सुगतिको रोक देती है। मुझ पापीने यह सब क्या किया, जो मैंने एक प्रेमी जोड़ेमें बिछोह डाला। मुझ जैसा बुरा करनेवाला अभागा दुर्मुख और पापी कौन होगा, सचमुच मैं दुर्जन, दुष्ट, दुराश, दुर्भाग, कुपुरुष, मन्दभाग्य और अपण्डित हूँ। अनयशील, विनयहीन, चरित्रहीन, कुशील और लज्जाहीन हूँ। दूसरेकी स्त्रीको सतानेवाले मुझसे अच्छे तो जलचर-थलचर और वनपशु हैं। पशु होना अच्छा, पक्षी और कीड़ा होना अच्छा, पर मुझ जैसा जगपीडक होना अच्छा नहीं। तिनका होना अच्छा, पत्थर होना अच्छा, लोह-पिण्ड और सूखा पेड़ होना अच्छा, परन्तु निर्गुण व्रतहीन, धरतीका भारस्वरूप आदमीका उत्पन्न होना ठीक नहीं ॥१–२॥

[१३] रावणने फिर कहा, "अरे-अरे स्त्रीका अपमान करनेवाले, तुम्हारा सर्वांग कदली वृक्षकी तरह सारहीन है, चलनीकी भाँति, तुम कचरा ग्रहण करनेवाले हो, नदीकी तरह नीचे-नीचे और टेढ़े-मेढ़े बहनेवाले हो, पावसके मार्गोंकी भाँति संचरण करनेके योग्य नहीं हो, कुमुदिनीकी भाँति चन्द्रमाका उपकार कर सकते हो, कमलिनीकी भाँति तुम कीचड़से मुक्त नहीं हो सकते, स्त्री मनका विदारण करती है इसीलिए दारा कहते हैं, वह वनिता इसलिए कहलाती है कि शरीर आहत कर देती है, और गणिका इसलिए है क्योंकि सब धन गिना लेती है,

दइयहों दइउ लेहु तें दइया । पर तिविहेण जेण णियमइया ॥६॥
भणिय भणेहु अप्पु अवयारें । जाय जाहु णीअन्तो जारें ॥७॥
कु वसुन्धरि रहिँ मारि कुमारी । णर णाह तासु अरिसें णारी ॥८॥

घत्ता

मइँइ सुरवइ जेम कम्पेप्पिणु लक्खणु रामु रणें ।
इमि विहाणएँ सीय सव्वउ परिभुञ्जमि जेम मणें ॥९॥

[१४]

एम भणेप्पिणु गउ णिय-गेहहों । अन्तेउरहों पवड्ढिय-णेहहों ॥१॥
रायहंसु णं हंसी-जूहहों । णं गयवरु गणियारि-समूहहों ॥२॥
णं मयलञ्छणु तारा-चन्दहों । णं भुवगाउ णलिणि-मयरन्दहों ॥३॥
पणइणीउ पणएँ पणयन्तउ । माणिणीउ सहुँ सम्माणन्तउ ॥४॥
रसणा-दामएहिँ बज्झन्तउ । लीला-कमलेँहिँ ताडिज्जन्तउ ॥५॥
एव परिट्ठिउ णिसि-सम्भोगें । सिङ्गारेंण विविह-विणिउग्गें ॥६॥
सीय वि णिय-जीवियहों अणिट्ठिय । णं दहसिरहों सिरत्ति समुट्ठिय ॥७॥
ताव णिहाय पडिय महि कम्पिय । 'णट्ठ लङ्क' णहेँ देव पजम्पिय ॥८॥

घत्ता

'दहमुह मूढउ काइँ पर-णारि रमन्तहों कवणु सुहु ।
णच्चहि सुरवइ जेव णिय-रज्जु सइँ भुञ्जन्तु तुहुँ' ॥९॥

दयिता इसलिए कहते हैं क्योंकि वह प्रियके 'दैव' को छीन लेती है, वह तीन प्रकारसे शत्रु होती है, इसलिए तीमयी कहलाती है। धन्या इसलिए है कि अपकारसे हमें कष्ट पहुँचाती है। जाया इसलिए कि जारके द्वारा ले जायी जाती है। धरतीके लिए वह 'मारी' है इसलिए उसे कुमारी कहते हैं। मनुष्य उसमें रतिसे तृप्त नहीं होता इसलिए उसे 'नारी' कहते हैं। कल मैं इन्द्रकी तरह युद्धमें राम और लक्ष्मणको बन्दी बनाऊँगा और तब उन्हें सीतादेवी सौंप दूँगा, जिससे मैं दुनियाकी निगाहमें शुद्ध हो सकूँ" ॥ १-९ ॥

[१४] यह कहकर, रावण स्नेहसे परिपूर्ण अपने अन्तःपुरमें उसी प्रकार गया जिस प्रकार, राजहंस हंसिनियोंके झुण्डमें जाता है या जैसे हाथी हथिनियोंके समूहमें, चन्द्रमा तारा-समूहमें, भौंरा कमलिनीके मकरन्दमें प्रवेश करता है। उसने वहाँ प्रणयिनियोंके साथ प्रणय किया, मानिनी स्त्रियोंके साथ मान किया। किसीको करधनीकी डोरसे बाँध दिया, किसीको लीला कमलसे आहत कर दिया। इस प्रकार वह विविध विनियोगों और शृंगारसे रात भर भोग भोगता रहा। उसने समझ लिया कि सीतादेवी उसके लिए अनिष्ट है। रावणको लगा जैसे उसके सिरमें पीड़ा उठ रही है। ठीक इसी समय एक भारी आघात हुआ, उससे धरती काँप उठी। आकाशमें देवताओंने घोषणा कर दी कि लो लंका नगरी नष्ट हुई। हे रावण, तुम मूर्ख क्यों बने हुए हो, परस्त्रीके रमण करनेमें कौन-सा सुख है ? क्या तुम अब इन्द्रकी तरह अपने राज्यका भोग नहीं करना चाहते ॥ १-६ ॥

[७४. चउसत्तरिमो संधि]

दिवसयरें विउद्धें विउद्धाइँ । रण-रसियइँ अमरिस-कुद्धाइँ ।
स-रहसइँ पवड्ढिय-कलयलइँ भिडियइँ राहव-रामण-बलइँ ॥

[१]

जाव रावणु जाइ णिय-गेहु ।
अन्तेउरु पइसरइ करइ रयणि सइँ भोगें आयरु ।
ता ताडिय चउ-पहरि उअय-सिहरें उट्ठिउ दिवायरु ॥
(मत्ता-छन्दु)

केसरि व्व णह-भासुर-कर-पसरन्तउ ।
पहरें पहरें णिसि-गय-घड ओसारन्तउ ॥१॥
तहिँ अवसरें पक्खालिय-णयणु । अत्थाणें परिट्ठिउ दहवयणु ॥२॥
सामरिस-णिसायर-परियरिउ । णं जमु जमकरणालङ्करिउ ॥३॥
णं केसरि णहरारुण-णाहिउ । णं गहवइ तारायण-सहिउ ॥४॥
णं दिणयरु पसरिय-कर-णियरु । णं विप्फालिय-जलु मयरहरु ॥५॥
णं सुरवइ सुर-परिवेढियउ । सोहन्तु करग्गें दावियउ ॥६॥
रोसुग्गउ उम्मूलियउ हत्थु । णिड्डरिय-णयणु सीहासणत्थु ॥७॥
सुय-भायर-परिमउ सम्भरेवि । भउ जीविउ रज्जु वि परिहरेवि ॥८॥

घत्ता

असहन्तु सुरासुर-डमर-करु जम-धणय-पुरन्दर-वरुण-धरु ।
सज्जण-दुज्जणहुँ जणन्तु मउ फुरियाहरु आउह-सालें गउ ॥९॥

चौहत्तरवीं सन्धि

सूर्योदय होते ही सब जाग उठे। सेनाएँ रण-रंग और अमर्षसे भरी हुई थीं। हर्ष और वेगसे आगे बढ़ती हुई और कोलाहल मचाती हुई राम-रावणकी सेनाएँ एक-दूसरेसे जा भिड़ीं।

[१] रावण अपने अन्तःपुरमें गया ही था और रातमें भोग भोग ही रहा था कि चारों पहर समाप्त हो गये। उदयाचलपर सूर्य उग आया। सिंहकी भाँति, वह अपना नहभास्वर (नख भास्वर, नभ भास्वर) किरणजाल फैला रहा था, और इस-प्रकार एक-एक प्रहरमें निशारूपी गजघटाको हटा रहा था। प्रभातके उस अवसरपर, रावण अपनी आँखें धोकर दरबारमें आकर बैठा। वह अमर्षसे परिपूर्ण निशाचरोंसे ऐसा घिरा हुआ था, मानो यमकरणसे शोभित यम हो, महारुण (लाल नाखून) से युक्त सिंह हो, मानो तारागणोंसे सहित चन्द्रमा हो, मानो अपना किरणजाल फैलाये हुए सूर्य हो, मानो जलविस्तार-से युक्त समुद्र हो, मानो देवताओंसे घिरा हुआ इन्द्र हो! वह मारे क्रोधके अपनी दाढ़ी नोच रहा था। आवेशमें आकर अपने हाथ तान रहा था। उसके नेत्र डरावने थे। वह सिंहासनपर बैठा हुआ था। उसे अपने पुत्र और भाईका अपमान याद हो आया। उसे अब न तो राज्यकी चिन्ता थी और न जीवनकी। देवताओं और असुरोंको आतंकित करने-वाले, यम, धनद, इन्द्र और वरुणको पकड़नेवाले, सज्जनों और दुर्जनों दोनोंको भय उत्पन्न करनेवाले रावणके होठ फड़क रहे थे। वह तुरन्त अपनी आयुधशालामें गया ॥ १–९ ॥

[२]

ताम्व सुअइँ सुणिमित्ताइँ ।

उग्गाविउ उत्तरिउ आयवत्तु मोडिउ दु-वाएँण ॥
हाहा-रउ उट्ठियउ छिण्ण कुहिणि घण-कमण-णाएँण ॥
णिएँवि ताइँ दु-णिमित्तइँ णयण-सिर-पडिल्लहिं ।
'जाहि माय' मन्दोयरि वुच्चइ मन्तिहिं ॥१॥

'मा णासउ सुन्दरु पुरिस-रयणु । जइ कह वि तुहारउ करइ वयणु ॥२॥
तो परिअच्छावहि वुद्धि देवि' । आकावँ हिँ तेहिँ पयट्ट देवि ॥३॥
विहडप्फड पासु दसाणणासु । हरि-भएँण करेणु व वारणासु ॥४॥
णं सइ-महएवि पुरन्दरासु । णं रइ सरसुत्थ-धणुद्धरासु ॥५॥
पणवेप्पिणु कम्पिणु पणय-कोउ । दरिसन्ति अंसु-जलु थोवु थोवु ॥६॥
पभणइ 'परमेसर काइँ मूढु । मोहन्ध-कूवेँ किं देव छूढु ॥७॥

घत्ता

कु-सरीरहों कारणेँ जाणइहेँ मा णिवडहि णरय-महाणइहेँ ।
लइ वुद्धि किमिच्छहि पुहइवइ किं होमि सुवण्ण कण्णि रइ' ॥८॥

[३]

तं सुणेप्पिणु भणइ दहवयणु ।
'किं रम्भ तिलोत्तिमहिँ उव्वसीएँ अन्तउरएँ लच्छिएँ ।
किं सोयएँ किं रइएँ पइँ वि काइँ कुवलय-दलच्छिएँ ॥
आहि कन्तेँ हउँ लग्गउ वन्धु-पराहवे ।
थरहरन्ति सर-धोरणि लायमि राहवे ॥१॥

लक्खणेँ पुणु मि सत्ति संचारमि । अक्कन्त जमउरि पइसारमि ॥२॥
पाडमि वाणर-वंस-पईवहोँ । मत्थएँ वज्ज-दण्डु सुग्गीवहोँ ॥३॥

[२] इसी बीच उसे कितने ही अपशकुन हुए। उसका हवासे उत्तरीय उड़ गया, आतपत्र मुड़ गया। हा-हा शब्द सुनाई दे रहा था, एक अत्यन्त काला नाग रास्ता काट गया। इन सब अपशकुनोंको देखकर नतसिर मन्त्रियोंने मन्दोदरीसे जाकर निवेदन किया, "हे माँ, आप जायें। ऐसे श्रेष्ठ पुरुष-रत्नको नष्ट नहीं होने देना चाहिए। हो सकता है वह तुम्हारा वचन किसी प्रकार मान ले। बुद्धि देकर समझाइए उन्हें। इस प्रकार कहकर मन्त्रिवृद्धोंने देवीको राजी कर लिया। वह भी हड़बड़ीमें रावणके पास इस प्रकार गयी, मानो सिंहके भय से हथिनी हाथीके निकट गयी हो, मानो स्वयं इन्द्राणी इन्द्रके पास गयी हो, मानो रतिमाला कामदेवके पास गयी हो। कँपा देनेवाले अपने प्रियको उसने प्रणाम किया और तब प्रणय कोपकर उसने रोते-बिसूरते हुए निवेदन किया, "हे परमेश्वर, आप मूर्ख क्यों बनते हैं? मोहान्धकूपमें क्यों गिरना चाह रहे हैं? सीताके खोटे शरीरके कारण नरककी महानदीमें मत गिरो। लो बोलो, हे राजन्, तुम क्या चाहते हो, मैं क्या हो जाऊँ, क्या लक्ष्मी, रति या देवांगना?॥१-८॥

[३] यह सुनकर रावणने उत्तर दिया, "रम्भा और तिलोत्तमासे क्या, अप्सरा उर्वशी और लक्ष्मी भी मेरे लिए किस कामकी। सीता या रतिसे भी मुझे क्या लेना देना। कमलों जैसी आँखोंवाली तुमसे भी क्या प्रयोजन है। हे प्रिये, तुम जाओ। मैं भाईके पराभवसे दुःखी हूँ, मैं रामपर थर्रा देनेवाली तीरवृष्टि करूँगा। लक्ष्मणको दुबारा शक्ति मारूँगा, अंग और अंगदको यमपुरीमें भेज दूँगा। वानर वंशके प्रदीप सुग्रीवके मस्तकपर मैं वज्रदण्डसे चोट पहुँचाऊँगा, चन्द्रोदरके पुत्रपर चन्द्रहास, पवनपुत्रके रथपर वायव्य अस्त्र, भयभीषण

चन्दहासु मन्दोयरि-णन्दणेँ । मायसु माउएव-सुय-सन्दणेँ ॥४॥
वारुणु भामण्डलेँ भय-भीसणेँ । धगधगन्तु अग्गेउ विहीसणेँ ॥५॥
पारावासु माहिन्द-महिन्दहुँ । पहसवणग्गु कुसुम-कुन्देन्दहुँ ॥६॥
मोडमि गवय-गवक्खहुँ चिन्धइँ । णच्चावमि णल-णील-कवन्धइँ ॥७॥
तार-सुसेण देमि बलि भूयहुँ । अवर वि णेमि पासु जम-दूयहुँ ॥८॥

घत्ता

जसु इन्दाएँव वि आणकर दासि व कियअलि स-घर घर ।
सो जइ आरूसमि दहवयणु तो हरि-बल सण्ड कवणु गहणु' ॥९॥

[४]

तेण वयणें कुद्ध मइएवि ।
'देवाइड सुरवरहिँ तेण तुज्झु एवड्डु विक्कमु ।
खर-दूसण-तिसिर-वहेँ किण्ण णाउ लक्खण-परक्कमु ॥
जेण मण्ड पायाललङ्क उद्दालिय ।
दिण्ण तार सुग्गीवहोँ सिक्ख संचालिय ॥१॥
अण्ण वि बहु-दुक्खु-जणेराइँ । चरियइँ हणुवन्तहोँ केराइँ ॥२॥
पइँ रावण काइँ ण दिट्ठाइँ । हियवएँ सल्लइँ व पइट्ठाइँ ॥३॥
अज्ज वि अच्छन्ति महन्ताइँ । दुज्जण-वयण व डुहन्ताइँ ॥४॥
अण्णु इ णल-णील केण सहिय । रणेँ हत्थ-पहत्थ जेहिँ वहिय ॥५॥
रहुवइहेँ णिहालिउ केण मुहु । छ-व्वार वि-रहु जेँ कियउ तुहुँ ॥६॥
अङ्गङ्गएहिँ किर को गहणु । किउ तेहि मि महु केस-ग्गहणु ॥७॥

घत्ता

मायासुग्गीव-विमद्दणहोँ पत्तिय भेत्ति वि रहु-णन्दणहोँ ।
णव-मालइ-माला-मउअ-भुअ अज्ज वि अप्पिज्जउ जणय-सुय' ॥८॥

भामण्डलपर वारुण, विभीषणपर धकधकाता हुआ आग्नेय अस्त्र, माहेन्द्र और महेन्द्रपर नागपाश, कुमुद, कुन्द और इन्द्र-पर वैश्रावण अस्त्र चलाऊँगा। गवय और गवाक्षके चिह्नोंको मोड़ दूँगा। नल और नीलके मुंडोंको नचाऊँगा। तार और सुसेनकी शक्ति धूरोंके छिन्न कर दूँगा और मुसलधार उन्हें यमदूतोंके पास पहुँचा दूँगा। जिसकी आज्ञा इन्द्र तक मानता है, पहाड़ों सहित धरती हाथ जोड़कर जिसकी दासी है, ऐसा रावण यदि रूठ गया तो राम और लक्ष्मणको पकड़ना उसके लिए कौन-सी बड़ी बात है! ॥ १-९ ॥

[४] रावणके इन शब्दोंको सुनते ही मन्दोदरी गुस्सेसे भर उठी। उसने कहा, "देवताओंने तुम्हारा दिमाग आसमानपर चढ़ा दिया है, इसीलिए तुम्हारा इतना पराक्रम है। परन्तु क्या, खरदूषण और त्रिशिरके वधसे तुम्हें लक्ष्मणका पराक्रम ज्ञात नहीं हो सका? उस लक्ष्मणने एक पलमें बलपूर्वक पाताललंका नष्ट कर दी, सुग्रीवको तारा दिलवा दी और शिला उठा ली। और हनुमान्‌की करनी तो बहुत दुःख देनेवाली है। क्या तुमने उन्हें नहीं देखा जो शल्यकी भाँति हृदयमें चुभी हुई हैं। उनके बड़े-बड़े योद्धा आज भी हैं जो दुर्जनोंके मुखकी तरह दुःख-दायक हैं। नल-नीलको युद्धमें कौन सहन कर सकता है उन्होंने हस्त और प्रहस्तको भी मार डाला। उन रामका भी मुख कौन देख सका, जिन्होंने तुम्हें छह बार रथहीन कर दिया। अंग और अंगदको पकड़नेकी तो बात ही छोड़ दीजिए उन्होंने तो मेरे केशों तकमें हाथ लगा दिया। मायासुग्रीवका मर्दन करने वाले रघुनन्दनमें इतनी क्षमता है, इसलिए नवमालतीमालाकी भाँति भुजाओंवाली सीतादेवीको आज ही वापस कर सकते हो ॥ १-८ ॥

[५]

णिसुय-पक्खहौं दिण्णें अहिखेवें ।
पर-पक्खें पसंसियएँ दस-सिरहिँ दसासिरु पलित्तउ ।
जाला-सय-पज्जलिउ हुअवहो व्व वाएण छित्तउ ॥
रत्त-णेत्तु (वि) फुरियाहरु मलिय-करम्बलु ।
चलिय-गण्डु भू-भङ्गुरु ताडिय-महियलु ॥१॥
'जइ अण्णें केण वि वुत्तु एव । तो सिरु पाडमि ताल-हलु जेम ॥२॥
तुहुँ पइँ पणइणि पणएण चुक्क । ओसरु पासहौं मा पुरउ ढुक्क ॥३॥
किण्ण करमि सम्भिरहि जें कालें । खर-दूसण-रणें हय-कोट्टवालें ॥४॥
उज्जाण-भग्गें मन्दिर-विणासें । रामागमें एक्कोयर-पवासें ॥५॥
पउमक्खिमउँ हत्थ-पहत्थ-मरणें । इन्दइ-घणवाहण-बन्दि-धरणें ॥६॥
एवहिँ पुणु दूसन्धउ कज्जु । एक्कन्तरु ताइ मि मइ मि अज्जु ॥७॥

घत्ता

एवंहिँ तुह वयणेंहिँ विसम-भुअ जिहिँ गइहिँ समप्पमि जणय-सुअ ।
जिम लक्खण-रामहिँ मग्गऍहिँ जिम मइ घाणेंहिँ मि विणिमाऍहिँ' ॥८॥

[६]

एम भणेवि पहय रण-भेरि ।
तूरइँ अप्फालियइँ दिण्ण सङ्ख उब्भिय महद्धय ।
सज्जिय रह जुत्त हय सारि-सज्ज किय दन्ति दुज्जय ॥
मिलिउ सेण्णु किउ कलयलु रण-परिओसेंण ।
णिरवसेसु जगु बहिरिउ तूर-णिघोसेंण ॥१॥

[५] मन्दोदरीका इस प्रकार अपने पक्षकी निन्दा करना, और शत्रुपक्षकी प्रशंसा करना रावणको अच्छा नहीं लगा। उसके दशों सिर जैसे आगसे भड़क उठे। पवनसे प्रदीप्त आगकी भाँति उनसे सैकड़ों ज्वालाएँ फूट पड़ीं। उसकी आँखें लाल-लाल हो रही थीं, होठ फड़क रहे थे, वह दोनों हाथ मल रहा था, गाल हिल-डुल रहे थे, भौंहें टेढ़ी थीं, और वह धरतीको पीट रहा था। उसने कहा, "यदि दूसरा कोई यह बकवास करता तो मैं उसका सिर तालफलकी भाँति धरतीपर गिरा देता। तू मेरी प्रिया होकर भी प्रणयसे चूक रही है, मेरे पाससे हट जा, सामने खड़ी मत हो। अब इस समय मैं उससे सन्धि क्यों न करूँ, शत्रुने जो खर-दूषणके युद्धमें कोतवालको मार गिराया, उद्यान उजाड़ दिया, आवास नष्ट कर डाला, उसकी स्त्रीके आगमनपर, भाई घरसे चला गया। पहली ही भिड़न्तमें जिन्होंने हस्त और प्रहस्तका काम तमाम कर दिया। इन्द्रजीत और मेघवाहनको बन्दी बना लिया। अब तो यह काम, एकदम दुष्कर और असम्भव है। अब तो उसके और मेरे बीच युद्ध ही एकमात्र विकल्प है। इस समय तुम्हारे वचनोंसे, दोनोंमें-से एक बात होनेपर वैभवके साथ सीता वापस की जा सकती है, या तो राम-लक्ष्मण नष्ट हो जायें, या मेरे प्राण निकल जायें॥ १–८॥

[६] यह कहकर, उसने रणभेरी बजवा दी। नगाड़े बज उठे। शंख फूँक दिये गये और महाध्वज उठा लिये गये। अश्वोंसे जुते हुए रथ सजने लगे। अजेय हाथियोंपर अंबारी सजा दी गयी। युद्धसे सन्तुष्ट सेना मिली, और उसमें कोलाहल होने लगा। नगाड़ोंकी आवाजसे सारा संसार गहरा

बहुरूविणि-किय-मायाविग्गहु । सज्जिउ तुरिउ गइन्द-महारहु ॥२॥
सुर-रहसु णहेँ वि ण माइउ । चोयउ मन्दरु णं उप्पाइउ ॥३॥
तहिँ गयवर-सहासु जोत्तेप्पिणु । दस सहास पय-रक्ख करेप्पिणु ॥४॥
जय-जय-सद्दें चल्लिउ दसाणणु । णं गिरि-सिहरोवरि पञ्चाणणु ॥५॥
दहहिँ मुहेहिँ भयङ्करु दहमुहु । भुवण-कोसु णं जलिउ दिसा-मुहु ॥६॥
वीसहँ-बाहु विविहुक्खय-पहरणु । णाइँ विउव्वणेँ थिउ सुर-वारणु ॥७॥
दस-विह लोय-पाल मणेँ झाएँ वि । दइवेँ सुक्क णाइँ उप्पाएँ वि ॥८॥
भुवण-भयङ्करु कहिँ वि ण मावइ । दण्डु जमेण विसज्जिउ णावइ ॥९॥

घत्ता

धय-दण्डु समुब्भिउ सेय-वडु णिज्जीविउ लङ्काहिव-सुहडु ।
पुरेँ (?) सायरेँ रह-बोहित्थ-कउ परबल-परतीरहोँ णाइँ गउ ॥१०॥

[७]

रहु णिरन्तरु भरिउ पहरणहुँ ।
सम्मइ सारत्थि किउ बहुरूविणि-विज्जा-णिम्मिउ ।
कण्टइएं रावणेण उरेँ ण मन्तु सण्णाहु परिहिउ ॥
बाहु-दण्ड विहुणेप्पिणु रणेँ दुल्ललियएण ।
पहरणाइँ परिगीवइँ रहसुच्छलियएण ॥१॥
पढिलएँ करेँ धणुहरु सर बीयएँ । गयउ कयन्त गयासणि तइयएँ ॥२॥
सक्कु चउत्थएँ पञ्चमेँ मउडु । छट्ठेँ असि सत्तमेँ वसुणन्दउ ॥३॥
अट्ठमेँ भिन्दि-दण्डु णवमएँ हलु । झसु दसमेयारसमएँ सब्बलु ॥४॥

गया। बहुरूपिणी विद्यासे रावणने अपना मायावी शरीर बना लिया। उसके महारथ और अश्व सजा दिये गये। उसके रथ के ऊँचे पहिये आकाशमें भी नहीं समा पा रहे थे। ऐसा लगता था जैसे दूसरा मन्दिर ही उत्पन्न हो गया हो। उसके महारथमें एक हजार हाथी जोत दिये गये, और उसके साथ दस हजार पद रक्षक थे। रावण जय-जय शब्दके साथ उस महारथमें ऐसे जा बैठा, मानो विशाल पहाड़की चोटीपर सिंह चढ़ गया हो। रावण अपने दसों मुखोंसे भयंकर लग रहा था, मानो भुवनकोश दिशामुख ही जल उठे हों। उसके विविध हाथोंमें विविध अस्त्र थे, जो ऐसे लगते थे मानो मायासे निर्मित ऐरावत हाथी हों, मानो दसों लोकपालोंका ध्यान कर विधाताने उन्हें दुनियाके विनाशके लिए छोड़ दिया हो। विश्व भयंकर वह कहीं भी अच्छा नहीं लग रहा था, ऐसा जान पड़ता था मानो यमने अपना दण्ड छोड़ दिया हो। श्वेतपटवाला ध्वज-दण्ड निरन्तर फहरा रहा था। वह क्रूर लंकेश्वर सुभट रथ-रूपी जहाजमें बैठकर नगरके समुद्रको पारकर शीघ्र शत्रुसेना-के तटपर जा पहुँचा॥ १–१०॥

[७] उसका रथ अस्त्रोंसे भरा हुआ था। सम्मतिको उसने अपना सारथि बनाया, वह बहुरूपिणी विद्यासे निर्मित था। रोमाञ्चित होकर रावणने अपना कवच पहन लिया, परन्तु उसमें उसका शरीर नहीं समा रहा था। युद्धमें हर्षावेगसे अपने बाहु-दण्डको ठोककर, दुर्ललित रावणने अस्त्रोंका आलिंगन कर लिया। पहले हाथमें उसने धनुष लिया, दूसरे हाथमें तीर, तीसरे हाथमें उसने गदासनी ली जो गजोंके लिए काल थी। चौथे हाथमें शंख था और पाँचवेंमें आयुध विशेष था। छठेमें तलवार और सातवें हाथमें उत्तम वसुनन्दी थी। आठवें हाथ-

भीसणु भिण्डिमालु बारहमएँ । चक्कु असक्कु थक्कु तेरहमएँ ॥५॥
पत्तु महन्तु कोन्तु चउदहमएँ । सत्ति भयङ्कर पण्णारहमएँ ॥६॥
सोलहमएँ तिसूलु अइ भीसणु । सत्तारहमएँ कणउ दुद्दरिसणु ॥७॥
अट्ठारहमएँ मोग्गरु दारुणु एगुणवीसमें चक्कु घुसिणारुणु ॥८॥
वीसमए मुसण्ढि उग्गामिउ । कालें काल-दण्डु णं भामिउ ॥९॥

घत्ता

वीसहि मि भुअ (दण्डे) हिं वीसाउहेँ हिं दसहि मि सिरहिं-भयङ्कर-मुहेँ हिं ।
भीसावणु रावणु आउ किह सहुँ गहेँहिं कयन्तु विरुद्धु जिह ॥१०॥

[८]

दसहि कण्ठेहिं दस जेँ कण्ठाइँ ।
दस-भालहिं तिलय दस दस-सिरेहिं दस मउड पजलिय ।
दसहि मि कुण्डल-जुएँ हिं कण्ण-जुअल सुकउल (?)-मुहलिय ॥
फुरिउ रयण-सङ्घाउ दसाणण-सीसु व ।
णइ थिओ स-तारायणु बहल-पओसु व ॥१॥
पढम-वयणु रवि-सूर-सम-प्पहु । सिन्दूरारुणु सुरह मि दूसहु ॥२॥
बीयउ वयणु धवलु धवलच्छउ । पुण्णिम-चन्द-बिम्ब-सारिच्छउ ॥३॥
तइयउ वयणु भुवण-भयगारउ । अङ्गारारुणु भुअङ्गारउ ॥४॥
वयणु चउत्थउ बुह-बुह-भासुरु । पञ्चमएण सइँ जेँ णं सुर-गुरु ॥५॥
छट्ठउ सुक्कु सुक्क-सङ्कासउ । दाणव-वन्दिउ सुर-सन्तासउ ॥६॥
सत्तमु कसणु सणिच्छर-भीसणु दन्तुर विसम-दाढ दुद्दरिसणु ॥७॥

में चित्रदण्ड और नवें हाथमें हल था। दसवें हाथमें मूसल और ग्यारहवें हाथमें सम्बल था। बारहवें हाथमें भीषण भिंदिपाल था और तेरहवें हाथमें अचूक चक्र था। चौदहवें हाथमें महान् भाला था और पन्द्रहवें हाथमें भयंकर शक्ति थी। सोलहवें हाथमें अत्यन्त भीषण त्रिशूल था, सत्रहवें हाथमें दुर्दर्शनीय कनक था, अठारहवें हाथमें भयंकर मुगदर और उन्नीसवें हाथमें केशरके समान लाल घन था। बीसवें हाथमें वह भयंकर मुसुंडी लिये हुए था जो ऐसी लग रही थी मानो कालने अपना काल दण्ड ही घुमा दिया हो। बीसों हाथोंमें बीस आयुध लेकर और भृकुटियोंसे भयंकर अपने दसों मुखों-से रावण इतना भयानक हो उठा मानो समस्त ग्रहोंके साथ कृतान्त ही कुपित हो उठा हो ॥ १-१० ॥

[८] उसके दस कण्ठोंमें दस ही कंठे थे, दस सिरोंमें दस मुकुट चमक रहे थे, दसों कर्णयुगलोंमें कुण्डलोंके दस जोड़े थे। उनमें जटित रत्नसमूह रावणके क्रोधकी भाँति चमक रहा था। अथवा ऐसा लगता था, मानो ताराओं सहित कृष्ण पक्ष हो। उसका प्रथम मुख, क्षयकालके सूर्यके समान था, सिंदूरके समान अरुण, और सूर्यसे भी अधिक असह्य था। दूसरा मुख धवल था, आँखें भी धवल थीं और वह पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान स्वच्छ था। तीसरा मुख मंगलग्रहके समान लाल अंगारे उग-लता हुआ दुनियाके लिए अत्यन्त भयंकर था। चौथा मुख बुधके मुखके समान भास्वर था, पाँचवें मुखसे वह ऐसा मालूम होता था मानो स्वयं बृहस्पति हो। छठा मुख शुक्रमुखकी तरह सफ़ेद था, दानवोंका पक्ष ग्रहण करनेवाला और देवताओंके लिए सन्तापदायक। सातवाँ मुख शनिदेवताके समान अत्यन्त काला था। अत्यन्त दुर्दर्शनीय दाँत और दाढ़ें निकली हुई थीं।

अट्ठमु राहु-वयणु विकरालउ । णवमउ धूमकेउ धूमालउ ॥८॥
दसमउ वयणु दसाणण-केरउ । सव्व-जणहों भय-दुक्ख-जणेरउ ॥९॥

घत्ता

बहु-रूवउ बहु-सिरु बहु-वयणु बहुविह-कवोलु बहुविह-णयणु ।
बहु-कण्णउ बहु-करु वि बहु-पउ णं णड-पुरिसु रस-भाव-गउ ॥१०॥

[९]

तो णिएप्पिणु णिसियरिन्दस्स ।
सीसइँ णयणइँ मुहइँ पहरणाइँ रयणियर-भीसणु ।
आहरणइँ वच्छ-यलु राहवेण पुच्छिउ विहीसणु ॥
'किं तिकूड-सेलोवरि दीसइ णव-घणु' ।
'देव देव णं णं एँहु रहें थिउ रावणु' ॥१॥
'किं गिरि-सिहरइँ णहें दीसियाइँ' । 'णं णं आयइँ दससिर-सिराइँ' ॥२॥
'किं पलय-दिवायर-मण्डलाइँ' । 'णं णं आयइँ मणि-कुण्डलाइँ' ॥३॥
'किं कुवलयाइँ माणस-सरहों' । 'णं णं णयणाइँ लङ्केसरहों ॥४॥
'किं गिरि-कन्दरइँ भयाणणाइँ' । 'णं णं दहवयणें दुम्माणणाइँ' ॥५॥
'किं सुर-चावइँ चाउत्तमाइँ' । 'णं णं कण्ठाहरणाइँ इमाइँ' ॥६॥
'किं तारा-यणइँ समुज्जलाइँ' । 'णं णं धवलइँ मुत्ताहलाइँ' ॥७॥
'किं कसणु विहीसण गयण-यलु' । 'णं णं कङ्काहिव-वच्छ-यलु' ॥८॥
'किं दिस-वेयण्ड-सोण्ड-पयरो' । 'णं णं दहकन्धर-कर-णियरो' ॥९॥

आठवाँ मुख राहुके समान अत्यन्त विकराल था। नौवाँ मुख धूमकेतुकी तरह धुएँसे भरा हुआ था। रावणका दसवाँ मुख सबके लिए भय और दुःख देनेवाला था। उसके बहुत-से रूप थे, बहुत-से सिर थे, बहुत-से मुख थे, बहुत प्रकारके गाल थे, बहुत प्रकारके नेत्र थे, बहुत-से कण्ठ, कर और पैर थे। वह ऐसा लग रहा था मानो भावमें डूबा हुआ नट हो ॥ १-१० ॥

[९] निशाचरेन्द्र रावणके सिर, आँखें, मुख, अलंकार और अस्त्र देखकर रामने निशाचरोंमें भयंकर विभीषणसे पूछा, "क्या ये त्रिकूट पर्वतपर नये मेघ हैं?" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं देव, यह तो रथ पर बैठा हुआ रावण है।" रामने पूछा—"क्या ये आकाशमें पहाड़की चोटियाँ दिखाई दे रही हैं?" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं देव, ये तो रावणके दस सिर हैं?" रामने पूछा, "क्या यह प्रभातकालीन सूर्य-मण्डल है।" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं ये तो मणि-कुण्डल हैं।" रामने पूछा, "क्या ये मानसरोवरके कुवलयदल हैं।" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, ये दशाननकी आँखें हैं।" रामने पूछा, "क्या ये भयानक गिरि-गुफाएँ हैं?" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, ये तो रावणके मुख हैं?" रामने पूछा, "क्या यह धनुषोंमें श्रेष्ठ इन्द्रधनुष है"। विभीषण-ने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, ये कण्ठाभरण हैं"। रामने पूछा, "क्या ये शरीरसे उज्ज्वल तारे हैं?" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, ये सफेद मोती हैं।" रामने पूछा, "विभीषण क्या यह नीला आकाशतल है?" उसने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, यह रावणका वक्षःस्थल है।" रामने पूछा, "क्या यह दिग्गजों की सूँड़ोंका समूह है," विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं यह,

घत्ता

तं वयणु सुणेप्पिणु लक्खणेंण लोयणइँ विरिल्लेंवि तक्खणेंण ।
अवलोइउ रावणु मच्छरेंण णं रासि-गहेण सणिच्छरेंण ॥१०॥

[१०]

कोँ गणेवि हु रायसत्थु ।

थिउ लक्खणु गरुड-रहेँ गारुडत्थु गारुड-महद्धउ ।
बलु वज्जावत्त-धरु सीह-चिन्धु वर-सीह-सन्दणु ॥
गय-चिन्धु गय-रहवरु पमय-महद्धउ ।
विप्फुरन्तु किक्किन्धाहिउ सण्णद्धउ ॥१॥

अक्खोहणि-पञ्च-सएँहिँ समाणु । सुग्गीवु णिएँवि सण्णज्झमाणु ॥२॥
भामण्डलु अक्खोहणि-सहासु । सण्णहेँवि ढुक्कु लक्खणहोँ पासु ॥३॥
अङ्गङ्गय अक्खोहणि-सएण । णल-णील ताहँ अद्धद्धएण ॥४॥
पडिवक्ख-लक्ख-संखोहणेहिँ । मारुइ चालीसक्खोहणीहिँ ॥५॥
तीसक्खोहणि-बलु अतुल-माणि । रहेँ चडिउ विहीसणु सूल-पाणि ॥६॥
तीसहिँ दहिमुहु तीसहिँ महिन्दु । वीसहिँ सुसेणु वीसहिँ जें कुन्दु ॥७॥
सोलहहिँ कुमुउ चउदहहिँ सल्लु । बारहहिँ गवउ अट्ठहिँ गवक्खु ॥८॥
मन्दोयरि-सुउ सत्तहिँ सहाउ । सुउ वालिहेँ तेहत्तरिहिँ आउ ॥९॥

घत्ता

सण्णहेँवि पासु ढुक्कइँ बलहोँ अक्खोहणि-वीस-सयइँ बलहोँ ।
विप्फुरिवि गुडु संचालियइँ णं खयहि-मुहइँ उत्थल्लियइँ ॥१०॥

रावणके हाथीका समूह है"। यह सब सुनकर लक्ष्मणने उसी समय अपनी आँखें तरेर लीं। उसने रावणको ईर्ष्यासे ऐसा देखा मानो राशिगत शनिश्चरने ही देखा हो ॥ १-१० ॥

[१०] लक्ष्मणने अपना सागरावर्त धनुष हाथमें ले लिया। वह गरुड़ रथपर बैठ गया। उसके पास गारुड़ अस्त्र था और गरुड ही उसके ध्वजपर अंकित था। रामने वज्रावर्त धनुष ले लिया। उनका सिंह रथ था और सिंह ही उनके ध्वजपर अंकित था। किष्किन्धा नरेशके हाथमें गदा थी, उसके पास गजरथ था। उसके ध्वजपर बन्दर अंकित थे। तमतमाता हुआ वह भी तैयार हो गया। पाँच-सौ अक्षौहिणी सेनाके साथ सुग्रीवको तैयार होता हुआ देखकर भामण्डल भी एक हजार अक्षौहिणी सेनाके साथ, सन्नद्ध होकर लक्ष्मणके पास आ पहुँचा। सौ अक्षौहिणी सेनाओंके साथ अंग और अंगद एवं उनसे आधी सेनाके साथ नल और नील वहाँ आये। शत्रुके लिए लाख अक्षौहिणी सेनाके बराबर हनुमान चालीस अक्षौहिणी सेनाके साथ आया। तीस अक्षौहिणी सेनाके साथ अधिक अभिमानी विभीषण हाथमें त्रिशूल लेकर रथमें चढ़ गया। दधिमुख और महेन्द्र तीस-तीस अक्षौहिणी सेनाओं, और बीस-बीस अक्षौहिणी सेनाओंके साथ सुसेन एवं कुन्द, कुमुद सोलह अक्षौहिणी सेनाके साथ और शंख चौदह अक्षौहिणी सेनाके साथ, गवय बारह अक्षौहिणी सेनाके साथ और गवाक्ष आठ अक्षौहिणी सेनाके साथ, चन्द्रोदरसुत सात अक्षौहिणी सेनाके साथ, और वलिका पुत्र तेहत्तर अक्षौहिणी सेनाओंके साथ वहाँ आये। सन्नद्ध होकर सब लोग रामके पास पहुँचे। उनके पास कुल बीस सौ अक्षौहिणी सेनाओंका बल था। वे व्यूह बनाकर चल दिये, मानो समुद्रके

[११]

घुट्ठु कलयलु दिण्ण रण-भेरि ।
चिन्धाइँ समुब्भियइँ　　　सण्णहिय कवय किय हेइ-सङ्गह ।
गय-घडउ पचोइयउ　　　मुक्क तुरय वाहिय महारह ॥
राम-सेण्णु रण-रहसिउ कहि मि ण माइउ ।
जगु गिलेवि णं पर-वलु गिलहुँ पधाइउ ॥१॥

पडिखद्धु जुज्झु वेरिणि-मणाहुँ ।　　चक्कोयर-वलय-ऽप्फालणाहुँ ॥२॥
ओरसिय-सङ्ख-सय-संघडाहुँ ।　　रणवडु-फेडाविय-सुहडाहुँ ॥३॥
उद्धुस-धाइय-गय-घडाहुँ ।　　खर-पवणन्दोलिय-धयवडाहुँ ॥४॥
कम्पाविय-सयल-वसुन्धराहुँ ।　　रोसाविय-आसीविसहराहुँ ॥५॥
मेल्लाविय णयण-हुवासणाहुँ ।　　संढक्किय-दिसामुह-दप्पणाहुँ ॥६॥
अयलच्छि-वहुअ-गेण्हण-मणाहुँ ।　　जूराविय-सुरकामिणि-जणाहुँ ॥७॥
उग्गामिय-भामिय-असिवराहुँ ।　　णिव्वहिय-कोड्डिय-हयवराहुँ ॥८॥
णिद्दलिय-कुम्भि-कुम्भत्थलाहुँ ।　　उच्छलिय-धवल-मुत्ताहलाहुँ ॥९॥

घत्ता

भड-धड-गय-घडहिँ भिडन्तएँहिँ　　रह-तुरयहिँ तुरिउ भिडन्तएँहिँ ।
रय-णियरु समुट्ठिउ तासु किह　　णिय-कुलु मइलन्तु कु-पुत्तु जिह ॥१०॥

[१२]

हरि-खुराहउ रउ समुच्छलिउ ।
गय-पय-भर-भारियएँ　　　धरएँ णाइँ णीसासु मेल्लिउ ।
अहव वि मुच्छाविहएँ　　　अप्पयारु जीउ व मेल्लिउ ॥
अह फणिन्द-कोवाणलेण डज्झन्तिहेँ ।
वहल-धूम-विच्छड्डएँ धूमायन्तिहेँ ॥१॥

अहवइ दीहर-धरणिन्द-णालेँ ।　　जग-कमलेँ दिसामुह-दल-विसालेँ ॥२॥
रण-मेइणि-कप्पिणय-सोहमाणेँ ।　　हरि-भमर-क्खुर-विहडिज्जमाणेँ ॥३॥

मुख ही उछल पड़े हों ॥ १-१० ॥

[११] कोलाहल हो रहा था। रणभेरी बज रही थी। चिह्न उठा दिये गये। वानरोंने अस्त्रोंका संग्रह कर लिया। हाथियोंके झुण्ड प्रेरित कर दिये गये। अश्व हाँक दिये गये। रथ चल पड़े। युद्धके हर्षसे भरी हुई रामकी सेना कहीं भी नहीं समा पा रही थी। मानो संसारको निगल कर शत्रुसेनाको निगलनेके लिए ही वह दौड़ पड़ी हो। क्रुद्धमन राक्षसों और वानरोंमें युद्ध छिड़ गया। सैकड़ों शंख बज उठे। दोनोंमें रणलक्ष्मीका घूँघट पट उठाकर देखनेकी होड़ मची थी। अंकुश तोड़कर गजघटाएँ दौड़ रही थीं। तीव्रपवनसे ध्वजपट आन्दोलित थे। सारी धरती काँप उठी थी। नागराज क्रुद्ध हो उठे थे। आँखोंसे आग बरस रही थी, दिशाओंके मुख ईंधनकी भाँति जल उठे। सबके मन विजय-श्री को ग्रहण करनेके लिए उत्सुक थे। दोनों देवनारियोंको सतानेमें समर्थ थीं। दोनों सेनाएँ तलवारें निकाल कर घुमा रही थीं। अश्ववर लोट-पोट हो रहे थे। हाथियोंके कुम्भस्थल फाड़ डाले गये, उनसे मोती उछल रहे थे। योद्धाओंके समूह और गजघटासे भिड़न्त होनेके बाद शीघ्र अश्व-रथोंमें संघर्ष छिड़ गया। शीघ्र ही उससे ऐसी धूल उठी मानो अपने कुलको कलंकित करनेवाला कुपुत्र ही उठ खड़ा हुआ हो ॥ १-१० ॥

[१२] अश्वोंके खुरोंसे आहत धूल ऐसी उड़ रही थी, मानो हाथियोंके पदभारसे धरती निःश्वास छोड़ रही हो, अथवा मूर्छित धरती आँचके समान अन्धकारको छोड़ रही हो, अथवा राजाके कोपानलसे दग्ध धुँधुआती धरतीसे धुँआ उठ रहा हो अथवा धरणेन्द्र का कमलदण्ड हो, दिशाएँ ही मानो

उच्छलिउ मन्दु मयरन्दु णाइँ । रस-णिहँण व णहहों धरिवि जाइ ॥४॥
वड्डइ व समर-पड-वासचुण्णु । णासइ व सो ज्जें रहु तुरय-छण्णु ॥५॥
वरिसइ व रणु सिंणि वि बलाहँ । साहउ देइ व पच्छ-त्थलाहँ ॥६॥
मउलेइ व णयणइँ णरवराहँ । ओहिडइ व कण्णइँ हयवराहँ ॥७॥
भज्जइ व मगुण महा-गयाहँ । णच्चइ व कण्ण-तालेहिँ ताव (? ताहँ) ॥८॥
णीसरइ व छत्त-धएँहिँ चडेवि । तवइ व गयणङ्गणें णिवडेवि ॥९॥

घत्ता

पसरन्तुट्टन्तु महन्तु रउ लक्खिज्जइ कविलउ कब्बुरउ ।
महि-मडउ णिएन्तहों स-रहसहों णं कंस-भाउ रण-रक्खसहों ॥१०॥

[११]

सो ण सन्दणु सो ण मायङ्गु ।
ण तुरङ्गमु ण वि य धउ णायवन्तु जं णउ कलङ्किउ ।
पर णिम्मलु आहयणें भडहुँ चित्तु मइलेवि ण सक्किउ ॥
जाव सुट्टु समरङ्गणु दुसंचारउ ।
तहिँ मि के वि पहरन्ति स-साहुक्कारउ ॥१॥
केहि मि करि-कुम्भइँ परमट्ठइँ । णं सङ्गाम-सिरिहेँ थणवट्टइँ ॥२॥
केहि मि लइयइँ णर-सिर-पवरइँ । णं जयकरिह-चरङ्गण-चमरइँ ॥३॥
केहि मि हियइँ धवल रिउ-छत्तइँ । णं जयसिरि-कीला-सयवत्तइँ ॥४॥
केहि मि चक्खु-पसरु अलहन्तेहिँ । पहरिउ वालालुञ्चि करन्तेहिँ ॥५॥
केण वि खग्ग-लट्ठि परियड्ढिय । रण-रक्खसहों जीह णं कड्ढिय ॥६॥
केण वि करि-कुम्भत्थलु फाडिउ । णं रण-भवण-बारु उग्घाडिउ ॥७॥

उस जग-कमलकी आठ पत्तियाँ थीं। युद्धभूमि उसकी कलियाँ थीं। अथवा मानो धूलके व्याजसे धरती आकाशकी ओर आ रही थी। अथवा युद्धरूपी पटका सुवासित चूर्ण बह रहा था। अश्वोंसे विहीन रथ नष्ट हो रहे थे। मानो वह धूल दोनों सेनाओंको युद्धके लिए मना कर रही थी, अथवा वक्षःस्थलोंको स्वयंका आलिंगन दे रही थी। बड़े-बड़े श्रेष्ठनरोंका वह मुख मैला कर रही थी, रथवरोंके ऊपर वह चढ़ रही थी, मानो गजोंके मदजलसे नहा रही थी, मानो कर्णताल की लयपर नाच रही थी। छत्र-ध्वजोंपर चढ़कर विश्राम कर रही थी या आकाशके आँगनमें पड़कर तप कर रही थी। फैलती और उठती हुई पीली और चितकबरी धूल ऐसी दिखाई दे रही थी, मानो धरती के शवको हर्षपूर्वक लीलते हुए युद्धरूपी राक्षस का केशभार हो ॥१-१०॥

[१२] ऐसा एक भी रथ, हाथी, अश्व, ध्वज और आतपत्र नहीं था जो खण्डित न हुआ हो। उस युद्धमें केवल योद्धाओं का चित्त ऐसा था जो मैला नहीं हो सका था। संग्रामभूमि अत्यन्त दुर्गम हो उठी। फिर भी कितने ही योद्धा प्रशंसनीय ढंग से प्रहार कर रहे थे। किसीने हाथियोंके कुम्भस्थल नष्ट कर दिये, मानो संग्रामलक्ष्मीके स्तन हों, किसीने मनुष्योंके विशाल सिर उतार लिये, मानो विजयलक्ष्मी रूपी सुन्दरीके चमर हों। किसीने जबर्दस्ती शत्रुओंके छत्र छीन लिये मानो विजयलक्ष्मीका लीलाकमल हो। किसीने आँखसे दिखाई न देने पर, बाल नोंचते हुए प्रहार किया। किसीने तलवार रूपी लाठी निकाल ली, मानो रणरूपी राक्षसकी जीभ ही निकाल ली। किसीने हाथीके कुम्भस्थलको फाड़ डाला, मानो युद्धभवन

कत्थइ सुसुमूरिय असि-धारेंहिं । सोणिय-दन्तुर हसियउ अहरेंहिं ॥८॥
कत्थइ रुहिर-पवाहिणि धावइ । जाउ महाहवे पाउसु णावइ ॥९॥

घत्ता

सोणिय-जल-गहरणब्भिरएँहिं वसुहन्तराल-णहयल-गएँहिं ।
पज्जलइ जलइ धूमाइ रणु णं जुग-खय-कालेँ काल-वयणु ॥१०॥

[१४]

ताव रण-रउ भुवणु मइलन्तु ।
रवि-मण्डलु पइसरइ तहिं मि सूर-कर-णियर-तत्तउ ।
पडिखलेंवि दिसामुहेंहिं सुहिय-गासु णावइ णियत्तउ ॥
सुर-मुहाइँ अ-लहन्तउ थिउ हेट्ठामुहुँ ।
पलय-धूमकेउ व धूसरन्त-दिसामुहु ॥१॥
लक्खिज्जइ पसरन्तु रेणु । रण-वसहहों णं रोमन्थ-फेणु ॥२॥
सोमित्तिहें रामहों रावणासु । णं सुरेंहिं विसज्जिउ कुसुम-वासु ॥३॥
रणएविहें णं सुरवहु-जणेण । धूमोहु दिण्णु णह-भायणेण ॥४॥
सर-णियर-णिरन्तर-जज्जरङ्ग । णं धूलिहोवि णहु पडहुँ लग्गु ॥५॥
सयमेव सूर-कर-छेइउ व्व । तिसिउ व्व सुट्ठु पासेइउ व्व ॥६॥
जलु पियइ व गय-मय-दहें अथाहें ण्हाइ व सोणिय-वाहिणि-पवाहें ॥७॥
सिञ्चइ व कुम्भि-कर-सीयरेंहिं । विज्जिज्जइ व्व धय-चामरेंहिं ॥८॥
णं सायराहुँ असिवर-कराहुँ । कम-कमलेंहिं णिवडइ णरवराहुँ ॥९॥

घत्ता

सुभडु व पहरण-सय-सल्लियउ दइउ व कोवग्गिहें घल्लियउ ।
सहसत्ति समुज्जलु जाउ रणु खल-विरहिउ णं सज्जण-वयणु ॥१०॥

का द्वार ही उखाड़ लिया हो। कहीं असिधाराओंसे मारकाट मची हुई थी। कहीं अधरोंसे मोती जैसे दाँत चमक रहे थे। कहीं रक्तकी प्रवाहिनी दौड़ रही थी। ऐसा लगता था मानो युद्ध पावस बन गया हो। धरतीके विस्तार और आकाशमें व्याप्त रक्तजल और अस्त्रोंकी आगसे युद्ध कभी जल उठता और कभी धुँआ उठता, ऐसा जान पड़ता मानो युगान्तका कालमुख ही हो ॥१-१०॥

[१०] युद्धकी धूलने सारे संसारको मैला कर दिया। वह सूर्यमण्डल तक पहुँच गयी। वहाँ वह सूर्य किरणोंसे संतप्त हो उठी। वहाँसे लौटकर वह छिन्न-भिन्नकी भाँति थकी-मादी दिशामुखोंमें फैलने लगी। देवताओंका मुख न देखनेके कारण उसका मुख नीचा था। प्रलय धूमकेतुके समान, सब दिशाओं-को उसने धूलसे भर दिया। लौटती हुई धूल ऐसी लगती मानो युद्धरूपी बैलकी जुगालीका झाग हो, अथवा लक्ष्मण, राम और रावणपर देवताओंने कुसुमरजकी वर्षा की हो, अथवा देववधुओंने आकाशके पात्रमें रखकर रणदेवीके लिए धूम-समूह दिया हो। अथवा तीरोंके समूहसे निरन्तर क्षीण होता आकाश ही धूल होकर गिरा पड़ रहा था। अथवा स्वयं ही सूर्यकी किरणोंसे खिन्न और तृषित हो मरवेदकी तरह मानो वह धूल गजमदके तालाबमें पानी पी रही थी अथवा रक्तकी नदीके प्रवाहमें नहाना चाह रही हो। हाथियोंके कुम्भस्थलोंके मद जलकण उसे सींच रहे थे, चंचल चमर उसे हवा कर रहे थे। सैकड़ों प्रहारोंसे सिंचे मृतकके समान, कोपाग्निके प्रहारसे दग्धके समान वह रण सहज ही उज्ज्वल हो उठा। मानो दुष्टताविहीन सज्जनका मुख हो ॥१-१०॥

[१५]

एएँ पणइएँ जाउ रणु घोरु ।
राहव-रावण-बलहुँ करण-बन्ध-सर-पहर-णिउणहुँ ।
अन्धार-विवज्जियउ सूरउ णाइँ अणुरत्त-मिहुणहुँ ॥
रह रहहुँ णर णरहुँ तुरङ्ग तुरङ्गहुँ ।
भिडिय मत्त मायङ्ग मत्त-मायङ्गहुँ ॥१॥

को वि भडहों भडु भिडेंवि ण इच्छइ खग्ग-गमणु सहुँ सुरेंहिं पडिच्छइ ॥२॥
को वि सराऊरिय-करु धावइ । रण-वहु-अवरुण्डन्तउ णावइ ॥३॥
कासु इ बाहु-दण्डु वाणग्गें । णिउ भुअङ्गु णं गरुड-विहङ्गें ॥४॥
कासु इ बाण णिरन्तर लग्गा । पडिय ण देवि ण केण वि भग्गा ॥५॥
णिग्गुण जइ वि धम्म-परिचत्ता । ते जि वरक्खु जे अवसरें पत्ता ॥६॥
णच्चइ कहि मि रुण्डु रण-भूमिहें । णीसरिउ हुउ णिय-सिरेण सु-सामिहें ॥७॥
कासु इ मउडहों सीसु उत्थल्लियउ । गयणहों गम्पि पडीवउ वलियउ ॥८॥
सुअ-चक्कायवत्तें आलीणउ । राहु-बिम्बु ससि-बिम्बें पवीणउ ॥९॥

घत्ता

केण वि सिरु दिण्णु सामि-रिणहों उरु वाणहुँ हियउ सव्वु जिणहों ।
सउणहुँ सरीरु जीविउ जमहों अइ-चाएं णासु ण होइ कहों ॥१०॥

[१६]

को वि गयघड-वरविलासिणिएँ
कुम्भयल-पओहरेंहिं भिण्णु दन्ति-दन्तग्गें लग्गइ ।
कर-छित्ताइयउ को वि णाहि-उप्परें वग्गइ ॥
को वि सुहडु हेट्ठामुहु थिउ विप्फुरन्तउ ।
'छिण्ण मउडु धय-दण्डें दिण्णु सिर-लउ ॥१॥

[१५] धूलके नष्ट होने पर उन दोनों (राम-रावण) में तुमुल युद्ध हुआ। करणबंध और तीरोंके प्रहारमें निपुण, राम और रावणकी सेनाओंमें ऐसा घोर संग्राम हुआ, मानो अत्यन्त अनुरक्त प्रेमीयुगलकी अन्धकार विहीन सुरत क्रीड़ा हुई हो। रथोंसे रथ, मनुष्योंसे मनुष्य, अश्वोंसे अश्व, और मतवाले हाथियोंसे मतवाले हाथी जा भिड़े। कोई सुभट सुभटसे भिड़कर भी स्वर्ग जाना पसन्द नहीं करता, वह देवताओंसे युद्धकी इच्छा रखता है। कोई योद्धा अपने हाथोंमें तीरोंको लिये हुए दौड़ रहा है मानो वह रणलक्ष्मीका आलिंगन करना चाहता है। किसीका बाहुदण्ड तीरके अग्रभागमें है जो ऐसा लगता है मानो गरुड़की चपेटमें साँप आ गया हो, किसीको निरन्तर तीर चुभ रहे थे, वह पीठ नहीं दे रहा था, और न किसीसे नष्ट हो रहा था। चाहे निर्गुण हों और चाहे धर्मसे च्युत, परन्तु सच्चे भाई वे ही हैं जो अवसर पर काम आते हैं। युद्धभूमिमें कहीं-कहीं धड़ नाच रहा था, मानो सुभट अपने सिरसे स्वामीका ऋण दे चुका था। किसी सुभटका सिर आकाशमें उछला और फिर वापस धरती पर आ गिरा। धवल आतपत्रमें एक सिर ऐसा लगता था, मानो राहुबिम्बने चन्द्रबिम्बमें प्रवेश किया हो। किसी एक सुभटने स्वामीके ऋणमें अपना सिर दे दिया, तीरोंके लिए अपना वक्षःस्थल और हृदय जिन भगवान्के लिए ॥१-१०॥

[१६] एक योद्धा गजघटाकी उत्तम विलासिनीके कुम्भस्थल रूपी पयोधरोंसे जा लगा, कोई गजोंके दन्ताग्रमें अटका था, कोई सूँडसे ऊपर जा गिरा और कोई उसके नाभिप्रदेशसे जा लगा। कोई एक अपना मुख नीचे किये सोच रहा था कि हतभाग्य विधाताने मुझे तीन सिर क्यों नहीं दिये। उनसे

जं णिरिणु होमि तीहि मि जणहुँ । सामिय-सरणाइय-सज्जणहुँ' ॥२॥
को वि सामिहेँ अग्गएँ आवरइ । सिर-कमलेंहिँ पत्त-वाहु करइ ॥३॥
केण वि णरवइहें होन्तएँण । णिब्भिडिउ रणें जुज्झें जुज्झन्तएँण ॥४॥
'वे वाहउ तइयउ हियउ छुडु । चउसारमि गय-घड-पीढें फुडु' ॥५॥
कासु वि स-वाहु असि-लट्ठि गय । णं सोरग चन्दण-रुक्ख-लय ॥६॥
कत्थइ अन्तेंहिँ गुप्पन्तु हउ । सामिउ लेप्पिणु णिय सिबिरु गउ ॥७॥

घत्ता

कत्थइ गय-घड कोन्तारुहिय थाइय सुरवहुँ सवडम्मुहिय ।
सिरु धुणइ ण ढुक्कइ पासु किह पडिहारएँ रएँ णव-वहुअ जिह ॥८॥

[१७]

को वि मयगलु दन्त-मुसलेंहिँ ।
आहउ वि मइन्दु जिह असिवरेण कुम्भ-यलु दारइ ।
कड्ढेंवि मुत्ताहलइँ करेंवि धूलि धवलेइ णावइ ॥
को वि दन्त उप्पाडेंवि मत्त-गइन्दहों ।
मुअइ सं जें पहरणु अण्णहों गय-विन्दहों ॥१॥
उद्दण्ड-सोण्ड-मण्डवेँ विसालेँ । भिज्जन्त-दन्ति-गण्डन्तरालेँ ॥२॥
करि-कण्ण-चमर-विज्जिज्जमाणु । णं सुवइ को वि रण-बहु-समाणु ॥३॥
गय-मय-णइ-रुहिर-णइ-पवाहेँ । तिहि वेणी-सङ्गमेँ दहेँ अथाहेँ ॥४॥
असि कड्ढेंवि फरु तप्पउ करेंवि । जुज्झण-मण णीर तरन्ति के वि ॥५॥
करि-कुम्भन्दोलय-णायवीढेँ । सोमालिय-णाला-झुणक-गीढेँ ॥६॥
उभय-बलइँ पेक्खा-यणु करेवि । अन्दोलिय अन्दोलन्ति के वि ॥७॥

मैं तीनोंका कर्ज चुकता कर देता, अपने स्वामी, शरणागत और सज्जनका। कोई अपने स्वामीके आगे अपने हाथकी सफाई दिखा रहा था। उसने सिर-कमलोंके पत्रपुट (दोने) बना दिये। किसी ने युद्धकी अग्रभूमिमें अत्यन्त असहाय होकर जूझते हुए सोचा, "मैं शीघ्र ही अपने दोनों हाथों और हृदयको अविलम्ब गजघटाकी पीठपर बैठाना चाहता हूँ। किसीकी बाहुलता तलवारके साथ ही कट गयी, वह ऐसी लगती थी मानो साँप सहित चन्दनकी डहली [illegible] हो। कोई अपनी आँतोंमें धँसता हुआ मारा गया, उसका स्वामी उसे उठा कर शिविरमें ले गया। कहीं पर क्रोधसे तमतमाती गजघटा सुभट के सम्मुख दौड़ पड़ी, वह उसके पास अपना सिर धुनती हुई उसी प्रकार पहुँची जिस प्रकार प्रथम सम्भोग के लिए नववधू अपने पतिके सम्मुख पहुँचती है॥१-८॥

[१७] कोई दाँतरूपी मूसलोंके सहारे, सिंहके समान मदको धार बहाते हुए गजपर चढ़ गया। तलवारसे उसका कुम्भस्थल फाड़ डाला, उसके सब मोती निकाल लिये। उन्हें चूर-चूर कर सफेदी फैला रहा था। कोई मतवाले हाथीका दाँत उखाड़ कर उससे अन्य गजसमूह पर आघात करता। कोई एक सुभट रण-वधूके साथ सो रहा था। उठी हुई सूँड़ोंके विशाल मण्डपमें भिड़ते हुए हाथियोंके अन्तरालमें, गजकर्णोंके चमर उसे डुलाये जा रहे थे। कितने ही वीर योद्धा हाथियोंके मदजलकी नदी और रक्तकी नदीके प्रवाहोंके अथाह संगममें अपनी तलवार निकाल कर और फरसेको नाव बनाकर लड़नेके मनसे उसमें तैर रहे थे। कितने ही योद्धा हस्तिसूँड़ोंकी रस्सियोंसे दोनों ओर बँधे हुए हाथियोंके सिरोंके चंचल पादपीठपर खड़े होकर दोनों सेनाओंको देखकर फिर आन्दोलन छेड़ देते थे। कितने ही

रण-पिंछि (?) रहवर-सारिउ करेवि । गय-पाला पिहु पाडन्ति के वि ॥८॥
कत्थ इ सिरु सुहडहों छिण्णउ के वि । गय वेस व भाडु-सयइँ करेवि ॥९॥

घत्ता

कत्थ इ मड्डु गय-घड-पेल्लियउ सामें वि आयासहों मेल्लियउ ।
पलट्टु पडीवउ असि धरेवि णं सामिहें अवसरु संभरेवि ॥१०॥

[१८]

तहिँ महाहवेँ अब्भिडु हणुवन्तु ।
सुग्गीवहों अङ्गङ्गउ विज्जुदण्डु णीलहों विरुद्धउ ।
जमघण्टु तार-सुअहों भय-णरिन्दु जम्बवहों कुद्धउ ॥
सीहणाय-सीहोयर गयय-गवक्खहुँ ।
विज्जुदाढ-विज्जुप्पह सङ्ख-सुसङ्खहुँ ॥१॥

तारागणु तारहों ओवडिउ । कल्लोलु तरङ्गहों अब्भिडिउ ॥२॥
जालक्खु सुसेणहों उत्थरिउ । चन्दमुहें चन्दोयरु धरिउ ॥३॥
अब्भिट्टु कियन्तवत्तु णलहों । णक्खत्तदवणु भामण्डलहों ॥४॥
सन्झागलगज्जिउ दहिमुहहों । हयगीउ महिन्दहों अहिमुहहों ॥५॥
घणघोसु पसण्णकित्ति णिवहों । पञ्चक्खु विहीसण-पत्थिवहों ॥६॥
पवि कुन्दहों कुसुमहों सीहरहु । सद्दूलहों दुम्मुहु दुव्विसहु ॥७॥
धूमाणणु कुद्धु अणुद्धरहों । जालन्धर-राउ वसुन्धरहों ॥८॥
पियकोयरु णहुसहों ओवडिउ । तडिकेसि रयणकेसिहें भिडिउ ॥९॥

घत्ता

रणें एव णराहिव उत्थरिय स-रहस सामरिस रोस-भरिय ।
दणु-दारण-पहरण-संजुएँहिं पहरन्ति परोप्परु सएँहिं भुएँहिं ॥१०॥

●

रणके पटपर रथवरोंको गोटी बनाकर गजरूपी पाँसोंको गिरा रहे थे। कहीं पर सियारिन सुभटका कलेजा लेकर इस प्रकार जा रही थी, मानो वेश्या ही सैकड़ों चाटुताएँ कर रही हो। कहींपर कोई योद्धा गजघटाके दबाव से घूमकर आकाशमें पड़ता, फिर तलवार लेकर वापस आता, मानो उसे स्वामीके अवसरकी याद आ जाती ॥१-१०॥

[१८] उस महायुद्धमें हनुमान्‌से अमित, सुग्रीवसे महाकाय और नीलसे वज्रदण्ड विरुद्ध हो उठा। तारासुतसे यमघंट, और मृग राजा जाम्बवान्‌से क्रुद्ध हो उठा। सिंहनाद सिंहोदर गवय गवाक्षसे विद्युद्दाढ़ विद्युत्प्रभसे शंख सुशंखसे एवं तारामुख तारसे भिड़ गया। कल्लोल तरंगसे भिड़ गया, जालाक्ष सुसेनपर टूट पड़ा, चन्द्रमुखने चन्द्रोदर को पकड़ लिया, कृतान्तवक्त्र नलसे लड़ा और नक्षत्रदमन भामण्डलसे। संध्यागलगर्जित दधिमुखसे, हतग्रीव महेन्द्रसे, घनघोष प्रसन्नकीर्ति राजासे, वज्राक्ष विभीषण राजासे, पवि कुंदसे, सिंहरथ कुमुदसे, दुर्मुख दुर्विष शार्दूलसे, क्रुद्ध धूम्रानन अनुरुद्धसे, जालंधर नरेश वसुन्धरसे और विकटोदर नहुषसे लड़ा। तड़िल्केशी रत्नकेशीसे भिड़ा। युद्धमें इस प्रकार राजाओं की भिड़न्त हो गयी। सबके सब हर्ष, उत्साह और रोषसे भरे हुए थे। दानवोंका संहार करनेवाले हथियारोंसे युक्त वे स्वयं अपनी भुजाओंसे एक-दूसरेपर प्रहार कर रहे थे ॥१-१०॥

●